

श्री सद्गुरुवे नमः

आत्म बोध

आत्म ज्ञान बिना सब सूना। का मथुरा का कासी॥
कहत कबीर सुनो भाई साधो। सहज मिले अविनासी॥
उत्पित परलय सिरजन हारा। मेरा भेद निरंजन से पारा॥
तासे जगत न काहू माना। तातें तोहि कहों मैं ज्ञाना॥
जो कोई मानै कहा हमारा। सो हंसा निज होय हमारा॥
अमर करों फिर मरन न होई। ताका खूंट न पकड़ै कोई॥
फिर के नाहीं जन्मे जग माहीं। काल-अकाल ताहि दुख नाहीं॥
अंकुरी जीव जु होय हमारा। भवसागर तें होथ नयारा॥

—सतगुरु मधु परमहंस जी

साहिब



बन्दगी

सन्त आश्रम रांजड़ी, पोस्ट राया, ज़िला साम्बा (जे. एण्ड के .)

आत्म बोध

—सतगुरु मधुपरमहंस जी

© SANT ASHRAM RANJRI (J & K)

ALL RIGHTS RESERVED

First Edition	—	Jan., 2012
Copies	—	5000

प्रचार अधिकारी

— राम रतन, जम्मू

Website Address.

www.sahibbandgi.org

www.sahib-bandgi.org

E-Mail Address.

*satgurusahib@sahibbandgi.org

Editor

Sahib Bandgi Sant Ashram Ranjri

Post -Raya, Distt.-Samba (J & K)

Ph. (01923) 242695, 242602

Mudrak : Deepawali Printers, Sodal Road, Preet Nagar, Jalandhar

विषय सूचि

पृष्ठ संख्या

1. आत्म ज्ञान	7
2. मेरा भेद निरंजन से न्यारा	124
3. पाँच शब्द औ पांचो मुद्रा, लोक दीप यम जाला ॥	141
4. काल अकाल न पावे पारा	142



अमली होकर करे ध्यान,
गिरही होकर कथे ज्ञान।
साधु होकर कूटे भग,
कहे कबीर यह तीनो ठग॥

दो शब्द सत्य की ओर

जो अपनी 'मैं' को त्याग देता है, वही आत्म-तत्त्व को पा सकता है। कुछ भी त्यागना मुश्किल नहीं है। घर-बार, स्त्री-पुरुष, धन-दौलत बहुतों ने त्यागी, पर 'मैं' को नहीं त्याग पाए। यह खुदी ही 'मैं' है। जो आप अपने को वर्तमान में महसूस करते हैं कि फलाना हूँ, यही मैं है। इसी के कारण से आत्म-तत्त्व का बोध नहीं हो पा रहा है। इसी 'मैं' को यानी अपने 'आपे' को भूलने के बाद आत्म-तत्त्व का ज्ञान होता है। इसलिए ज्ञानी पुरुष संसार में विरला ही होता है। अज्ञानवश अपने को शरीर मानकर आत्मदेव स्वाँसा लिए जा रहा है। वो स्वाँस को शरीर में नीचे फेंककर शरीर को जीवित रख रहा है। पूर्ण सद्गुरु के सान्निध्य में जब यह स्वाँस को ऊपर की ओर फेंकना शुरू कर देगा तो सुरति और निरति मिलने लगेंगी और 'मैं' का बोध समाप्त होने लगेगा। जैसे ही सुरति शांत होगी, 'मैं' का बोध समाप्त हो जाएगा और आत्म-तत्त्व का बोध हो जाएगा।

नोट : तीसरा तिल या शरीर के किसी भी भाग में ध्यान रोकने से आत्म ज्ञान कभी भी नहीं हो सकता।

- ❖ संसार के जितने भी धर्म, मत-मतांतर हैं, सब कमाई, योग, साधना की बात कर रहे हैं, सब तीन-लोक की बात कर रहे हैं, पर साहिब की शिक्षा सहज मार्ग की ओर चक्कर काट रही है।
- ❖ जैसे हवा में तो हॉलिकॉप्टर भी उड़ता है, जेट भी उड़ता है, यान भी उड़ते हैं, पारपाइण्डर भी उड़ता है, ऐसे ही आंतरिक साधना भी अनेक सूत्रों से की जाती है, वहाँ भी विविध गति से चलने वाले शरीर हैं। पर जैसे हॉलिकॉप्टर वहाँ तक नहीं जा सकता, जहाँ तक पारपाइण्डर जा सकता है। उसकी गति में भी बड़ा अंतर है। कोई हॉलिकाप्टर, कोई हवाई

जहाज़ किसी ग्रह का सफ़र तय नहीं कर सकता है। ऐसी ही सगुण-निर्गुण भक्तियों और किसी भी प्रकार के योग से इस भवसागर को पार नहीं किया जा सकता है। सद्गुरु का नाम रूपी जहाज़ ही आत्मा को तीन लोक से परे अमर लोक तक ले जाने की क्षमता रखता है।

- ❖ शरीर के किसी भी स्थान पर ध्यान रोकना एक छल है, माया है।
- ❖ पंच मुद्राओं के पाँचों नाम इस काया में हैं। सोहं भी इसी में है। इसलिए साहिब ने विदेह नाम की बात की है, सोहं को सच्चा नाम नहीं कहा है।

जो जन होइ हैं जौहरी, शब्द लेहु बिलगाय।

सोहं सोहं जप मुआ, मिथ्या जन्म गँवाय ॥

सोहं सोहं जपे बड़े ज्ञानी।

निःअक्षर की खबर न जानी ॥

- ❖ शरीर के किसी भी हिस्से से ध्यान रोकने से आध्यात्मिक शक्तियाँ नहीं जगती। इससे तो शरीर की दिव्य शक्तियाँ की ताक़त ही जगी अध्यात्मिक शक्ति नहीं जगी। शरीर की कोई भी ताक़त जगी तो निरंजन की ताक़त ही जगी। निरंजन की ताक़त को जगाकर निरंजन की सीमा से पार नहीं हुआ जा सकता है। इसलिए साहिब शरीर के किसी भी स्थान पर ध्यान रोकना मना कर रहे हैं।
- ❖ साहिब धुनों पर ध्यान रोकना नहीं बोल रहे हैं। धुनें हमारे स्नायुमंडल की झँकार है। आवाज़ दो तत्व के टकराए बिना हो ही नहीं सकती। जहाँ द्वैत आ गया, आवाज़ आ गई, वहाँ माया है। इसलिए धुनें अंतिम सत्य नहीं हैं।
- ❖ सभी कह रहे कि तुम्हें कुछ करना है। कोई कमाई करने को कह रहा है, कोई साधना करने को कह रहा है, कोई दान-पुण्य करने को कह रहा है, कोई यज्ञ करने को कह रहा है,

कोई तीर्थ करने को कह रहा है। पर साहिब की सच्ची भक्ति कह रही है कि तुम्हें कुछ भी नहीं करना है, जो करना है वो सद्गुरु ने करना है। यहीं पर सब समीकरण बदल जाते हैं। क्योंकि अपने ज़ोर से, अपनी कमाई से कोई भी जीव इस भवसागर से पार नहीं हो सकता है।

सात दीप नव खण्ड में, गुरु से बड़ा न कोय।

कर्त्ता करे ना कर सके, गुरु करे सो होय॥

- ❖ यदि आपका गुरु गृहस्थ है तो उससे कभी भी अपनी आत्मा के कल्याण की उम्मीद नहीं रखना। वो नहीं कर पायेगा।
- ❖ मुझे आपको नाम के बाद ज्ञान नहीं देना है, दे चुका हूँ। कुछ नहीं देना है। फिर सत्संग क्या है? यह तो केवल आपको सतर्क करने के लिए है कि यह नहीं करना, वो नहीं करना। अब आपके अंदर स्वसंवेद उत्पन्न हो चुका है, केवल समझा रहा हूँ कि कहाँ-कहाँ और किस-किससे बचना।
- ❖ जब भी आप मुझसे मिलेंगे आपको एक ताकत मिलेगी, आप काम कर पाने की ताकत मिलेगी, इसलिए जल्दी-जल्दी आपके बीच आ रहा हूँ।
- ❖ हमारा पंथ है—सहज मार्ग और हमारा पंथ है—भृंग मत।
- ❖ सद्गुरु का दर्शन इसलिए महत्वपूर्ण है, क्योंकि इससे हमें आध्यात्मिक किरणें मिलती हैं, जो उनकी वाणी, दृष्टि और चरण स्पर्श के द्वारा हमें प्राप्त होती हैं।
- ❖ जो गुरु गृहस्थ में रहकर अपने को संत कह रहा है, वो आपसे धोखा कर रहा है। वो कभी भी संत नहीं हो सकता है। एक संत चाहकर भी विषय नहीं कर सकता है। जो विषय आनन्द ले रहा है, वो माया में फँसा है। उसे सच्चे आनन्द का स्वाद अभी नहीं मिला है। फिर जो परमात्मा में मिल जाता है, वो उसी का रूप हो जाता है, उसके लिए सब बच्चे हो जाते हैं। इसलिए बाप अपनी बेटी से शादी नहीं कर सकता, उससे विषय नहीं कर सकता।

आत्म-ज्ञान

कबीर आतम ज्ञान का, परा जगत में शोर ।
पूछो कैसो आतमा, तब देत दाँत निपोर ॥
चीन्हन को सो चीन्है नहीं, आतम चीन्है मूढ़ ।
पूछौ कैसो आतमा, तब कहे गूंगा गूड़ ॥
जौं गूंगे का गूड़ है, पूरब गुरु उपदेश ।
तौं चारि षट् अष्टदश, यह कीन्ह कहा संदेश ॥
चतुर श्लोक की भागवत, कियो विधिहिं उपदेश ।
जो पूरब गुरु गुंग है, यह कीन्ह कहा संदेश ॥
जौं पूर्व गुरु गुंग है, तौं गुंगा शिष्य सब तात ।
पांजी यह गुरु शिष्य की, कीन्हों चलाई बात ॥
कबीर अर्थ शब्द में, शब्द सों जाना जाय ।
अर्थ कौन सी वस्तु है, पण्डित कहो बुझाय ॥

सारे संसार में आत्मज्ञान का शोर मचा हुआ है। पर जब पूछा जाता है कि आत्मा कैसी है तो चुप हो जाते हैं, कहते हैं कि गूंगे के गुड़ के समान है। यदि गूंगे के गुड़ के समान है तो फिर गुरुआ लोग शिष्यों को क्या उपदेश देते थे! फिर वेद, शास्त्र, भागवत आदि में क्या उपदेश है! वास्तव में शब्द के बीच में ही अर्थ रहता है और अर्थ शब्द से ही जाना जाता है। पर यह अर्थ क्या वस्तु है, यह रहस्य है।

आपुहिं एक अनेक होइ, बोल्यो ईश सुजान ।
उपदेशन काको करे, काहि लगा अज्ञान ॥
एकोहं बहुस्या में, काहि लगा अज्ञान ।

को मूरख को पंडिता, केहि कारण बौआन ॥

यदि कहा जा रहा है कि वो एक परमात्मा ही अनेक होकर सब घट में बोल रहा है तो उपदेश किसे देना है! अज्ञान में कौन है! फिर ज्ञानी और मूर्ख का भेद क्यों है?

पूरब गुरु अद्वैत के, कल्पै विविध प्रकार।
भीतर भासे द्वैत जो, ताकर नाहिं विचार ॥
कोटिन साधन करि मरे, ब्रह्म आपु जो होय।
बिना शब्द पारख किये, शून्य में गये बिगोय ॥
बात करै अद्वैत की, भासै द्वैत प्रमान।
कहैं कबीर चीन्है नहीं, यह सूक्ष्म अज्ञान ॥
जानो चाहे आतमा, जानै को है सोय।
कहु पंडित यहि देह में, आतम एक कि दोय ॥

अद्वैत की कल्पना करने वाले बड़े लोग हुए, पर भीतर में जो द्वैत आभासित हो रहा है, उसपर किसी ने विचार नहीं किया। इसलिए करोड़ों साधनाएँ करने वाले, ब्रह्म समान होने वाले भी बिना सार शब्द को पहचाने शून्य में नष्ट हो गये। अद्वैत की बात करते हैं, पर भीतर में स्पष्ट द्वैत प्रमाणित हो रहा है, जिसे समझ नहीं पा रहे हैं। यह बहुत बारीक अज्ञान है। क्योंकि सभी आत्मा को जानना चाह रहे हैं। जो जानना चाह रहा है, वो कौन है? यदि वो दूसरा है तो विचार कर लो कि शरीर में आत्मा एक है या दो!

एक ब्रह्म व्यापक जगत, ज्यों सब माहिं अकास।
मैं तोहि पूछों पंडिता, है पदार्थ की भास ॥
जो वह ब्रह्म पदार्थ है, काको भासत सोय।
को उपदेशै को सुनै, बड़ा अचम्भा होय ॥
केहि उपदेशत आतमा, कोकर आतम ज्ञान।
कबीर बाद अद्वैत की, संत विरोधी जान।
विमुख होइ सतसंग तै, चाहै निज कल्याण ॥

यदि एक ही ब्रह्म आकाश की भांति सारे संसार में व्यापक है तो वो कोई वस्तु है या वस्तु का आभास है? यदि वस्तु है तो उसका आभास किसे हो रहा है? उपदेश करने वाला कौन है और सुनने वाला कौन है, यह बड़ा आश्चर्य है! फिर आत्मा का ज्ञान किसे देना है और आत्मज्ञान किसने पाना है? इसलिए यह अद्वैत की बात संत विरोधी है।

है ताको जानै नहीं, नाहीं को करे मान।
 कहहिं कबीर पुकारि कै, सो नास्तिक अज्ञान॥
 योगी बड़ा कि योग बड़, ज्ञाता बड़ा कि ज्ञेय।
 द्रष्टा बड़ा कि दृश्य बड़, भेदी बड़ा कि भेय॥
 कबीर बाद अद्वैत की, संत विरोधी जान।
 विमुख होइ सतसंग तै, चाहै निज कल्याण॥
 कबीर इन्द्री ते है नहीं, हुआ न कबहीं होय।
 ताको इन्द्री ज्ञान करि, पावन चाहै लोय॥
 निर्गुण सगुण करि जीव को, मानै मूरख सोय।
 निर्गुण सगुण यह देह को, लक्षण जानो दोय॥

जो वो तत्त्व है, उसे कोई जान नहीं पा रहा है और जो नहीं है, उसे मान रहा है, इसलिए अज्ञान में है। विचार करो कि योग करने वाला बड़ा है या योग बड़ा है! ज्ञान लेने वाला बड़ा है या जिसका ज्ञान लिया जा रहा है, वो बड़ा है! देखने वाला बड़ा है या दृश्य बड़ा है! रहस्य बड़ा है या रहस्य को जानने वाला बड़ा है! इंद्री तो वो है नहीं और न कभी हो सकता है, फिर भी लोग उसे इंद्रियों के ज्ञान द्वारा पाना चाह रहे हैं! मूर्ख लोग उस आत्म-तत्त्व को सगुण या निर्गुण करके मान रहे हैं, पर ये तो दोनों शरीर के लक्षण हैं।

शब्द करावे साधना, शब्द न चीन्हा जाय।

योग जप तप आदि लो, मरे कमाय कमाय॥

जप, तप, ध्यान, शब्द साधना आदि कमाई करते-करते लोग मर जाते हैं, पर सार शब्द का भेद पता न चलने से तत्त्व का भेद मालूम नहीं चल पाता है।

इस तरह आत्मतत्त्व का बोध न होने से यह पूरी दुनिया अज्ञान में जी रही है। साहिब कह रहे हैं—

क्या हुआ वेदों के पढ़ने से ना पाया भेद को।
आत्मा जाने बिना ज्ञानी कहलाता नहीं॥
जब तलक विषयों से यह दिल दूर हो जाता नहीं।
तब तलक साधक बेचारा चैन सुख पाता नहीं॥
कर नहीं सकता है जो एकाग्र अपनी वृत्तियाँ।
उसको सपने में भी परमात्म नज़र आता नहीं॥

यह आत्मा के ज्ञान का क्या मतलब है?

आत्म ज्ञान बिना नर भटके, क्या मथुरा क्या काशी॥

कहाँ चली गयी है आत्मा? इसको जानना जरूरी है।

आत्मा के विषय में शास्त्रों का क्या ख़्याल है? जो बातें बोली गयीं, क्या वो प्रमाणित हैं। जितने भी मत, मतान्तर, मार्ग हैं, एक बात स्वीकार कर रहे हैं कि आत्मा अमर है। रामायण में भी कहा—

ईश्वर अंश जीव अविनाशी। चेतन अमल सहज सुखरासी॥

आत्मा अमर है। यह पूर्ण सत्य है। आत्मा तत्त्व के ऊपर वाणियों में आ रहा है। आत्मा है कैसी? यह आनन्दमयी है, गंदगी से रहित है, निर्मल है, नित्य है, अपरिवर्तनशील है। ऐसा क्यों है? आत्मा में ऐसी खूबियाँ कहाँ से आई? क्योंकि आत्मा परमात्मा का अंश है। आप देखते हैं कि आपके बच्चों में आपके गुण, आपका स्वभाव स्वाभाविक रूप से आ जाता है। इस तरह आत्मा में ये गुण स्वाभाविक हैं। आत्मा अवर्ण है, अमर है, नित्य है, अखण्डित है। यानी पहली बात आ रही है कि आत्मा बड़ी निराली है।

आम आदमी को पता नहीं चल रहा है आत्मा का। इसलिए वो पहले आत्मा का ज्ञान चाहता है।

जब भी किसी को देखते हैं कि पहले एक व्यक्ति नज़र आ रहा

है। यह तो पंच भौतिक तत्वों का बुत है। यह देखते-देखते नष्ट हो जाता है। इसलिए यह आत्मा नहीं हो सकता है। जब हमारे बड़े बुजुर्ग चले गये तो उनका संस्कार किया; कहीं बहा दिया, कहीं गाड़ दिया, कहीं जला दिया। इस तरह यह शरीर नाशवान् है। इसकी कोई गवाही देने की जरूरत नहीं है। शरीर स्थिर नहीं है। पर हरेक शरीर को देखकर सोच रहा है कि 'मैं' हूँ।

**दूसरी एक और चीज़ का पता चल रहा है और वो है—
व्यक्तित्व। कोई शांत है, कोई क्रोधी, कोई गंभीर है, कोई चंचल।
आत्मा तो गुणातीत है। इसलिए ये भी आत्मा के गुण नहीं हैं।**

हरेक अपने को शरीर मानकर जी रहा है। जब क्रियाओं की तरफ देखते हैं तो भी आत्मरूप नज़र नहीं आ रहा है। कोई खेतीबाड़ी करने में लगा है, कोई नौकरी करने में लगा है।

कहैं कबीर किसे समझाऊँ, सब जग अँधा।

इक दुई होवें उन्हें समझाऊँ, सबहि भुलाना पेट के धंधा॥

दुनिया का हरेक आदमी शरीर के पालन-पौषण के लिए लगा है। धन इकट्ठा कर रहा है। क्या संबंध है इसका आत्मा से? आत्मा का इससे कोई संबंध नहीं है।

दुनिया का हरेक इंसान पेट के धंधे में उलझा है। इंसान में क्या-क्या मिलता है? जब भी एक इंसान को देख रहे हैं तो आत्मा नज़र नहीं आ रही है। रहन-सहन देखते हैं तो आत्मा कहीं भी नज़र नहीं आ रही है। बड़े आश्चर्य की बात है। जब भी इंसान को देख रहे हैं, उसके आचरण को देख रहे हैं, सबमें शारीरियत, मायाबी चीज़ें ही दिख रही हैं।

एक ना भूला दो ना भूले, जो है सनातन सोई भूला॥

यहाँ सब भूले हुए हैं। यह कोई आज-कल की बात नहीं है। यह आत्मा अनादिकाल से यहाँ भटक रही है। बड़े लंबे समय से यह यहाँ पर है। 'जीव पड़ा बहु लूट में, नहीं कछु लेन न देन॥' क्या हमारी आत्मा

का जन्म-मरण से कोई संबंध है! अगर हम विचारकर देखें तो शास्त्र भी एक बात कह रहे हैं कि आत्मा बिना मतलब के माया में फँसी है। आखिर कारण क्या है? आत्मदेव की गलती क्या है? आप आज से यहाँ नहीं हैं; अनन्त जन्म आपके हो चुके हैं। इसकी पुष्टि धर्म-ग्रंथ कर रहे हैं। चिंतन करना। वासुदेव ने कहा—हे अर्जुन! मेरे और तेरे अनेक जन्म हो चुके हैं, मुझे वे सब याद हैं, पर तुम्हें याद नहीं हैं। फिर कहा कि जिस तरह मनुष्य पुराने वस्त्रों का त्याग कर नवीन वस्त्र धारण करता है, ऐसे ही यह आत्मा भी कर्मानुसार पुराने शरीर को छोड़कर नवीन शरीर को धारण करती है। इसका मतलब है कि कर्म ही आत्मा के जन्म-मरण का कारण है। यानी आत्मा कर्मानुकूल ही जन्म-मरण को प्राप्त कर रही है। बार-बार जन्म-मरण का कारण कर्म है।

आदमी चोरी कर रहा है, ठगी कर रहा है, चारसौबीसी कर रहा है, बेईमानी कर रहा है। यह आत्मा नहीं हो सकती है। आत्मा का व्यवहार नज़र नहीं आ रहा है। आत्मा ज़रूर कहीं बँधी हुई है। आत्मा को कहीं गुम करके रखा हुआ है। आत्मा को कहीं ऐसे बंधन में डाला है कि आत्मा अपने स्वरूप को नहीं जान पा रही है और लोग जो अनिष्टकारी कार्य कर रहे हैं, कतई आत्मदेव ये नहीं करना चाहता है। आत्मदेव का कुछ नहीं चल रहा है। चोरी, ठगी, बेईमानी, हिंसा, मार-काट, व्यभिचार आदि मनुष्य कर रहा है। अगर यही आत्मा है तो फिर परमात्मा भी ऐसा ही होगा! नहीं! शास्त्राकारों ने, महापुरुषों ने आत्मा के गुणों का बयान किया है। इसमें ऐसी कोई चीज़ नहीं है। तो फिर यह क्या है? इसका मतलब है कि आत्मदेव से कुछ ग़लत करवाया जा रहा है। इस आत्मा से कुछ अनिष्टकारी कर्म करवाए जा रहे हैं। कौन करवाए जा रहा है?

जब भी आप कोई कार्य करते हैं तो उसमें आत्मा का भी तो सहयोग है। आदमी चोरी करने गया। आत्मदेव भी शामिल हुआ। इसका

मतलब है कि आत्मा कर्म के द्वारा ही बंधन में है। आत्मा को कर्म की ज़रूरत क्या पड़ गयी? कैसा कर्म कर रही है आत्मा? पूरा-पूरा अज्ञान। भाई, आत्मा कर्मानुकूल जन्म और मरण के बंधन में आ रही है, कर्मानुकूल नये-नये शरीरों को धारण कर रही है। आत्मा को कर्म की ज़रूरत क्या पड़ी? जब भी हम दुनिया के लोगों की तरफ देख रहे हैं तो मनुष्य कर्म कर रहे हैं। इस आत्मदेव को कर्म की ज़रूरत क्या पड़ी? सबसे पहले देखते हैं कि कर्मानुकूल ही सुख-दुख और जन्म-मरण को प्राप्त कर रही है। पहले हम देखते हैं कि मनुष्य कर्म क्या कर रहा है? कोई खेती-बाड़ी कर रहा है। भाई, उससे आत्मा का क्या संबंध है? यह तो शरीर का नाता हुआ। आत्मा तो खाती-पीती ही नहीं है। आत्मा में मुँह ही नहीं है; इंद्रियाँ नहीं हैं। आत्मदेव इंद्रियातीत है, व्योमातीत है, शब्दातीत है, मन और इंद्रियों से परे है। आत्मा कुछ खा-पी ही नहीं रही है और मनुष्य कर्म कर रहा है! आखिर क्यों? किसके लिए? कौन-से कर्म कर रहा है? पाप और पुण्य दो तरह के कर्म मनुष्य कर रहा है। साहिब कह रहे हैं—

पाप पुण्य ये दोनों बेरी। इक लोहा इक कंचन केरी।।

दोनों बेड़ियाँ हैं। यानी पाप और पुण्य में आत्मा को बाँध दिया है। आत्मा इन्हीं में उलझी है। इन दोनों कर्मों से क्या प्राप्त होगा? पाप कर्मों से नरक और पुण्य कर्मों से स्वर्ग की प्राप्ति होगी। अब स्वर्ग और नरक से आत्मा का क्या संबंध है? क्या स्वर्ग आत्मा का घर है? क्या स्वर्ग में हमारा परमात्मा बैठा है? धोखा! आत्मदेव से धोखा!! साहिब चेता रहे हैं—

चेत सवेरे बाँवरे, फिर पीछे पछताय।

तुझको जाना दूर है, कहैं कबीर समझाय।।

स्वर्ग में रहने वाले देवता धरती पर मानव जीवन पाना चाह रहे हैं और धरती पर रहने वाले पुण्य कर्म करके स्वर्ग में जाना चाह रहे हैं। बहुत मुश्किल से मानव जीवन पाकर पुण्य कर्म करके अंत में मरकर

स्वर्ग में जाया जा रहा है और स्वर्ग में जाने के बाद फिर धरती पर मानव जीवन की महत्ता का ज्ञान हो रहा है और फिर जन्म ग्रहण किया जा रहा है। जन्म और मरण का चक्र छूटा क्या! पुण्य कर्म तो ठीक हैं, पर आत्मदेव जन्म-मरण से आजाद नहीं हुआ।

सभी कर्म शरीर की ज़रूरत के लिए हैं, आत्मा के लिए नहीं। भाई, कोई खेती कर रहा है। क्यों कर रहा है? भाई, अनाज आयेगा, दाना होगा, खाऊँ-पीऊँ। शरीर के लिए ही न! नौकरी कर रहा है, पेशा कर रहा है। ये शरीर के लिए हैं। महज इस देही के लिए ही मनुष्य कर्म कर रहा है। भाई, घर बनाया। किसके लिए बनाया? आत्मा को तो इसकी आवश्यकता ही नहीं है। शीतोष्ण से यह परे है। सर्दी और गर्मी आत्मा को अपने दायरे में बाँध नहीं सकती है। न्यूनाधिक नहीं होती है आत्मा। तो घर की आत्मा को ज़रूरत नहीं है। घर की ज़रूरत है—शरीर को। शरीर के धर्म में फँस गयी है आत्मा। शरीर माया है। वाह भाई, इशारा मिल रहा है कि आत्मा माया में उलझी है। इसका मतलब है कि आत्मा शरीर के धर्म का पालन कर रही है। घर बनाया। शीतोष्ण से बचने के लिए। घर में क्या है? भाई, घर में एक कमरा है—किचन। वो क्या है? इस शरीर के लिए भोजन बनाने के लिए। आत्मा जब भोजन ही नहीं खाती तो आत्मा को किचन की क्या ज़रूरत है! घर में और क्या है? भाई—बाथरूम। स्नान-पानी करने के लिए। आत्मा तो किसी भी वस्तु से प्रभावित ही नहीं होती है। यह भी तो शरीर के लिए है। फिर घर में क्या है भाई? टायलेट है। वो किसलिए? मल-विसर्जन के लिए। आत्मा खा-पी नहीं रही है; उसमें ये मल-मूत्र की इंद्रियाँ ही नहीं हैं। अच्छा, फिर क्या है घर में? भाई—बेडरूम। किसके लिए? सोने के लिए। उस कमरे से आत्मा को क्या लेना है? वो न खड़ी है, न बैठी है, न सो रही है, न जाग रही है। उसको तो नींद की आवश्यकता नहीं है। इसका मतलब है कि जो बेडरूम बनाया, इसी शरीर के लिए बनाया। फिर है एक

ड्राइंगरूम। उठने-बैठने का कमरा। डायनिंग रूम। भाई, खाने-पीने के लिए। और घर में क्या है? यही तो है। फिर कहीं स्टोर बना दिया आपने। किसलिए? जो सामग्री हमारे शरीर के लिए ज़रूरी है, उसका संग्रह करने के लिए स्टोर है। इसमें आत्मा का कुछ हुआ ही नहीं है। बस, आत्मदेव ने भी मान लिया है कि हम शरीर हैं। यह मान्यता ही पीड़ादायक है। आत्मा ने मान ही नहीं लिया, व्यवहार में वैसा कर भी रही है। जो भी कर्म मनुष्य कर रहा है, इस शरीर के लिए। फिर क्या होता है कि इन्हीं सब चीज़ों को हासिल करने के लिए, अच्छा घर पाने के लिए, अच्छा भोजन पाने के लिए, आदमी छल, कपट, धोखा, बेईमानी, हिंसा आदि भी कर रहा है। ये सब क्यों हुआ? कर्म। अच्छे और बुरे कर्म। पाप और पुण्य कर्म। कर्म की बेड़ी में बँध गया। कर्म का कारण देही है। साहिब ने बड़ा खूबसूरत कहा। पर यह मेथामेटिक बड़ी गहरी है। सुनने के बाद भी आदमी को समझ में नहीं आती है। आदमी सोचता है कि मैं समझ गया, तो भी समझ में नहीं आती है। साहिब वाणी में कह रहे हैं—

देह धरे का दण्ड है, भुगतत हैं सब कोय।

ज्ञानी भुगतत ज्ञान से, मूरख भुगतत रोय॥

साहिब फिर कह रहे हैं—

आखिर यह तन खाक मिलेगा, कहाँ फिरत मगरूरी में॥

आखिर यह नष्ट होना-ही-होना है।

या जग में कोई रहन ना पावे, सो निश्चय कर जान।

तन पिंजर से निकस जायेंगे, पल में पक्षी प्राण॥

इक दिन इस माया के शरीर को छोड़ना ही पड़ेगा। प्राण रूपी पंछी को इसमें से निकलते देर नहीं लगेगी।

इसी के लिए आदमी फिर क्या करता है—छल, कपट, धोखा, चारसौबीसी। मेरे बच्चे ठीक रहें। और इन्हीं कर्मों का कारण देह है। इसी की तृप्ति और संतुष्टि और इसके निर्वाह के लिए मनुष्य कर्म कर रहा है।

आत्मदेव जुट गया। अच्छा, कौन प्रेरित कर रहा है सभी कर्मों के लिए? यह आत्मदेव इतना निर्मल होकर ये सब क्यों कर रहा है? शरीर अनित्य है, अधम है। आत्मदेव ने इसे नित्य मान लिया है। बहुत गंभीर समस्या है। सभी शरीर बनकर ही जी रहे हैं। इसका मतलब है कि बाँधने वाली ताकत बड़ी शातिर है। क्या विद्वान, क्या ऋषि, क्या मुनि, सभी इसी क्रम में हैं। बड़े-बड़े बुद्धिजीवी भी इसी में उलझे हैं।

जितने भी कर्म हैं, घूम-फिरकर हरेक के पीछे एक ही बात निकलेगी कि शरीर के पोषण और निर्वाह के लिए मनुष्य कर रहा है। नौकरी क्यों कर रहा है? धन कमाने के लिए। और धन से तात्पर्य शरीर का सुख है। अच्छा मकान बना रहा है। क्यों बना रहा है? शरीर के लिए। ए. सी. लगा रखा है तो क्यों? इस शरीर को गर्मी न लगे। कर्म का अभीष्ट यह देही है। हर मनुष्य शरीर के पौषण के लिए कर्म कर रहा है। निचौड़ निकालोगे तो हर कर्म शरीर के लिए है। यानी गठान यह है कि अपने को शरीर मान लिया।

जड़ चेतन हैं ग्रंथि पड़ गई। यद्यपि मिथ्या छूटत कठिनाई॥

आखिर गठान कहाँ है? आत्मा और शरीर की कैसी गठान है? क्यों नहीं खुल रही? किसी को हथकड़ी लगी हो तो आप उसे बंधन से छुड़ाने के लिए हथकड़ी खोल देते हैं। आत्मा का बंधन खोलना है तो पहले देखना होगा न कि गठान कहाँ है। पहली बात तो यह है कि आत्मा को गठान लग ही नहीं सकती है।

आत्म ज्ञान की बात बताता हूँ। गरुड़ जी विष्णु जी के वाहन हैं। जैसे गणेश जी की सवारी चूहा है, कार्तिक की सवारी मोर है, ऐसे ही विष्णु जी की सवारी गरुड़ जी हैं। गरुड़ जी ने विष्णु जी से प्रार्थना की, कहा कि मुझे आत्मा का ज्ञान दो। विष्णु जी ने कहा कि आत्मा का ज्ञान चाहते हो तो काकभुशुण्डी जी के पास जाओ। आप सोचें यहाँ पर! जैसे कोई इतिहास का प्रोफेसर होता है, उससे कोई बच्चा गणित का ऐसा प्रश्न पूछे

जो उसे न पता हो तो वो कहता है कि गणित के प्रोफेसर के पास जाओ, उनसे पूछो। ऐसे ही गणित के प्रोफेसर से यदि इतिहास का प्रश्न कोई पूछे, जो उसे न पता हो तो वो इतिहास वाले प्रोफेसर के पास भेजता है। ऐसे ही विष्णु जी ने गरुड़ जी को काकभुशुण्डी जी के पास भेजा। क्योंकि वे आत्म-ज्ञान के विशेषज्ञ थे और यह बात विष्णु जी को पता थी। काकभुशुण्डी जी पहले साहिब के शिष्य थे। गरुड़ जी भी रहे।

तो गरुड़ जी आत्म-ज्ञान पाने के लिए काकभुशुण्डी जी के पास गये। उन्होंने कई सवाल पूछे। पूछा कि आत्मा क्या है, समझाओ? पूछा कि आप आत्मज्ञानी हो तो कौवे क्यों हो? काकभुशुण्डी जी ने कहा कि पिछले जन्म में मैंने एक बार गुरु का अपमान किया था। मुझे अहंकार था कि मुझमें गुरु से अधिक ज्ञान है। एक बार जब गुरु जी आए तो सबने प्रणाम किया, पर मैंने नहीं किया। मैं शिव मंदिर में था। शिवजी ने मुझे शाप दिया, कहा कि मेरे स्थान पर गुरु की निंदा की, जा कौवा हो जा। तब मुझे गुरु का ध्यान आया। मैं उनके पास गया और कहा कि शिवजी का वचन तो मिट नहीं सकता, पर आप कृपा करो। गुरु ने पूछा कि क्या चाहते हो? मैंने कहा कि मुझे कौवे की योनि में भी आत्म-ज्ञान रहे; मेरा आत्मज्ञान न मिटे।

तो फिर गरुड़ जी ने कहा था कि कई युग हो गये, अब तो यह शरीर छोड़ो। काकभुशुण्डी जी ने कहा कि मुझे यह शरीर बड़ा ही प्यारा है, क्योंकि इसमें आकर मुझे बड़ा ज्ञान मिला है, इसलिए मैं इसे नहीं छोड़ना चाह रहा हूँ। काकभुशुण्डी ने उस शरीर में बैठकर कई सृष्टियाँ देखी थीं।

तो आत्म ज्ञान की बात हुई, काकभुशुण्डी जी ने कहा—

सुनो	तात	यह	अकथ	कहानी।
समझात	बने	न	जाय	बखानी ॥
ईश्वर	अंश	जीव		अविनाशी।
चेतन	अमल	सहज		सुखरासी ॥

सो माया वश भयो गुसाई ।
बन्धयो जीव मरकट की नाई ॥

यह 'तात' बड़ा प्यारा शब्द है। 'तात' शब्द किसी के लिए भी इस्तेमाल हो सकता है। गुरु के लिए भी, शिष्य के लिए भी, प्रीतम के लिए भी, पुत्र के लिए भी। तो कहा— 'सुनो तात यह अकथ कहानी।' अकथ यानी कही न जा सकने वाली। 'समझत बने न जाय बखानी।' कहा कि समझ लेना, वर्णन नहीं कर पाऊँगा। 'ईश्वर अंश जीव अविनाशी।' यह आत्मा मामूली नहीं है। ईश्वर की अंश है, अविनाशी है।

इसलिए तो मैं आपसे रंग-रूप से परे होकर बात कर रहा हूँ। जिसे भी आत्म-ज्ञान हो जाता है, सबमें एक आत्मा देखता है।

आप बहुरूपिये को देखते हैं कि वो कभी कुछ बनकर आता है, कभी कुछ। कभी वो हनुमान बनकर आपके सामने आता है, कभी कृष्ण बनकर, कभी सिकंदर बनकर। उसका काम है—आपको हँसाना। तो जो वहाँ के लोग हैं वो जानते हैं कि यह तो फलाना है, कहते हैं कि वो आ गया। यदि उसका नाम रामपाल है तो वो कहते हैं कि देखो, रामपाल आ गया। हनुमान उन्हें बाद में दिखता है, जो वो बना हुआ होता है। इस तरह आत्मज्ञानी सबसे पहले सबमें एक आत्मा देखता है।

फिर यह 'चेतन अमल सहज सुखरासी ॥' यह चेतन है। यानी सजीव है। शरीर तो जड़ है, पर यह जड़ चीज़ नहीं है। फिर यह अमल है। यानी मल रहित है। इसमें कोई भी गंदगी नहीं है। शरीर तो गंदगी से भरा है; बना भी गंदगी से ही है। पर आत्मा अत्यन्त निर्मल है। बड़ी ही प्यारी है; गंदगी से परे है। फिर सहज है। यानी यह छल-कपट से भी परे है। इंसान में तो छल-कपट है। यह मन का गुण है, आत्मा का नहीं। आत्मा छल-कपट से परे है। नितान्त ही सहज है। फिर यह आनन्दमयी है। आनन्द से भरी पड़ी है। इसमें कहीं से भी आनन्द को आहुत नहीं करना है। इसमें स्वतः ही आनन्द भरा पड़ा है। जैसे शरीर में तो आनन्द

को आहुत करना है। पंच इंद्रियों के आनन्द को आश्रय की ज़रूरत है। पर आत्मा निराश्रित है। आँखों का आनन्द लेने के लिए सुंदर दृष्य की ज़रूरत है, कानों का आनन्द लेने के लिए शब्द की ज़रूरत है, जिह्वा का आनन्द लेने के लिए अच्छे-2 खाद्य पदार्थों की ज़रूरत है, त्वचा का आनन्द लेने के लिए स्पर्श चाहिए, नासिका का आनन्द लेने के लिए खुशबू वाले पदार्थ चाहिए। यानी पंच इंद्रियाँ आश्रित हैं किसी पर। नहीं तो नहीं मिल पायेगा आनन्द। स्पर्श नहीं मिला तो त्वचा का आनन्द नहीं मिलेगा, सौंदर्य न मिला तो आँखों का आनन्द न मिलेगा, अच्छी-अच्छी खाने की चीज़ें न मिलीं तो जिह्वा इंद्रि का आनन्द नहीं मिलने वाला, शब्द न सुनाई पड़ा तो कानों के आनन्द से वंचित रह जाओगे, खुशबू वाले पदार्थ न होंगे तो नाक का मज़ा नहीं मिल सकेगा। पर आत्मा को इस तरह से आनन्द को कहीं से बुलाना नहीं है। इसमें स्वतः ही प्रस्फुटित हो रहा है।

तो कहा कि 'सो माया वश भयो गुसाई, बन्धयो कीर मरकट की नाई॥' कहा कि ऐसी प्यारी आत्मा तोते और बंदर की तरह बँध गयी है। जैसे बंदर कहीं बँधा नहीं होता। वो तो खुद चने के लालच में अपने को फँसा लेता है। तोते को किसी ने नहीं पकड़ा होता, पर वो खुद ही नलनी को पकड़े रखता है, सोचता है कि किसी ने पकड़ लिया। ऐसे ही आत्मा को किसी ने नहीं पकड़ा है। आत्मा खुद कह रही है मेरा-मेरा। एक मन की अनुभूति है, एक आत्मा की। जो मेरा-मेरा कर रहे हैं, यह है गठान।

..... इस तरह दो चीज़ों में यह आत्मा फँसी है—एक तो व्यक्ति और दूसरा उसका व्यक्तित्व। व्यक्तित्व में मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार आते हैं। इन्हीं में आत्मा फँसी है। इसलिए आप कहते भी हैं कि मन और माया में फँसे हैं। माया यह शरीर और मन यह व्यक्तित्व है।

शिकारी के तोते की तरह यह आत्मा घूम-घूमकर इस शरीर रूपी पिंजड़े में स्वयं आ रही ही। शिकारी तोते को अफीम का नशा देकर

उसका आदी बना देता है, जिसे पाने के लिए वो स्वयं ही पिंजड़ा छोड़कर जाना नहीं चाहता है।

जैसे उसे अफीम का नशा था, ऐसे ही आत्मा को आसक्ति हो गयी है माया में। माया का नशा चढ़ गया है। गुरु इस नशे को तोड़ता है।

इसलिए यह तो तय है कि आत्मा मन-माया के अधीन है। आत्मा ने शरीर को सत्य मान लिया। यही पहला कारण दिख रहा है। इंसान शरीर बनकर जिए जा रहा है। खाना, पीना, सोना आदि बेकार के कार्यों में खो गया है। आप कहेंगे कि महाराज, यह क्या पागलपंथी की बात कर रहे हैं! नहीं, मैं सबके बिना भी जी कर देख लिया हूँ। बिना खाए भी जी लिया। दो-दो साल कुछ नहीं खाया। बिना सोए भी जी लिया। दो-दो साल सोया नहीं। मैं सोचता था कि मैं हूँ ही आत्मा।

तो आदमी जिंदगी-भर जो व्यवहार कर रहा है, शरीर के लिए ही। बच्चे पाल रहा है। शरीर के संसर्ग से ही बच्चे हुए। फिर उन्हें पाल रहा है।

बिन रसरी सकल जग बंध्या ॥

फिर कर्म कर रहा है। क्योंकि शरीर को खून की ज़रूरत है। खुराक चाहिए। भोजन कर्म से ही प्राप्त होगा। कर्म ही तो जन्म-मरण का कारण बन रहा है। फिर क्यों कर रहा है? यही तो गहन रहस्य है। यही तो बिना रस्सी के बाँधना है। शरीर की संरचना ही ऐसी की गयी है कि उसे खाद्य पदार्थों की ज़रूरत पड़ रही है और उन पदार्थों को पाने के लिए कर्म करना पड़ रहा है। आत्मा को 'शरीर हूँ' का आभास देकर कर्म में उलझाया गया ताकि अपने को पहचान न सके। इसलिए कोई खेतीबाड़ी कर रहा है, कोई चोरी कर रहा है, कोई इसके लिए ठगी भी कर रहा है। सबका लक्ष्य जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति है। सब मिलाकर जो भी मनुष्य कर रहा है, शरीर के सुख लिए कर रहा है, क्योंकि आत्मा एक वहम में आ गयी है कि 'मैं' शरीर हूँ। यह वहम दुनिया के हरेक आदमी

को है। इसलिए सब अज्ञान में हैं। पोथियाँ पढ़ने से ज्ञान नहीं होने वाला, कथाएँ सुनने से ज्ञान नहीं होने वाला।

क्या है ज्ञान? क्या है अज्ञान? न जानना ही अज्ञान है। जानने योग्य एक ही है। उस एक को जानना ही ज्ञान है।

कबीर एक न जानिया, सब जाना जान अज्ञान।

कबीर एको जानिया, तो जाना जान सब जान॥

यदि एक को जान लिया तो पीछे कुछ जानना शेष नहीं रहा। जानने योग्य केवल आत्म-तत्त्व है। आत्मा को नहीं जानना ही अज्ञान है। आत्मा को नहीं जानने के कारण ही मनुष्य अनात्म कर्म कर रहा है।

क्या हुआ वेदों के पढ़ने से, ना पाया भेद को।

आत्मा जाने बिना, ज्ञानी तो कहलाता नहीं॥

वाह! चाहे कितना ही ज्ञान हो, आत्मा का ज्ञान नहीं है तो अज्ञानी हो। क्योंकि आत्मा का ज्ञान नहीं होगा तो आत्मा की वृत्ति अनुसार नहीं चलेंगे, मन के कहे अनुसार ही चलेंगे। मन आपका शत्रु है।

तो जानने योग्य एक ही पदार्थ है। इसी को न जानने से सब अनर्थ है। मेरा घर, मेरी स्त्री, यह आत्मनिष्ठ जीवन नहीं। यह सब स्वप्न है। हरेक अनात्म जीवन जी रहा है, क्योंकि कोई आत्मा को नहीं जान रहा है। आत्मा का कोई मित्र नहीं, कोई शत्रु नहीं; किसी देशकाल में इसका नाश नहीं। इसे किसी सहारे की जरूरत नहीं। पर ऐसा आत्मतत्त्व माया के अधीन आ गया है। कारण क्या है—अज्ञान। अज्ञान क्या है—न जानना। इसकी उत्पत्ति कैसे हुई? अँधकार से? यह कैसे आया अँधकार?

आप सत्संग में बैठे हो। अगर अँधकार हो जाए तो आप देख नहीं पायेंगे। चार चीजें अँधकार से उत्पन्न होंगी। अँधकार क्यों है? यह कहाँ से आ रहा है? 'तसमो माँ ज्योतिर्गम्या।' अँधकार से प्रकाश की ओर चलना है। अँधकार से अज्ञान होगा, पता नहीं चलेगा कि कौन-सी चीज कहाँ पर है। फिर अज्ञान से शंका उत्पन्न होगी। फिर उससे भय उत्पन्न

होगा और भय से दुख उत्पन्न होगा। ये चीजें अज्ञान के कारण से उत्पन्न हो रही हैं।

अज्ञान आया कहाँ से? सृजन कहाँ से है? दुनिया ही अज्ञानमय है। क्यों है दुनिया अज्ञानमय? अँधकार का अस्तित्व क्या है? अज्ञान की उत्पत्ति अँधकार से है। आखिर केंद्र क्या है उत्पत्ति का? इसकी उत्पत्ति आकाश से है। पाँच तत्व का जगत है।

क्षिति जल पावक गगन समीरा। पाँच तत्व का अधम शरीरा॥

संसार के जितने भी जीव हैं, उन सबका शरीर पाँच तत्वों से बना है। मनुष्य में ये पाँचों तत्व विद्यमान हैं। तुलसीदास जी कहते हैं कि यह शरीर अधम है, नीच है, गन्दा है। इस शरीर को गन्दा कहा गया है। आखिर क्यों? यह पूरी सृष्टि मैथुन सृष्टि कहलाती है यानी स्त्री और पुरुष के मेल से ही सब जीवों की उत्पत्ति होती है। माँ के रज और पिता के वीर्य से हमारा यह शरीर बना है; फिर यह निर्मल कैसे हो सकता है! फिर यह अच्छा कैसे हो सकता है! यह है ही गन्दगी का ढेर। इसके रोम-रोम में गन्दगी फैली हुई है। बाहर से हमें यह बड़ा साफ़ दिखाई दे रहा है, बड़ा सुन्दर दिखाई दे रहा है, पर यथार्थ में ऐसा नहीं है। हम बार-बार इसे नहलाकर साफ़ रखने का प्रयत्न करते हैं। इत्र, क्रीम तथा खुशबूदार चीजें लगाकर इसे सुन्दर और स्वच्छ रखने का प्रयत्न करते रहते हैं, पर थोड़ी ही देर में यह पुनः बदबूदार और गन्दा दिखने लगता है; क्योंकि यही इसकी वास्तविकता है। मल-मूत्र के द्वारों से महा गन्दगी बह रही है, मुँह से लार टपक रही है, कानों से खूट निकल रही है, नासिका से नाक बह रही है, आँखों से कीच निकल रही है, रोम-रोम से बदबूदार पसीना निकल रहा है। सुन्दरता का तो कोई चिह्न दिख ही नहीं रहा। इसके भीतर जो आत्म तत्व बैठा हुआ है, उसी के फलस्वरूप इसमें थोड़ी बहुत चमक दिख रही है। आत्मा को जब यह शरीर छोड़ना पड़ जाता है, उसके दो दिन बाद तक यदि इसे पड़ा रहने दिया जाए तो इसकी

असलियत का पता चल ही जाता है। इसलिए बहुत ही गन्दा है यह शरीर। इसी तरह यह दुनिया भी है। यह दुनिया, जो हमें इतनी हसीन लग रही है, वास्तव में यह ऐसी है नहीं। कुछ भी अच्छा नहीं है यहाँ; सब गन्दगी के ढेर की तरह है। यह सब हमें अच्छा क्यों लग रहा है? हमने कभी न सोचा होगा! इसमें मन की बड़ी ताक़त है। इस दुनिया को झूठा भी कहा गया है। संतों की नज़र में यह दुनिया पागलखाने की तरह है। पागलखाने में रहने वाले पागल अपने को बड़ा समझदार समझते हैं। अपनी बेवकूफी भरी हरकतों के कारण वे कई बार पिटे जाते हैं, पर सब हँसते-रोते सह ही लेते हैं। उनकी हरकतें देखकर आम आदमी को तो उन पर हँसी ही आती है, पर जो कुछ अच्छे भले आदमी होते हैं, वे उनकी यह हालत देखकर दुखी होते हैं। इसी तरह ज्ञानी संत-जनों को संसार रूपी पागलखाने में बार-बार चौरासी की चक्की में पिसे जाने वाले जीवों की इस हालत पर तरस आता है। हम सब अपने बच्चों को खुश देखना चाहते हैं। हम नहीं चाहते कि उन्हें कोई कष्ट मिले। इसी तरह सब जीव परम-पुरुष (साहिब) के अंश हैं। वो साहिब भी अपने जीवों को कष्ट में नहीं देखना चाहता। वो हमें यहाँ से छुड़ाना चाहता है। अपने जीवों को दुःखी देखकर साहिब भी दुखी होता है।

चलती चक्की देखकर दिया कबीरा रोय।।

जीवात्मा इस पागलखाने में खो गया। वो अपनी चाल भूल गया और पागलों की-सी हरकतें करने लगा, पागलों की चाल चलने लगा। आओ देखते हैं, वो कैसी हरकतें कर रहा है। मनुष्य का शरीर पाँच तत्त्वों से बना है—जल, अग्नि, वायु, पृथ्वी और आकाश। इसी में पच्चीस प्रकृतियाँ हैं। जैसे जल तत्त्व हमारे शरीर में पाँच रूपों में स्थित है खून, पसीना, थूक, पेशाव तथा बीर्य और अग्नि तत्त्व हमारे शरीर में पाँच रूपों में स्थित है—भूख, प्यास, निद्रा, आलस्य तथा जम्भाई। वायु तत्त्व हमारे शरीर में पाँच रूपों में स्थित है—सिकुड़ना,

पसरना, बोलना, सुनना और बल लगाना। पृथ्वी तत्त्व में हाड़, माँस, त्वचा, रोम तथा नाखून आते हैं और आकाश तत्त्व शब्द, रूप, रस, गंध तथा स्पर्श के साथ हमारे शरीर में विद्यमान है। इस प्रकार ये पाँच तत्त्व पच्चीस रूपों में हमारे शरीर में विद्यमान हैं।

जीवात्मा अपने धर्म को भूल गया। शरीर से उसका कोई संबंध न कभी था, न है और न कभी हो सकता है, क्योंकि शरीर जड़ है जबकि जीवात्मा चेतन है, पर जीवात्मा अपने स्वरूप को भूलकर शरीर की इन प्रकृतियों के पालन में ही खो गया है। जैसे सोना जीवात्मा का स्वभाव नहीं है, आत्मा की वृत्ति नहीं है। यह तो अग्नि-तत्त्व के कारण है, पर आत्मा भूलवश इसे अपना धर्म मान रही है। बोलना वायु-तत्त्व है, आत्मा की वृत्ति नहीं, पर आत्मा अपने को शरीर मान बैठी है। सारा झंझट यहीं से शुरू हुआ है और आत्मा अपने धर्म को भूलकर इस अधम शरीर की वृत्तियों के पालन में मग्न हो गयी।

हंसा तू तो सबल था, अटपट तेरी चाल।

रंग-बिरंग में खो गया, अब क्यों फिरत बेहाल ॥

जीवात्मा की चाल बड़ी अटपट थी, पर जबसे इसने शरीर को धारण किया, यह दुःखी है। यह अपनी चाल को ही भूल गई। क्यों भूली? क्योंकि इसने अपने को शरीर माना। सारा दुःख यहीं से प्रारम्भ हुआ। यदि यह अपने को शरीर न माने तो कोई झंझट, कोई दुःख ही नहीं है। यह शरीर तो एक पिंजरा है, जिसमें ऐसी निर्मल आत्मा को भ्रमित करके बाँधा गया है। लेकिन आत्मा को तो कोई बाँध ही नहीं सकता। यह बँधने वाली वस्तु है ही नहीं। फिर यह कैसे बंधन में है ?

बिन रसरी सकलो जग बँधा ॥

बिना रस्सी के सारा संसार बँधा हुआ है।

मुझे किसी ने सवाल किया कि यमराज आत्मा को कैसे पकड़ते हैं। कहते हैं कि आत्मा को ले गये। पर दूसरी तरफ कहा जा रहा है कि इसे बाँधा नहीं जा सकता है, पकड़ा नहीं जा सकता है, न भीतर है, न बाहर है। अति सूक्ष्म है। आखिर यमदूत कैसे पकड़ लिए?

नरक की यातनाएँ होती हैं। आग में जलाते हैं, विष्ठा के कुण्डों में डुबाते हैं, सप्त कुंभी नरकों में ले जाकर कष्ट देते हैं। जब शरीर यहीं छूट गया तो सजा किसको मिलती है? जब स्थूल शरीर यहाँ रह गया, तो क्या बात हुई। अगर आत्मा उधर गयी तो सजा कैसे दी अद्भुत आत्मा को?

सही बात यह है कि यमदूतों को भी आत्मा का ज्ञान नहीं है। मैंने उससे कहा कि सुनो। यमदूत प्राणों को पकड़ते हैं। आत्मा को हाथ नहीं डाल सकते हैं। यमदूत आत्मा को कुछ नहीं कर सकते। पता ही नहीं है।

जो सुमिरन कह रहे हैं, इसका वैज्ञानिक आधार है। यमदूत प्राणों को पकड़ते हैं। प्राणों के पीछे-पीछे फिर जीव भी 'हाय मेरे प्राण', 'हाय मेरे प्राण' कहता हुआ चल पड़ता है।

एक गाय बीमार थी। वो गाड़ी में नहीं बैठ रही थी। उसे अस्पताल ले जाना था। मैंने कहा कि इसके बछड़े को गाड़ी में बिठाओ। जब उसके बछड़े को गाड़ी में बिठाया तो वो खुद ही जाना चाह रही थी। अगली बार बैठ गयी।

इस तरह यमराज जानता है कि आत्मा प्राणों से बहुत प्रेम करती है। यमराज यह जानते हैं। वो प्राणों को पकड़ता है। आत्मा पीछे-पीछे जाती है। दूसरा शरीर में रहते-रहते इसकी आदत बन गयी है। वो अपने को शरीर ही समझ रही है।

उदाहरण के लिए नींद में जाते हैं तो सूक्ष्म शरीर में होते हैं। स्थूल शरीर नहीं होता है। सपने में भी आप भयभीत हो जाते हैं। आपका यह स्थूल ढाँचा नहीं था। उसे तो कुछ नहीं होना था। तलवार से वो कट नहीं

सकता था, आग से जला नहीं सकता था, फिर क्यों भयभीत हुए?

एक बार मैं नरक में घूमने चला गया। अगर ध्यान के समय साधक कान की बाईं दिशा की तरफ एकाग्र होता है तो वहाँ चला जाता है। वहाँ देखा, यमदूत नरक में लोगों को कष्ट दे रहे थे। वो तो परछाईं जैसी एक चीज को मार रहे थे, पर लोग खाहमखाह चिल्ला रहे थे। इसी तरह शरीर की अनुभूति है। यह शरीर भ्रम है।

साहिब कह रहे हैं—

आपा को आपा ही बँधयौ ।
जैसे स्वान काँच मंदिर में भरमति भूँकि मरो ॥
जो केहरि बपु निरखि कूप-जल प्रतिमा देखि परो ।
ऐसेहिं मदगज फटिक शिला पर दसननि आनि लरो ॥
मरकट मुठी स्वाद ना बिसरै घर-घर नटत फिरो ।
कहै कबीर नलनी कै सुगना तोहि कौन पकरो ॥

इस आत्मा ने स्वयं अपने को बँधा मान लिया। यानी यह स्वयं बंधन में आ गयी। जैसे काँच के मकान में रहने वाला कुत्ता अपने ही अनेक प्रतिबिम्बों को दूसरे कुत्ते समझकर भौंका करता है; जैसे सिंह कुँए के जल में अपनी ही परछाईं को दूसरा सिंह समझकर कूद पड़ा था; जैसे पहाड़ी रास्ते पर चलने वाला हाथी अपने ही दाँतों से लड़ने लगता है; जिस प्रकार बन्दर चने की मुट्ठी भर लेता है। खाली हाथ संकरे घड़े में चला जाता है, पर भरा होने से जब वो बाहर नहीं आ पाता तो बन्दर चिल्लाने लगता है, अपने सगे-संबंधियों को पुकारने लगता है—भाई ! मुझे छोड़ो; किसी ने पकड़ लिया है। उसे किसी ने नहीं पकड़ा। चने छोड़ दे तो हाथ बाहर आ जाए; जैसे तोता नलनी को पकड़ कर अपने को बँधा मानने लगा। शिकारी लोग तोते को पकड़ने के लिए एक नलनी विशेष तौर पर तैयार करते हैं। उस पर एक शीशा और फल बाँध कर किसी पेड़ की टहनी पर बाँध देते हैं। तोता आता है; नलनी पर पाँव रखता है; वज़न से नलनी घूम जाती है। तोते के पाँव ऊपर की ओर हो

जाते हैं, शरीर नीचे। शीशा वहाँ पर लगा है; अपना ही रूप उसमें देखता है; सोचता है, किसी दूसरे तोते ने पकड़ लिया है; चोंच मारने लगता है। इतने में शिकारी आता है, उसे पकड़ लेता है। वो चाहता तो उड़ सकता था। नलनी को छोड़ देता तो आज़ाद था। किसने पकड़ा था उसे! साहिब कहते हैं कि इसी तरह से जीव बँधा है। इसने दुनिया पकड़ रखी है। इसने ही माया पकड़ रखी है। माया इसे पकड़ ही नहीं सकती। यह खुद पकड़ा हुआ है। यह शरीर को 'मैं' मान कर पकड़ा हुआ है।

इस माया रूपी शरीर की पाँचों इन्द्रियाँ अपने-अपने स्वार्थों की पूर्ति में मग्न हैं। इन्होंने आत्मा को अपनी ओर आकर्षित कर लिया है। आत्मा इनमें रम गया है और स्वयं से दूर हो गया है। हमारी आँखें किसी फूल को देखती हैं। यह आकर्षण आँखों द्वारा मन को हुआ। आत्मा क्यों आकर्षित हुई? इसे तो कोई आकर्षित नहीं कर सकता। फिर ऐसा क्यों हुआ? आओ इस पर विचार करते हैं।

कभी-कभी हम खाने की कोई स्वादिष्ट चीज़ देखते हैं। जिह्वा उसे खाने को ललचाती है, मुँह से लार टपकनी शुरू हो जाती है। यह सब काम अपने आप अन्दर-ही-अन्दर होता है। इस खेल को खेलने वाला मन पर्दे के पीछे से सभी इन्द्रियों को उत्तेजित करता है। आत्मा इस खेल को समझ नहीं पाती है। सभी इन्द्रियाँ आपस में मिली हुई हैं। जैसे देखने वाली इन्द्रि तो आँख थी, मुँह ने तो देखा नहीं, फिर मुँह से लार क्यों टपकी? मुँह में पानी क्यों आया? इसका सीधा-सा मतलब है कि सब इन्द्रियों का आपस में समझौता है। ये आपस में मिली हुई हैं। आत्मा का इन इन्द्रियों से कोई संबंध नहीं है। आत्मा तो कुछ खाती नहीं। कुछ लोग कहते हैं कि आत्मा कुछ खाने को कह रही है। यह बिलकुल गलत है। हमारी आत्मा कुछ भी नहीं खाती। इसमें मुँह ही नहीं है, फिर क्या खायेगी! स्थिति यह है कि जब-जब, जो-जो इन्द्रि अपने स्वार्थ की ओर उन्मुख होती है, तब-तब आत्मा भूलवश उतनी देर के लिए अपने को वो इन्द्रि

मानने लग जाती है।

इस तरह यह तो मन और इन्द्रियों का खेल है, जिसे आत्मा पागलों की तरह खेल रही है। आत्मा मन के कहने पर चल रही है। आखिर क्यों? क्योंकि यह अपने को नहीं जान पा रही है। इसलिए मन से आत्मा को अलग देखना ही आत्म-साक्षात्कार है। इससे बड़ा दुनिया में कोई काम नहीं है। आत्मा अपना धर्म, अपना गुण भूल गई है। आत्मा सोती-जागती नहीं; भूख-प्यास भी इसे लगती नहीं; न यह स्त्री है, न पुरुष; न इसकी कोई माँ है, न बाप। फिर हम सब रिश्ते-नाते कह रहे हैं। ये कौन हैं? मन से ही सब रिश्ते-नाते हैं, मन से ही पूरी दुनिया है, मन से ही जगत का सब व्यवहार है। दुनिया में जो कुछ भी कर्म मनुष्य कर रहा है, सब झूठ है, क्योंकि इन सब कर्मों को करने की प्रेरणा और दिशा मन दे रहा है। मन की आज्ञानुसार ही मानव कर्म कर रहा है। जैसे-जैसे मन कह रहा है, वैसा-वैसा आत्मा किए जा रही है। मन कहता है पानी पीना है, मन कहता है कि अब घर जाना है, मन कहता है कि फलाने से बात करनी है, मन ही किसी से नाराज़ हो जाता है और फिर मन ही किसी से खुश हो जाता है। मन ने अपनी शक्ति से अपना गुण आत्मा पर लगा दिया है। कभी हम खेतीबाड़ी के लिए सोचते हैं, कभी बाल-बच्चों की सोचते हैं। आत्मा के बारे में, आत्मा के कल्याण के लिए, परमात्मा के विषय में ज्यादा नहीं सोच पाते हैं। यदि थोड़ा बहुत कभी-कभार सोच भी लेते हैं तो केवल इसलिए कि आत्मा में एक स्वाभाविक कशिश है। वो परमात्मा की ओर खिंचती है। पर मन इसमें आड़े आया हुआ है। इसलिए जब आत्मा अपने को जान जाएगी तब यह मन की कोई बात नहीं मानेगी। स्वयं से परिचित न होने के कारण ही यह मन की आज्ञा में है। मन आत्मा को पागलों की भांति नचा रहा है। जब से आत्मा शरीर में आई, शरीर में ही खो गयी; उसे 'मेरा' 'मेरा' कहने लगी। शरीर की सभी

इन्द्रियाँ अपने-अपने स्वार्थों में मग्न हैं। सभी इन्द्रियाँ अपना-अपना मज़ा लेना चाहती हैं। संसार के लोग इन्हीं इन्द्रियों के मज़े में फँसे हुए हैं। इसलिए वे सच्चे आनन्द से बहुत दूर हैं। यह मज़ा, जो इन्द्रियों से संबंध रखता है, मन को मिलता है। पर इन्द्रियों के प्रत्येक मज़े के पीछे एक सज़ा भी छिपी रहती है, जिसे आत्मा युगों से भोग रही है। आओ देखते हैं, कौन-सी सज़ा छुपी होती है, इनके पीछे!

आँखों के मज़े की सज़ा: आँखें सौन्दर्य का मज़ा लेती हैं। सुन्दर-सुन्दर दृश्य देखकर खुश होती हैं। पतंगे की आँखें इस मज़े की कायल हैं। वो दीपक की लौ से प्रेम करता है। इस मज़े के लिए वो उसकी तरफ जाता है। जब पास जाता है तो उसके पंख जलते हैं, पर पतंगा फिर भी पीछे नहीं हटता और बार-बार उसकी तरफ जाता है, क्योंकि वो आँखों का मज़ा लेना चाहता है। लेकिन आँखों के मज़े के पीछे वो पतंगा अंत में जलकर प्राण खो देता है।

कान के मज़े की सज़ा: इस इन्द्रि का मज़ा लेता है-मृगा। वो बाँसुरी की आवाज़ सुनने का बड़ा शौकीन है। जैसे कुछ लोग रेडियो सुनते हैं, विविध प्रकार के गाने सुनते हैं। कुछ तो वाक्मैन को कानों के साथ चिपकाए हुए घूमते हैं। वास्तव में वो कान का मज़ा लेते हैं। इसी तरह वो मृगा बाँसुरी सुनने का मज़ा लेता है। वो आम हिरण से कुछ अलग होता है। उसकी नाभि में एक कस्तूरी है, जो बड़ी कीमती है।

शिकारी लोग मृगा को पकड़ने के लिए ज़मीन में दो बाँस गाड़ते हैं। उस पर कील ठोंककर एक फर्जी बाँस रख देते हैं। स्वयं पर्दे के पीछे किसी स्थान पर छिपकर बाँसुरी बजाना शुरू कर देते हैं। बाँसुरी की आवाज़ कानों में पड़ते ही मृगा का मन खुश हो जाता है। वो पहाड़ी से नीचे उतरता है, क्योंकि वो पास आकर बाँसुरी सुनना चाहता है। मृगा की एक विवशता है कि वो बैठ नहीं सकता है। यदि कभी गलती से वो बैठ जाए तो उठ नहीं सकता, क्योंकि

उसकी टाँगों में जोड़ नहीं हैं। इसलिए वो नींद भी खड़े-खड़े ही किसी चट्टान आदि से टिककर ही पूरी करता है। अब उधर शिकारी बाँसुरी बजाता जाता है और मृगा पास आता-आता मस्त होता जाता है। फिर बिलकुल पास आकर अपने दोनों पैर उस फर्जी बाँस पर रख देता है, क्योंकि वो मजे से बाँसुरी का आनन्द लेना चाहता है। फर्जी होने से बाँस गिर पड़ता है और साथ ही मृगा भी गिर पड़ता है। अब शिकारी बाँसुरी बजाना बन्द कर देता है और उसके पास आ जाता है; पेट फाड़कर कस्तूरी निकाल लेता है और माँस बेच देता है।

नाक के मजे की सज़ा: नाक का मज़ा लेता है-भँवरा। वो कमल के फूल से प्यार करता है; क्योंकि वो उसकी भीनी-भीनी खुशबू का मज़ा लेता है। वे उसी में मस्त रहना चाहता है। जैसे हम इत्र, फूल आदि जो खुशबूदार चीज़ें लगाते हैं, वो सब इस नाक इन्द्री का मज़ा है। इसी तरह भँवरा मतवाला रहता है। शाम होने लगती है और भँवरा कमल के भीतर उसकी सुगन्धि लेने में मस्त होता है। उधर अपनी प्रवृत्तिनुसार कमल का फूल धीरे-धीरे बन्द होने लगता है। भँवरा इस बात को समझता है कि फूल बन्द हो रहा है और बन्द होने से पहले उसे वहाँ से निकलना होगा; पर वो सोचता है कि थोड़ी-सी महक और ले लेता हूँ; बाद में उड़ूँगा। फूल अब धीरे-धीरे काफी हद तक बन्द हो जाता है। भँवरा और मज़ा लेना चाहता है। वो माया के मजे में इतनी बुरी तरह फँस चुका होता है कि वहाँ से निकलना नहीं चाहता है। इसलिए वो सोचता है कि अभी तो आकाश दिखाई दे रहा है; बस थोड़ी ही देर में उड़ जाऊँगा। जैसे स्कूल जाने के लिए उठने से पहले बच्चे थोड़ी देर नींद में मस्त रहना चाहते हैं; क्योंकि वो नींद का मज़ा ले रहे होते हैं; इसलिए उन्हें बार-बार उठाना पड़ता है। इसी तरह वो भँवरा भी उड़ने से पहले कमल की महक का मज़ा थोड़ी देर लेना चाहता है; पर उसे बार-

बार समझाकर वहाँ से बाहर निकालने वाला कोई नहीं होता, इसलिए कमल का फूल धीरे-धीरे बिलकुल बन्द हो जाता है और भँवरा शराबी की भांति बीच में ही मस्त हो जाता है। सुबह जब फूल पुनः खिलता है तो भँवरा मर चुका होता है, क्योंकि उसे ऑक्सीजन नहीं मिल पाती है। इसलिए भँवरा नाक का मज़ा लेते-लेते मर जाता है। यह था नाक का मज़ा और यही है उसकी सज़ा।

जीभ के मजे की सज़ा: मछली की जीभ बड़ी तेज़ है; वो हर समय कुछ-न-कुछ खाने को ललचाती रहती है। जैसे हम भी कभी छोले-भटूरे, कभी हलवा-पूरी, कभी रसगुल्ले, कभी समोसे, कभी जलेबी। यह सब क्या है? यह सब इस जिह्वा इन्द्री का मज़ा है।

मछली को पकड़ने के लिए मछुआरा काँटे में आटा, माँस आदि लगाकर पानी में डालता है। मछली इस बात को समझती है कि यह आटा उसे खिलाने के लिए नहीं है बल्कि उसे पकड़ने के लिए है; पर उसकी जीभ बड़ी तेज़ है; वो उसका मज़ा भी नहीं छोड़ पाती; इसलिए वो सोचती है कि चुपके से खाकर निकल जाऊँगी। लेकिन उसे यह नहीं मालूम है कि वो काँटा दो-मुँहा है, जो दोनों ओर से फँसेगा। वो तो चालाक बनकर जाती है, पर शिकारी और भी चालाक है; इसलिए वो पकड़ी जाती है और जीभ के स्वाद के लिए अपने प्राण खो देती है।

इस दुनिया की हाट में जो कुछ भी है, वो सब माया का खेल है, आत्मा को परमात्मा से दूर करने के लिए है। माया ने यहाँ कुछ भी आत्मा के मजे का नहीं रखा हुआ। आत्मा को तो किसी मजे की ज़रूरत ही नहीं है, क्योंकि वो स्वयं आनन्दमयी है। फिर यह कैसा कौतुक है कि आत्मा इस मजे में मस्त हो गयी है! कहीं यह भँवरे वाली बात तो नहीं हो रही! हम समझते भी हैं कि एक दिन हमें यह शरीर छोड़ना ही है, फिर भी हम साहिब का भजन नहीं करते हैं। हम सोचते हैं कि माया का थोड़ा-सा मज़ा और ले

लिया जाए; पर हमें नहीं पता है कि अगर कोई सद्गुरु हमें बार-बार जगाने का प्रयत्न कर रहा है तो ठीक है, हम बच जाएँगे, पर यदि हमने सद्गुरु की पुकार को भी अनसुना कर दिया, उसके जगाने पर भी हम नहीं जागे और माया के मजे में मस्त रहे, तो निश्चय ही माया हमें नर-तन से गिरा देगी और हम माया का मजा लेते-लेते माया की ही गोद में सदा के लिए सो जाएँगे और हमारा अमोलक मानव जीवन बेकार चला जाएगा।

विषय इन्द्री के मजे की सजा: यह मजा लेता है—हाथी। वो बड़ा कामी जानवर है। उसे पकड़ने के लिए शिकारी जंगल में किसी पेड़ के साथ एक हथनी बाँध देते हैं। हथनी के थोड़ी आगे एक खड्ढा खोदकर ऊपर से छोटी-छोटी लकड़ियाँ डालकर घास-फूस से उसे अच्छी तरह ढक देते हैं, ताकि हाथी को पता न चले। हाथी जब हथनी को देखता है तो दौड़ता हुआ विषय आनन्द के लिए उसके पास जाता है। जैसे ही वहाँ घास-फूस पर पाँव पड़ता है, हाथी के वजन से छोटी-छोटी लकड़ियाँ चूर-चूर हो हाथी के साथ खड्ढे में गिर जाती हैं। कुछ दिन तक हाथी वहीं भूखा-प्यासा पड़ा रहता है। बाद में शिकारी आता है, उसे पालतू बना लेता है और गले में घण्टियाँ डालकर घूमता है।

मन और माया ने भी जीवात्मा को इसी तरह फँसाकर पालतू बना लिया है। इसलिए अब वो अपने जोर से इस फाँस से आजाद नहीं हो सकता। यदि एक इन्द्री का मजा ही जीव के लिए इतना खतरनाक है, तब इस मानव का क्या हाल होगा, जिसकी पाँचों ही इन्द्रियाँ एक-से-एक बढ़कर हैं; सभी तेज हैं। ये सभी बलपूर्वक आत्मा को नरक की ओर घसीटती हुई ले जाती हैं। इतना ही नहीं, ऊपर से काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार भी अपने-अपने तरीके से इसे नाना नाच नचा रहे हैं? इस पर साहिब कह रहे हैं—

बहु बंधन ते बाँधिया, एक बिचारा जीव।

जीव बिचारा क्या करे, जो न धुड़ावे पीव॥

किसी सुन्दर वस्तु को देखकर आँखें ललचाती हैं, मनुष्य चोरी करता है, पाप-कर्म करता है। पाप-कर्मों के कारण ही तो आत्मा इस संसार में बार-बार जन्म लेने की सज़ा भोग रही है। मगर पाप तो मन करता है। मन को ही पापी कहा गया है। फिर आत्मा का क्या दोष हुआ? क्या वो भी दोषी है? हाँ! आत्मा भी इसमें शामिल हो रही है। जैसे कोई किसी का कत्ल करने जाता है तो इसमें बहुत कुछ शामिल हो गया। वहाँ तक जाने के लिए टाँगें शामिल हुईं। फिर छुरा आदि मारने में हाथ शामिल हुआ। जो गुस्सा आया था, वो भी मन से था। फिर ऐसे में आत्म-देव कहाँ गायब था? क्या आत्मा की भी कुछ गलती थी या नहीं? आत्मा पूरी-पूरी सहयोगी थी इसमें। हाथ-पाँव को जो ऊर्जा चाहिए थी, वो आत्मा ने ही दी। क्रोध मन से था, पर यदि आत्मा विचार करती और हाथ-पाँव को ताकत ही न देती तो मन शांत हो जाता और पाप कर्म न हो पाता। इसलिए आत्मा इन्हें शक्ति देकर इस पाप में शामिल हो गयी। चोर अपराधी होता है तो चोर का साथ देने वाला भी अपराधी माना जाता है। उग्रवादी को तो सज़ा मिलनी ही चाहिए, पर यदि कोई उसे शरण दे रहा है, सहायता दे रहा है, उसे क्या ऐसे ही छोड़ देना चाहिए। इसी तरह आत्मदेव भी दण्ड का अधिकारी बन रहा है। फिर भी हाथ-पाँव को ताकत क्यों दी गयी? आत्मा भूल गयी। इसलिए यह तो निश्चित है कि आत्मा इनके बंधन में है।

सब इन्द्रियाँ आपस में मिली हुई थीं। इन्होंने आत्मा को मजबूर किया। आत्म देव कुंद पड़ा था। उसे अपना ज्ञान ही न था। उसका इन चीज़ों से कोई वास्ता नहीं है, पर फिर भी वो इन्द्रियों के इशारे पर इस काम को पूरा करने में जुट गया। हमें इस बात पर बड़ी गम्भीरता से विचार करना होगा। हमें सोचना होगा, यह सब

क्यों हो रहा है, क्योंकि—‘जीव पड़ा बहु लूट में, नहीं कुछ लेन न देन’। जीव बड़ी लूट में है। उसे बचाना है। उसका इन चीजों से कोई वास्ता नहीं है। वो अपनी शक्ति से अपना विनाश कर रहा है।

जैसे तोता शिकारी के पिंजड़े को छोड़कर कहीं नहीं भागता, इसी तरह आत्मा मन के पिंजड़े में स्वयं कैद होकर बैठ गयी है। आओ, पहले देखते हैं कि तोता क्यों पिंजड़े को छोड़ना नहीं चाहता? जैसा कि पीछे बताया गया है कि तोते को नलनी के साथ शीशा और फल बाँधकर शिकारी पकड़ता है। फिर वो शिकारी उसे पहले एक पिंजड़े में डालता है। यदि वो उसे पिंजड़े में न डाले तो फिर तो तोता उसी समय उड़ जाए। **आत्मा को भी यदि शरीर रूपी पिंजड़े में डालकर मन कैद न करता तो आत्माएँ कब की अमर-लोक में साहिब के पास चली गयी होतीं।** इस तरह तोते को पिंजरे में डालकर शिकारी रोज़ उसे थोड़ी-थोड़ी अफ़ीम देना शुरू कर देता है। जब तोता उसका आदी हो जाता है तो शिकारी एक दिन उसे बिना अफ़ीम के दाना देता है। अब तोते से अफ़ीम के बिना नहीं रहा जाता, क्योंकि उसे अमल हो चुका होता है, इसलिए तोता तड़पता है, फड़फड़ाता है। शिकारी जान जाता है कि यह अब आदी हो चुका है; उसे पिंजड़े से निकालता है, उड़ा देता है—जाओ। तोता बड़ा खुश होता है—वाह! आज तो आज़ाद हो गया। चला जाता है बड़ी दूर। सोचता है, नहीं आऊँगा फिर कभी भी, इस पिंजड़े में। पर अचरज कि बात है कि दो-तीन दिन बाद वो तोता खुद आकर उस पिंजड़े में बैठ जाता है, क्योंकि उसे जंगल में अफ़ीम नहीं मिल पाती, जिसका वो आदी हो चुका होता है, बाकी सब कुछ खाता है, पर उसे जो अमल बन चुका होता है, वो कहीं नहीं मिल पाता, इसलिए तोता खुद आकर पिंजड़े में बैठ जाता है। उस शिकारी ने उसे इस तरह पक्का कैद कर लिया। इसी तरह निरंजन ने आत्मा को शरीर में डालकर मोहमाया का नशा दे दिया है। इस शरीर के

सभी द्वार खुले हैं। पर आत्मा निकल नहीं रही है, क्योंकि उसे अमल है—मेरा भाई, मेरा घर, मेरा बेटा, मेरी माँ आदि। इस अमल के अन्दर आत्मा खो गयी है, इसलिए वो किसी भी स्थिति में इस शरीर को छोड़कर जाना नहीं चाहती।

माया के हर मजे में सज़ा है। पीछे तो बाहरी इंद्रि के मजे बताए। अंदर के मजे में भी सज़ा ही है। लेकिन अंतर बहुत बड़ा है। बाहरी मजे तो नरक में ले जाते हैं जबकि आंतरिक धुनें बगैरह के मजे नरक न ले जाकर अंत में स्वर्ग, ब्रह्म आदि लोकों में ले जाते हैं। वे मजे जीते-जी भी इन लोकों में ले जाते हैं। पर सज़ा इसलिए है कि आत्मा का कल्याण नहीं हो पाता है, जिसके कारण कुछ समय तक मायावी सुखों का उपभोग करके फिर वापिस माँ के पेट में आना पड़ता है। बार-बार के जन्म-मरण से छूटना ही आत्मा की मुक्ति है। यदि मुक्त होकर भी हमेशा के लिए मुक्ति नहीं मिल पा रही है तो मुक्ति के भेद को समझना होगा।

मुक्ति मुक्ति सब जगत बखाना। मुक्ति भेद कोई बिरला जाना।।

साहिब कह रहे हैं कि मुक्ति का भेद कोई बिरला ही जानता है। क्या चीज़ है मुक्ति? कैसे मिले मुक्ति? मुक्ति का भाव है कि हमारी आत्मा जन्म-मरण से छुटकारा प्राप्त करे। इसका मतलब है कि कहीं हमारी आत्मा किसी बंधन में है। हम सब एक वैज्ञानिक युग में जी रहे हैं। क्या हम आत्मा का बंधन नहीं देख सकते हैं! क्या नहीं समझ सकते हैं आत्मा को! जब भी बंधन की तरफ चलेंगे तो पहले आत्मा का वजूद समझना होगा न! डॉ० के पास दवा के लिए जाते हैं तो पहले डॉ० जानने की कोशिश करता है कि बीमारी क्या है। जब तक यह पता न चले, तब तक रोग की निवृत्ति का सवाल ही नहीं उठता है। इसलिए पहले वो बीमारी जानने की कोशिश करता है। फिर देखता है कि निदान कैसे हो। उससे संबंधित दवा देता है। इस तरह जब आत्मा के कल्याण की बात कर रहे हैं तो पहले आत्मा को समझना पड़ेगा। क्या इसे बाँधा जा सकता है? हमारी आत्मा को किसने बाँधा? आत्मा को बाँधने वाला कौन है? इसका

मतलब कि जो बाँधा है या तो वो ताक़तवर है। अगर ताक़तवर है तो क्या चीज़ है? यदि वो ताक़तवर है तो आत्मदेव सर्वशक्तिमान कैसे हुआ! अगर यह बँध गयी तो निर्लेप कैसी है!

एक तरफ कहा जा रहा है कि इसका आगा-पीछा नहीं है; आत्मा स्त्री-पुरुष नहीं है; आत्मा का जन्म-मरण नहीं होता; आत्मा कमती-बढ़ती भी नहीं है; यह नित्य है। एक तरफ ये शब्द कहे जा रहे हैं। तो हमें आत्म-तत्व को ठीक से समझना होगा। यदि नहीं समझेंगे तो कल्याण कैसे करेंगे! इसका जो विश्लेषण दिया गया उससे एक बात का पता चला कि आत्मा का जन्म भी नहीं है, मरण भी नहीं; आत्मा स्त्री भी नहीं है, पुरुष भी नहीं; किसी भी देश-काल-अवस्था में आत्मा का नाश नहीं हो सकता है; आत्मा को भूख-प्यास भी नहीं लगती है; आत्मा बूढ़ी-जवान भी नहीं होती है; आत्मा का बेधन नहीं किया जा सकता है; आत्मा को जलाया नहीं जा सकता है; आत्मा को मिटाया नहीं जा सकता है; आत्मा को तोड़ा-मरोड़ा भी नहीं जा सकता है; आत्मा नित्य है। यह आत्मा बेहद मजबूत चीज़ है। गीता में भी विश्लेषण दिया है; वेदों में भी दिया है। जो विश्लेषण दिया है वो बड़ा अजीब है। किसी भी देशकाल में आत्मा कभी जर्जर अवस्था को प्राप्त नहीं होती। आत्मा एक ऐसा तत्व है, जो नष्ट नहीं होता।

हम जब दुनिया को देख रहे हैं तो पता चलता है कि दुनिया पाँच तत्वों की बनी है—जल, अग्नि, पृथ्वी, वायु और आकाश। पानी दिख रहा है; जो पी भी रहे हैं। यह ख़त्म हो जाता है। अगर उबाल दें तो वाष्प बन जाता है; ख़त्म हो जाता है। अग्नि ख़त्म हो जाती है। दुनिया नाशवान् इसलिए है कि सभी चीज़ें नष्ट हो जाती हैं इसकी। आग भी जलाओ, फूँक मारो तो बुझ गयी। पृथ्वी भी नष्ट हो जाती है। जल उसे घोल देता है। वायु भी ख़त्म हो जाती है। आकाश उसे विलोम कर देता है। और शून्य भी ख़त्म हो जाती है। पाँचों तत्व नाशवान् हैं।

एक बार एक दूसरे पंथ का प्रचारक मेरे पास आया और

गोष्ठी करने लगा। मैंने पूछा कि निराकार क्या है? कहा—जो दोनों हाथों के बीच देख रहे हैं। यह नित्य है। मैंने कहा कि यदि यह नित्य है तो सभी परमात्मा के पास में हैं। फिर लोग चोरी, ठगी आदि कर रहे हैं तो वो क्या है! यदि दो हाथों के बीच में परमात्मा है तो मामला खत्म हो गया। फिर हमारे पूर्वज जंगलों में क्या कर रहे थे! मैंने पूछा कि पाँचों तत्व क्या मानते हो? वो बोला—नाशवान्। मैंने कहा कि वो कौन से हैं? कहा—धरती। मैंने कहा कि हम चल रहे हैं; इससे हम वाक्रिफ्र हैं; ठीक है। दूसरा कहा—जल। मैंने कहा कि यह भी ठीक है; पता चल रहा है; हम पानी पी रहे हैं। यह भी नाशवान् है। तीसरा कहा—अग्नि। मैंने कहा कि इससे भी हम परिचित हैं। चौथा कहा—वायु। मैंने कहा कि यह भी समझ आ गया। पाँचवाँ कहा—आकाश। मैंने कहा कि यह क्या है? इसका पता कैसे चले? कहा शब्द से। मैंने कहा कि तुम्हें पाँच तत्व का भी पता नहीं है। पाँचवाँ तत्व आकाश ही शून्य है।

वो पाँचवाँ तत्व शब्द कह रहा था। आओ, मैं इसके बारे में बताता हूँ। शब्द दो चीज़ है। एक तो है हवा और दूसरा जिससे टकराता है। हवा और पृथ्वी से शब्द का सृजन होता है। किसी ने कुछ बोला तो कैसे पता चले? जब कानों के पर्दे पर जाकर हवा की तरंगें टक्कर मारीं तो पता चला। यानी एक हवा और कान का पर्दा (पृथ्वी तत्व) से पता चला। दोनों के टकराने से शब्द हुआ। तो यह आकाश कहाँ से हुआ! शब्द तो हुआ एक वायु तत्व और दूसरा पृथ्वी तत्व।

मैंने कहा कि पाँचवा तत्व तुम कह रहे हो कि आकाश है। तुमने खुद कहा कि नाशवान् है। मैंने पूछा कि कैसे पता चले तो तुमने कहा कि शब्द से। शब्द तो आकाश नहीं है। शब्द तो वायु है। वो चुप हो गया।

हमारी आत्मा पाँचों तत्वों से परे है। इनसे कोई नाता नहीं है। पाँचों तत्व नाशवान् हैं और हमारा शरीर इन तत्वों का बना है, पर आत्मा इन तत्वों की नहीं बनी है।

क्षिति जल पावक गगन समीरा। पाँच तत्व का अधम शरीरा॥

नानक देव भी कह रहे हैं—

पाँच तत्व का तन रच्यो, जानत संत सुजान।
इसमें कछु साँचो नहीं, यह नानक साँची मान॥

ये पाँचों तत्व नाशवान् हैं। हमारी आत्मा यह नहीं है। फिर यह क्या है? यह आत्मा कुछ ऐसी है जिसे हमारा मन, बुद्धि आदि नहीं समझ पा रहे हैं; इस देही का सामान नहीं समझ पा रहा है। इसलिए हरेक इंसान अज्ञान में है। इसका मतलब है कि आत्मा नहीं जानी जा रही है। इस आत्मा को कौन ढूँढ़ रहा है? आखिर कौन?? जो कह रहा है कि मुझे मुक्ति चाहिए, वो कौन है? शास्त्रों में आत्म-तत्व के लिए बोला गया। इसे मन, बुद्धि, चित्त आदि से नहीं जाना जा सकता है, यह कहा गया। फिर इस आत्मा को कैसे जानें? इसका मतलब है कि आत्म-तत्व बेहद गुम है। आत्म-तत्व बेहद गहराई में गुम है। फिर जो हम सब अनुभव कर रहे हैं, यह कौन है? जो यह व्यक्तित्व है, अपना आपा है, अपने को फील कर रहे हैं, यह कौन है? यह आत्मा नहीं है क्या? नहीं, यह कहीं से भी आत्मा नहीं है। क्योंकि इसमें अज्ञान है; इसमें कमियाँ हैं; यह अतृप्त भी है; इसमें लोभ भी है; इसमें माया भी है; इसमें अहंकार भी है; इसमें काम, क्रोध आदि भी है। पर आत्मा के लिए जो बोला गया, वो दुख-सुख से परे है। इस व्यक्तित्व में विकार भी आते हैं। यह क्या झमेला है? कहीं इनके बीच में आत्म-तत्व गुम है। इस आत्मा का कोई मित्र-शत्रु नहीं है। आत्मा का कभी जन्म नहीं होता है; आत्मा की कभी मृत्यु नहीं होती है। नहीं उपजे नहीं बिनशो कबहूँ, नहीं आवे नहीं जाय।

न तो कभी जन्म होता है, न मृत्यु होती है। न पुरानी होती है। फिर आखिर किसने ऐसी आत्मा को पकड़ा? क्यों पकड़ा है? आदमी किसी को पकड़ता है। कहीं चूहों को पकड़ता है, कहीं मछलियों को पकड़ता है। क्यों पकड़ता है? क्योंकि चूहे नुकसान करते हैं, इसलिए। मछली को माँसाहारी लोग खाते हैं, इसलिए पकड़ता है। इस तरह इस

आत्मा को किसने पकड़ा है ? क्या मतलब है ? क्या कारण है ? किसने इस आत्मा को जकड़ा हुआ है ? लगता है कि किसी खतरनाक ताकत ने आत्मा को जकड़ा है । उसे क्या ज़रूरत पड़ी ?

आपने घर में पशु रखे होंगे । आजकल वैज्ञानिक युग है ; ट्रैक्टर आदि चलते हैं । फिर भी कुछ लोग बैल रखते हैं । बैल को रखने वाले ने उसे जन्म नहीं दिया । फिर क्यों गुलाम बनाकर रखा हुआ है ? न तो उसने बैल को बनाया, न जन्म दिया । फिर क्यों रखा है ? केवल काम करवाने के लिए । यानी अपना काम करवाने के लिए बैल को रखा हुआ है । क्योंकि आप तेज़ दिमाग के हैं । उसे कैद करके रखा हुआ है । उसे भागने भी नहीं दे रहे हैं । वो भागना भी चाहता होगा । आखिर क्यों नहीं भागने दे रहे हैं आप ? अपने मतलब के लिए ।

कुछ ने गाय रखी होती है । बाँधकर रखी होती है । क्योंकि दूध चाहिए । वो बेचारी जाना चाहती होगी, पर वो नहीं जाने देते हैं । रखने वाले ने गाय को जन्म नहीं दिया । बनाया भी नहीं । पर रस्सों से अच्छी तरह से बाँधकर रखा है । वो कभी भाग जाती है तो ढूँढ़कर फिर पकड़ लाते हैं और बाँध देते हैं ।

बैल को कोई अपने शिकंजे से निकलने नहीं देता है । बैल की कोई पेश नहीं चलती है । वो अपने आप को छुड़ा नहीं पाता होगा । डंडे भी पड़ते होंगे बैल को । वो रस्सों से बँधा रहता है । इसी तरह आत्मा को भी एक मतलब के लिए मन ने बाँधा हुआ है । मन को क्या ज़रूरत पड़ी ? साँड को बाँधने की ज़रूरत पड़ी कि हल चलाना है । कुछ बैलगाड़ी में भी बैल को जोतते हैं ; कुछ कोल्हू में लगाते हैं । बहुत काम करवाते हैं बैल से । यू.पी. में बैलों से बड़े काम करवाए जाते हैं ।

आत्म-देव को भी निरंजन ने जकड़ा है । आदमी खुद हल नहीं चला सकता है, इसलिए बैल को जकड़ा है । इस तरह निरंजन और माया काम नहीं कर सकते हैं । आत्मा को लगा रखा है । आत्मा से शरीर का सारा काम करवा रहे हैं । इसलिए मैं कहता हूँ कि उतना ही कमाओ,

जितनी जरूरत है, अधिक नहीं। क्योंकि कमाने के लिए जो कर्म कर रहे हो, जो दिमाग लगा रहे हो, उनमें भी आत्मा की उर्जा लग रही है, सुरति लग रही है। जिस निरंजन ने आत्मदेव को जकड़ा हुआ है, उसी के कार्य में शरीर को इतने शौक से क्यों लगाए हुए हो! शरीर के लिए उतना ही कर्म करो, जितना आवश्यक है, बाकी समय आत्मदेव के लिए ध्यान-भजन में लगाओ, आत्मदेव के नज़दीक पहुँचने में लगाओ। शरीर से काम लेना है, पर निरंजन के काम न लगाकर इसे अपनी आत्मा के कल्याण में लगाओ, गुरुसेवा करके दूसरों की आत्मा के भी कल्याण में लगाओ, क्योंकि यह परम-पुरुष के कार्य में सहयोग होगा। शरीर के धर्म में अधिक मत उलझो; आत्मा की ओर चलो। आत्मा का शरीर से नाता ही क्या है! यह मन-माया का खेल है। आत्मा कभी चाहती है कि निकलूँ, पर नहीं निकल पाती है। क़तई बैल को कोई नहीं छोड़ना चाहता है। हालांकि बैल को जन्म नहीं दिया; बनाया नहीं। अच्छा, बैल आदमी के काबू में आया कैसे? पहले-पहले ऐसे आया होगा कि 84 लाख में यह भी था। इसे इंसान ने देखा होगा और पकड़ लिया होगा। गाय को भी पकड़ा होगा। जब कुछ बच्चे हुए होंगे तो दूसरे ने कहा होगा कि मुझे भी एक दो। फिर उसने किसी चीज़ के बदले वो दिया होगा।

हमारे गाँव में हाथियों ने दो आदमियों को मार दिया। वो दिन में नहीं आते हैं। वो रात के समय घरों में घुसकर खाने की चीज़ें लेते हैं और यदि आदमी मिल जाए तो मार देते हैं। तो इंसान उसे पकड़ लेता है मतलब के लिए। अभी भी जंगलों में बड़े हाथी हैं। इंसान कैसे पकड़ता है? बड़ी तरक्रीब से पकड़ता है। जैसा कि पहले भी बताया कि जंगल में एक पेड़ के कुछ दूर सामने एक खड्डा खोदते हैं और उसे छोटी-छोटी लकड़ियों और घास-फूस के साथ ढक देते हैं। पेड़ के साथ एक हथिनी को बाँध देते हैं। हाथी हथिनी को देखकर आता है। उसे कुछ होश नहीं रहता है। वो सीधा उस खड्डे में गिर पड़ता है। खड्डा ज़्यादा गहरा नहीं होता है। 10-12 दिन वहाँ रहने दिया जाता है उसे। ऐसे में कमज़ोर हो

जाता है। फिर पेड़ के साथ रस्सी के सहारे से महावत नीचे जाता है। पीछे कुछ रस्सी को पकड़े रखते हैं। वो हाथी को धीरे-धीरे पुचकारता है। उसे रोटी भी देता है। हाथी मान जाता है कि यह भला करने के लिए आया। नहीं, भला नहीं करने आया। इसी तरह से निरंजन अवतार धारण करके आता है तो दुनिया सोचती है कि यही परमात्मा है, हमें बचाने आया है। तो धीरे-धीरे हाथी को पालतू बना देते हैं। फिर उसे खड्डे में से बाहर निकालते हैं। क्यों? हाथी को क्यों पकड़ा? एक दिन मैं असम साइड में जा रहा था तो देखा कि हाथी रेल के डिब्बे में लकड़ी चढ़ा रहे थे। बड़ा काम करते हैं हाथी। बड़ा बुद्धिमान भी है हाथी। हाथों से धकेल रहे थे। फिर सूँढ़ से धकेलकर ऊपर कर रहे थे। फिर क्या करते हैं हाथी से? एक कहावत भी है कि 'जिंदा हाथी लाख का और मरा सवा लाख का।' पर आजकल एक लाख से कुछ नहीं बनता है। मैं रखबंधू की चारदीवारी करवा रहा था तो 20 लाख की चारदीवारी बनाई। छोटे आश्रम की चारदीवारी में 5-6 लाख लग जाते हैं। तो हाथी जिंदा लाख का; मरा तो सवा लाख का। पर आजकल 5-6 लाख है हाथी की कीमत। मेरे पास महा घटीया (मूर्ख) लोग भी आते हैं और राजे लोग भी आते हैं। अभी काफ़ी बुद्धिजीवी मेरे पास आ रहे हैं। एक हाथी का व्यापारी आया। उसने कहा कि यदि आपकी आज्ञा हो तो आपके लिए हाथी लाऊँ? मैंने पूछा कि हाथी के व्यापारी हो क्या? कहा—हाँ। आसाम से लाकर यहाँ पर बेचता हूँ।

अमृतसर में घोड़े बिकते हैं। वहाँ घोड़ा-मण्डी है। अच्छे लंबे-चौड़े घोड़े हैं। पहले ऊधर पंजाब से जाते थे पशु, पर अब वहाँ से पंजाब में आ रहे हैं। इस तरह अन्य पशुओं की तरह हाथी की भी बिक्री होती है। हाथियों से बड़े काम लिये जाते हैं। पहले तो राजा लोग सवारी भी करते थे। आजकल झांकियों आदि में, भीख माँगने आदि के लिए हाथी का इस्तेमाल करते हैं। मंदिरों, देवस्थानों आदि में हाथियों का प्रयोग होता है। तो मैंने उससे पूछा कि क्या कीमत है हाथी की? कहा—पाँच से

छः लाख। वो बोला कि हथिनी की कीमत 5 से 7 लाख है। हथिनी मँहगी है। मैंने पूछा कि क्यों है मँहगी? कहा कि बच्चा देती है। कुछ साल में बड़ा हो जाता है। मैं छोटी हथिनियों को लाता हूँ, अपने बगीचे में पत्तियाँ खिलाकर जवान करता हूँ। वो खुद खा लेती हैं। ज्यादा खर्चा भी नहीं है। फिर वे बच्चे देती हैं। तब मैं उन्हें बेचता हूँ।

हाथी के चमड़े, दाँतों आदि से बड़े काम होते हैं। हाथी के दाँतों से चूड़ियाँ बनती हैं, जो शादियों आदि अवसरों पर पहनते हैं। तो उसने कहा कि बड़ी कीमती बिकती हैं।

जिस बूढ़ी गाय को आप छोड़ते हैं, उसे कसाई मारकर 20 हजार में बेचता है। गाय में बड़ी चर्बी है। मैं राय दूँगा कि आपने गाय पाली, उसका दूध पिया और फिर बूढ़ा होने पर छोड़ रहे हो तो यह नाइंसाफी कर रहे हो, बड़ा पाप कर रहे हो।

जिसका पीजिए दूध, तिसको कहिये माय ॥

मैं अपनी गाइयों को बड़ी हिफाजत से रखता हूँ। तो इस तरह पशुओं में मादा की बड़ी कीमत है। केवल इंसानों ने स्त्री की कीमत को नहीं समझा है। इंसान स्त्री को कमजोर और हलका मान रहे हैं। हाथियों में हाथी से ज्यादा कीमत हथिनी की है। बैल की इतनी कीमत नहीं है, जितनी कीमत गाय की है। भैंस की कीमत के आगे साँड कुछ भी नहीं है। यदि गाय की बछड़ी हो तो लोग बड़े खुश होते हैं और यदि बछड़ा हो जाए तो परेशान हो जाते हैं; उसे भगा देते हैं। दूसरी ओर घर में लड़की पैदा हो तो परेशान हो जाते हैं।

एक नामी ने मुझे घोड़ी दी और रेहड़ा दिया। मैंने कहा कि ले जा, मैंने क्या करना है रेहड़ा और घोड़ी! वो बोला—गुरु जी, मैंने सुक्खन की थी कि जब ट्रैक्टर लूँगा तो घोड़ी और रेहड़ा आपको दूँगा। मैंने ट्रैक्टर ले लिया है, इसलिए आपको रेहड़ा और घोड़ी दे रहा हूँ। वो बोला कि इस घोड़ी की कीमत 35 हजार रुपये है। घोड़े की इतनी कीमत नहीं है। यह घोड़ी आपके काम आयेगी। शादियों में एक बार का 5 हजार रुपये

लेते हैं। मैंने कहा कि मैंने शादियों में तो भेजना नहीं है। यह काम तो करना नहीं है। वो बोला कि और काम भी आयेगी; आप रख लो। वो बोला कि इससे किसी तरफ से घाटा नहीं है। तो लड़कों ने रेहड़ा तो तोड़ दिया और घोड़ी का बड़ा ध्यान रखा। वो घोड़ी बड़ी तगड़ी थी। उसने घोड़े को जन्म दिया। वो भी बड़ा तगड़ा था। एक दिन एक लड़का उससे खेल रहा था तो घोड़ा गिर पड़ा और उसकी गर्दन मुड़ गयी। वो वहीं मर गया। फिर घोड़ी ने दूसरे बच्चे, घोड़ी को जन्म दिया। फिर उसने आगे घोड़े को जन्म दिया। लोगों ने कहा कि यह तुर्की घोड़ा है। मैंने उसका नाम शेरू रखा है। ...तो इंसान को छोड़कर हर जगह मादा की कीमत ज्यादा है।

इंसान ने हाथी को इसलिए रखा कि उससे काम करवाना है; कुछ मतलब है। मन ने इसलिए इस आत्मा को बाँधा हुआ है कि उससे अपने काम करवाने हैं, दुनिया को चलाना है। रूह को मन ने बाँधकर रखा है। क्यों बाँधा? जैसे इंसान ने अपने मतलब के लिए घोड़े को बाँधा है, गाय को बाँधा है।

मन ने आत्मा को किस फँदे में बाँधा है? मेरा बेटा, मेरा भाई आदि के फँदों में आत्मा को बाँध दिया गया है। रूह अपने को नहीं जान पा रही है। विरोधी ताकतें रूह को बाँधे हुए हैं। आत्मदेव बुरे बंधनों में है। इसलिए साहिब बार-बार कह रहे हैं—

बहु बंधन ते बाँधिया, एक विचारा जीव।

जिसने बाँधा है, बड़े यत्न से बाँधा है। अब बैल को उसका मालिक नहीं जाने देना चाहता है। भैंसे आदि किसी को नहीं जाने दे रहा है कोई। सब अपने-अपने स्वार्थों के लिए अपने-अपने पशुओं को अच्छी तरह से बाँधकर रखे हुए हैं। इस तरह—

बहु बंधन ते बाँधिया, एक विचारा जीव।

जीव विचारा क्या करे, जो न छुड़ावे पीव॥

आत्मदेव को बहुत बंधनों में कैद किया गया है। इसकी पेश नहीं

चल रही है। ज़ालिम मन के बंधन से यह निकल नहीं पा रहा है। इससे निरंजन पूरे-पूरे काम करवा रहा है। जो भी काम कर रहे हैं, आपका कोई काम नहीं है। जो घर बनाया, यह निरंजन का काम है, आत्मा का नहीं। फ़कीरचंद के पास बैल हैं। वो बैल से जो भी काम करवाता होगा, वो अपने वाला ही करवाता होगा। उस काम से बैल को कोई मतलब नहीं होगा। बैल का कोई काम नहीं है। इस तरह—

जीव पड़ा बहु लूट में, नहीं कछु लेन न देन॥

निरंजन जो भी करवा रहा है, आत्मा का उससे कोई वास्ता नहीं है। आत्मा को घर की ज़रूरत ही नहीं है, पर निरंजन उससे घर बनवा रहा है। शादी करवा रहा है। शादी से आत्मा को क्या लेना! आत्मा तो स्त्री-पुरुष कुछ भी नहीं है। खेतीबाड़ी करवाई जा रही है। खेतीबाड़ी से आत्मा का क्या वास्ता! आत्मा को भूख-प्यास नहीं लगती है। तभी तो साहिब बार-बार समझा रहे हैं—

मन ही सरूपी देव निरंजन, तोहि रहा भरमाई।

हे हंसा तू अमर लोक का, पड़ा काल बस आई॥

तो फ़कीरचंद ने बैल को नहीं छोड़ा है। उसे रोटी भी खिलाता होगा ताकि जिंदा रहे और उसका (फ़कीरचंद का) काम करता रहे। उसे जो रोटी खिला रहा होगा, वो भी अपने मतलब के लिए। निरंजन ने भी शादी, इंद्रियों आदि का मज़ा इसलिए दिया ताकि जिंदा रहे और उसका काम करता रहे।

अपनी ताक़त से जीव नहीं छूट सकता है। बैल कभी-कभी भागने की भी कोशिश करता होगा, पर नहीं भाग पाता होगा, क्योंकि मजबूत रस्सों से बाँधकर रखा है। यदि कहीं भाग भी जाए तो फिर फ़कीरचंद उसे ढूँढ़कर पकड़ लाता होगा। इस आत्मा के साथ भी कुछ ऐसा ही हो रहा है। निरंजन एक भी आत्मा को छूटकर भागने नहीं देता। इसलिए कोई भी अपनी ताक़त से इसके फँदे से आज़ाद नहीं हो सकता है। कोई शुभ कर्म करके निरंजन के फँदे से छूटने की कोशिश कर रहा

है। कर्म तो निरंजन के बनाए हुए हैं; फिर इससे कैसे होगा आजाद! कोई तीर्थ आदि करके छूटना चाहता है। मेरा सवाल है कि जिन फार्मूलों से हम अपनी आत्मा का कल्याण चाहते हैं, वो अपनी आत्मा का कल्याण कर चुके हैं क्या!!

साहिब कह रहे हैं कि इन साधनों से कुछ नहीं होगा। इनमें से कुछ तो इंसान ने बनाई हैं और कुछ निरंजन का खेल है। कोई कह रहा है कि तपस्या से होगा। यह भी निरंजन की सीमा में है।

... तो वापिस शरीर के मजे की तरफ चलते हैं। वास्तव में बाहर में कहीं आनन्द नहीं है। सब माया का खेल है, जिसे समझ न सकने के कारण आत्मा बार-बार जन्म-मरण की सजा भोग रहा है। जो मजा आया वो आत्मा का आनन्द ही था। केवल वो बाहर प्रतीत हुआ। यह प्रतीति पूर्ण रूप से नहीं थी, इसलिए इसे मजा कहा, आनन्द नहीं।

किसी को कहीं से मजा आ रहा है तो किसी को कहीं से। इंसान चाहता क्या है—सुख। गुलाबजामुन, रसगुल्ला, बर्फी में मजा ढूँढ़ता है, पर वो सदैव नहीं मिलता। कभी कभी वहाँ से भी ऊब जाता है और किसी दूसरी चीज में मजा आने लगता है। इसका मतलब है कि गुलाबजामुन का मजा सदा के लिए नहीं है। फिर गुलाबजामुन में मजा नहीं हो सकता। अगर होता तो सदैव मिलना चाहिए था। संतुष्टि नहीं मिली, तभी तो दूसरी चीज में मजा ढूँढ़ने लगा। इस तरह संगीत का मजा लेता है बंदा, लेकिन कभी नहीं भी आता मजा वहाँ से, तो कहते हैं कि बंद करो, सिर दर्द हो रहा है या बहुत सुन लिया यह संगीत, कुछ और सुनाओ। यानी संगीत में भी मजा नहीं है। कभी बिरह संगीत में मजा आता है तो कभी वीर रस का संचार करने वाले संगीत में। एक ही में हर समय मजा नहीं आता। तो दृश्य भी कभी कोई सुन्दर लगता है तो कभी कोई। अधिक क्या कहें, अपनी स्त्री को छोड़ दूसरे की स्त्री की तरफ रुझान क्यों होता है। यानी एक में ही सदैव मजा नहीं मिला। संतुष्टि नहीं हुई, तो सोचा कि दूसरी में होगा। नहीं, यह सब इसलिए हुआ क्योंकि मजा किसी में

नहीं है, मजा तो धुन में है, मजा तो आत्मा में है। बाहर के मजे से संतुष्टि क्यों नहीं हुई? क्योंकि आत्मा के मूल में आनन्द ही आनन्द है। यही आनन्द बाहर अशुद्ध रूप से प्रतीत हुआ। चोर को चोरी में आता है, शराबी को शराब में। कातिल को क्रत्तल करने में मजा आता है। जब आत्मा अपने को देख लेगी तो फिर संसार का कोई भी मजा इसे आकर्षित नहीं कर पायेगा। फिर ज्ञान हो जायेगा कि मजा तो भीतर है, बाहर केवल प्रतीत हो रहा है।

दुनिया में जो मजा है, वो केवल प्रतीत होता है.....होता नहीं है। जैसे स्वप्न में रसगुल्ला खाया, स्वप्न में राजा बन गये तो यह प्रतीत हुआ, था नहीं। दुनिया की जिन जिन चीजों से मजा आ रहा है, केवल प्रतीत मात्र है। प्रतीत हो रहा है कि मजा है इसमें, पर वास्तव में मजा आत्मा का है। यदि यह अपने में मजा ढूँढ़ने लगे तो फिर कहना ही क्या! यह काम गुरु के ध्यान से ही संभव है, इसलिए गुरु-चरणों में चित्त लगाया तो मजा-ही-मजा है। गुरु की आत्मा चेतन है। जैसे ही आपने ध्यान किया तो आपकी आत्मा भी चेतन होती जायेगी और वो मजा मिलने लगेगा जो आत्मा का है, जो सच्चा आनन्द है।

आदमी को मजा लेना नहीं आया। बचपन में मजा माँ में प्रतीत हुआ। माँ नहीं मिली तो रोना शुरू.....। फिर बड़ा हुआ तो खेल में प्रतीत होने लगा मजा। अच्छा, अब माँ में क्यों नहीं रहा? क्योंकि माँ में था ही नहीं मजा। माँ ने आवाज लगायी—बेटा, आ जा, बहुत खेल लिया। तो कहा—बाद में आता हूँ.....थोड़ा और खेलकर। वही माँ है, जिसे पल-भर भी नहीं छोड़ना चाहता था, पर अब यह क्या हो गया! तो फिर थोड़ा बड़ा हुआ तो पढ़ाई में लग गया, रात को उठ-उठकर पढ़ने लगा। लड़के आए, कहा कि चलो खेलने। कहा कि नहीं, तुम जाओ, मुझे पढ़ाई करनी है। जिस खेल के लिए माँ को भी टुकड़ा दिया, उसमें भी मजा नहीं रहा। क्योंकि धुन पढ़ाई में लग गयी। धुन में ही है मजा। जहाँ भी धुन

लगी, वहीं से मजा आयेगा। पर वो मजा शुद्ध नहीं होगा। तो फिर पैसे में प्रतीत हुआ मजा।

रेगिस्तान के जल की तरह केवल प्रतीत हुआ, था नहीं। दूर चमकती हुई रेत हिरण को जल प्रतीत हुई। जल नहीं था, केवल प्रतीत हुआ। इस तरह दुनिया में मजा है नहीं, प्रतीत होता है कहीं कहीं। 'वस्तु कहीं ढूँढ़े कहीं।' वाली बात है यह भी। मजा आत्मा में है, ढूँढ़ बाहर रहा है। एक आदमी नदी पर स्नान करने गया। पेड़ के नीचे कपड़े रखे और जल की ओर निहारा। जल में उसे एक हार दीख पड़ा, मोतियों का। उसने गोता लगाया, पर हार हाथ नहीं आया। शायद भूल हो गयी, सोचकर बाहर आया। फिर जल शांत हुआ तो हार दीख पड़ा। फिर कूदा, पर फिर खाली हाथ लौटना पड़ा। पानी में जाने कहाँ खो गया हार। फिर बाहर आया, फिर कूदा। अंत में हार कर कपड़े पहने और वापिस चल दिया। रास्ते में एक महात्मा मिल गये, उन्हें पकड़कर ले आया, कहा— ऐसे ऐसे बात है। महात्मा ने पानी में देखा तो जान गये, यह तो केवल प्रतीत हो रहा है यहाँ पर। फिर उन्होंने ऊपर देखा तो पेड़ पर हार लटक रहा था। आदमी ने भी ऊपर देखा तो बड़ा खुश हुआ, पेड़ पर चढ़ा और ले आया हार।

तो इस तरह कोई सद्गुरु रूपी भेदी साथ होगा तो बतायेगा कि मजा कहाँ से आ रहा है। केवल बतायेगा ही नहीं, उस मजे के साथ जोड़ भी देगा।

तो मनुष्य को बाहर प्रतीत हो रहा है मजा। फिर स्त्री में मजा प्रतीत हुआ और फिर बच्चे में। अब यदि स्त्री या बच्चा बीमार पड़ जाए तो उसके इलाज के लिए लाखों रुपये भी कुरबान हैं। वह स्त्री जब बूढ़ी हुई तो मजा निकल जाता है उसमें से भी। पुत्र कुपुत्र निकला तो मजा निकल गया उसमें से भी। नहीं होता तो अच्छा था। अरे, पहले उसी में तो ढूँढ़ रहे थे मजा। बहुत मजा ले रहे थे उसकी तोतली बोली सुनकर, उसकी शरारतें देखकर। अब कहाँ चला गया वो मजा।

यह क्या हाल हो गया! धुन भटक गयी बाहर। बाहर का मजा तो कष्ट ही देगा। जिन जिन चीजों में मजा ढूँढ़ा, या तो वो चीजें समाप्त हो गयीं या फिर उनसे अब मजा नहीं मिल रहा। बूढ़े हो गये तो मजे समाप्त हो गये। लाल ग्रंथियों की ताकत खत्म हो गयी तो खाने का मजा नहीं रहा। अब आँखें भी कमजोर पड़ गयीं तो दृश्य का मजा भी नहीं रहा। कानों ने सुनना कम कर दिया तो संगीत का मजा भी नहीं मिल रहा। वीर्य बनना बंद हो गया तो विषय में भी मजा नहीं रहा। सूँघने की शक्ति कम हो गयी तो खुशबू का मजा भी समाप्त हो गया। अब धुन बेचारी क्या करे, कहाँ से मजा ले!

इस तरह से कुछ अंदर का भी मजा ले रहे हैं। पर आत्मानन्द इन दोनों से परे है। बाहरी मजे के धोखे में जीव क्यों फँसा?

इसमें मन की बहुत चालाकी थी। मन ने प्रतीत करवाया कि यह आनन्द वहाँ से मिला। इसे आत्मा समझ नहीं पा रही है। यह आनन्द नहीं था। था तो आत्मा का ही, पर पूर्ण रूप से नहीं था; इसमें माया मिली थी; इसमें मन मिला था, इसलिए यह केवल मजा था, आनन्द नहीं था। जब तक आत्मा मन-माया में है, पूर्ण आनन्द को नहीं पा सकती है। यही कारण है कि योगी भी जो आनन्द ले रहे हैं, वो पूर्ण आनन्द न होने के कारण मजा ही कहा जायेगा।

योगी लोग विभिन्न मुद्राओं द्वारा ध्यान करके बड़े मजे लेते हैं। कोई प्रकाश को अंदर में देखता है, कोई ज्योति को देखता है। कोई कहता है कि उसकी सुरति चढ़ी। सुरति का चढ़ना और उतरना भी तो माया का ही खेल है। साहिब कह रहे हैं—

ना कहूँ गया न काहूँ आया ॥

यह आत्मा अपने में नहीं आ रही है। तो योगी जो आनन्द ले रहा है, वो सूक्ष्म इंद्रियों का आनन्द है। इसलिए वो भी मजा है। पर वो स्थूल इंद्रियों के मजे से बहुत ऊपर है। कुछ धुनें सुनकर आनन्द महसूस कर रहे हैं।

जब घृणा के शब्द सुनते हैं तो घृणा आती है। जब कामुक शब्दों को सुनते हैं तो काम भावना भी आती है। ऐसे ही धुनें सुनने पर योगी को आनन्द आता है। ब्रह्मानन्द जी कह रहे हैं—

अनहद की धुन प्यारी साधो अनहद की धुन प्यारी रे ॥
आसन पद्म लगा कर, कर से मूँद कान की बारी रे।
झीनी धुन में सुरति लगाओ, होत नाद झनकारी रे ॥
पहले पहले रिलमिल बाजे, पीछे न्यारी न्यारी रे।
घंटा शंख बंसरी वीणा ताल मृदंग नगारी रे ॥
दिन दिन सुनत नाद जब निकसे, काया कंपत शरीरे।
अमृत बूँद झरे मुख माहीं, योगी जन सुखकारी रे ॥
तन की सुध सब भूल जाते हैं, घट में होय उजियारी रे।
ब्रह्मानन्द लीन मन होवे, समझो बात हमारी रे ॥

‘अमृत बूँद झरे मुख माहीं, योगी जन सुखकारी रे ॥’ कुछ कहते हैं कि अमृत पान करते हैं। यह सब होता है। पर यह सब आनन्द नहीं है, मज्जा है। यह सब माया का खेल है। यह सब काल का जाल है। साहिब कह रहे हैं; बड़े सुंदर ढंग से कह रहे हैं—

मेरी नजर में मोती आया है।
करिके कृपा दयानिधि सतगुरु, घट के बीच लखाया है ॥
कोई कहे हलका कोई कहे भारी, सब जग भर्म भुलाया है।
ब्रह्मा विष्णु महेश्वर हारे, कोई पार न पाया है ॥
शारद शेष सुरेश गणेशहु, विविध जासु गुण गाया है।
नेति नेति कहि महिमा बरनत, बेदहुँ मन सकुचाया है ॥
द्विदल चतुर घट अष्ट द्वादश, सहस्र कमल बिच काया है।
ताके ऊपर आप बिराजै, अद्भुत रूप धराया है ॥
है तिल के झिलमिल तिल भीतर, ता तिल बीच छिपाया है।
तिनका आड़ पहाड़ सी भासै, परम पुरुष की छाया है ॥
अनहद की धुन भँवर गुफा में, अति घनघोर मचाया है।

बाजे बजें अनेक भांति के, सुनि के मन ललचाया है ॥
 पुरुष अनामी सबका स्वामी, रचि निज पिण्ड समाया है ।
 ताकि नकल देखि माया ने, यह ब्रह्माण्ड बनाया है ॥
 यह सब काल जाल को फँदा, मन कल्पित ठहराया है ।
 कहहिं कबीर सत्यपद सद्गुरु, न्यारा करि दर्शाया है ॥

समझो, क्या कह रहे हैं। 'यह सब काल जाल को फँदा, मन कल्पित ठहराया है।' यानी ये अनहद धुनें काल का जाल है जबकि सत्यपद इससे परे है। उस स्थिति में सद्गुरु ही पहुँचा सकता है।

आनन्द तो वो है, जिसमें फिर गिरावट नहीं है; जो अटल है; जिसे पाने के बाद फिर पतित नहीं होना है; जिसे पाने के बाद फिर काम, क्रोध आदि में नहीं फँसना है। वो आत्मानन्द है, वो परमात्मानन्द है। आत्मा में ही तो परमात्मा का वास है। जब आत्मा अपने को जान लेती है तो जिस आनन्द की प्राप्ति होती है, वो सच्चा आनन्द है। जब वो साहिब में खो जाती है तो बात ही कुछ और हो जाती है। फिर वो स्थिति वर्णन से परे हो जाती है। वो संतों की स्थिति होती है। पर जब आत्मा अपने को जान लेती है, अपने को देख लेती है, तो उसे ही सच्चा आनन्द कहा जाता है।

धुन को ठीक जगह नहीं लगाया, इसलिए यह हाल हुआ। यदि इस धुन को गुरु चरणों में लगा दें तो मजा ही मजा है। गुरु की आत्मा चेतन है, उसमें धुन लगाने से आपकी आत्म भी चेतन हो जायेगी। फिर आत्मा का ऐसा मजा मिलेगा, जो कभी समाप्त नहीं होगा। क्योंकि आत्मा परमानन्दमयी है, इसमें कहीं से आनन्द को आहुत नहीं करना है, लाना नहीं है। यह स्वयं ही आनन्द से लबालब है।

वृहदारण्यक उपनिषद् में याज्ञवल्क्य जी मैत्रेयी से कहते हैं कि पति के लिए पति प्यारा नहीं लगता, अपने लिए लगता है, पत्नी के लिए पत्नी प्यारी नहीं लगती, अपने लिए लगती है, पुत्र के लिए पुत्र प्यारा नहीं लगता, अपने लिए लगता है, ब्रह्म के लिए ब्रह्म

प्यारा नहीं लगता, अपने लिए लगता है। सबके लिए सब प्यारे नहीं लगते, अपने लिए ही सब प्यारे लगते हैं। तो जिस आत्मा के लिए सब इतने प्यारे लगते हैं, वो आत्मा ही प्यारी है। इसलिए तू उसी को देख, उसी को सुन, उसी को जान।

फिर एक और बात है कि—

पराधीन सुख सपनेहु नाहिं ॥

जो बंधन में है, वो कभी भी सुखी नहीं हो सकता है। आत्मदेव बंधन में है। आत्मदेव बड़ी मुश्किल में है। दुनिया के कुछ लोग कहेंगे कि हमें तो भाई कोई मुश्किल नहीं है, हम तो मौज-मस्ती में हैं, हम तो बड़े आराम में हैं, हमारे पास कोठी, बंगला सब कुछ है।

**कोठी बंगला कारों की, कमी नहीं जिनके पास में।
वो भी यूँ कहते हैं, हम बड़े दुखी संसार में ॥**

संसार को दुखों का घर कहा। जेल में कोई कहे कि यहाँ बड़े मजे में हूँ तो उसकी बड़ी बेवकूफी होगी। क्योंकि सबसे बड़ा आनन्द है—आज़ादी! स्वतंत्रता! वो ही उसकी वहाँ पर बँधी है। इसलिए चाहे कितना भी अच्छा भोजन वहाँ मिले, कितनी भी सुविधाएँ मिलें, पर वो कैद में है। इसलिए वहाँ सुख नहीं है। ऐसे ही आत्मा यहाँ कैद में है, इसलिए आत्मा को भी यहाँ सुख नहीं है। आत्मा यहाँ बंधन में तो है ही है। आत्मा यहाँ दुखी है। अगर हम देखें कि कैसी है आत्मा तो आत्मा बड़ी निराली है। आप हम सब देख रहे हैं कि अपने पूर्वजों की शक्ल, गुण, जीन्स आदि आपमें हैं। आप अपने में अपने पिता को देख रहे होंगे। आप अपने बच्चों में अपना रूप देख रहे होंगे। स्वाभाविक है। आपके बच्चों में आपके गुण आए। यह आत्मा परमात्मा का अंश है, इसलिए इस आत्मा में उसकी वृत्तियाँ हैं। इस आत्मा में बड़ा जलवा है। यह आत्मा साधारण नहीं है। जैसे आपके बच्चों में आपके गुण हैं, आपके जीन्स हैं, आत्मा में भी परमात्मा के गुण आदि इसी प्रकार से हैं। आत्मा बड़ी निराली है। परमात्मा आनन्दमय है तो यह भी आनन्दमय है, परमात्मा

शक्तिमान है तो यह भी शक्तिमान है, परमात्मा निर्मल है तो यह आत्मा भी निर्मल है। क्योंकि सिद्धांत भी यही कह रहा है कि जो भी अंश है, वो अंशी की वृत्ति पर है। बिल्कुल भी उसके इर्द-गिर्द है। यह इसलिए अमर है, क्योंकि ईश्वर भी अविनाशी है। ईश्वर निर्लेप है तो आत्मा भी निर्लेप है। ईश्वर नित्य है तो यह भी नित्य है। किसी देश, काल में परमात्मा नष्ट नहीं होता है तो यह भी नहीं होती है। उसमें जीर्णता नहीं है तो इसमें भी नहीं है, यह भी जीर्ण नहीं होती है। आत्मा जब उसका अंश है तो ये वृत्तियाँ, ये गुण, ये सब चीजें इसके अन्दर भी हैं। पर जब हम इस आत्मा को शरीर के अन्दर देख रहे हैं तो यह बड़ी दुर्दशा में दिखाई दे रही है। आत्मा शरीर को धारण करने के बाद अपने पूरे नूर में नहीं है। यहाँ आत्मा काफ़ी परेशान नज़र आ रही है।

जब हम इस दुनिया की तरफ देखते हैं तो आत्मदेव इस संसार में बंधन में मिल रहा है। मन और माया के अधीन आ जाने से किसी में भी आत्मीयता, आत्मनिष्ठता, आत्मा का व्यवहार नज़र नहीं आ रहा है। आत्मा को ऐसा बाँध दिया है कि पता ही नहीं चल रहा है। जब भी व्यक्ति को देखते हैं तो व्यक्ति में आत्मा का दर्शन नहीं हो रहा है। कहाँ गयी है आत्मा? इसी में तो है। पर दिख नहीं रही है। बाँधा इतनी बुरी तरह से है कि आत्मा का स्वरूप ही अपने अन्दर में अनुभव नहीं कर पा रहे हैं। वाह भाई, बाँधने वाली ताक़त बड़ी शातिर है। बहुत बुरी तरह से इस आत्मा को बाँधा गया है। बाँधने वाली ताक़त बड़ी ताक़तवर है। इस आत्मा का व्यवहार, आत्मनिष्ठता दिख नहीं रही है।

सब जानते भी हैं कि रिश्ते-नाते झूठे हैं, पर फिर भी सच मानकर चल रहे हैं। सब जानते हैं कि यहाँ से कुछ भी लेकर नहीं जाना है, पर फिर भी बहुत साजो-सामान इकट्ठा करने में लगे हुए हैं। यानी कोई ताक़त भ्रमित कर रही है। न चाहते हुए भी बरबस दुनियावी चीज़ों की ओर खींच ले जा रही है। शरीर नाशवान् है, यह सब जानते हैं, पर फिर भी सब शरीर के लिए ही जिए जा रहे हैं।

कभी तगड़े आदमी को देखकर भयभीत होकर उसे इज्जत देने लगते हैं; कभी कमजोर को देखकर भयभीत करने लगते हैं; कभी अच्छे कपड़े वालों को इज्जत देने लगते हैं; कभी बड़ी-बड़ी कोठियों वालों को देखते हैं तो उन्हें इज्जत देने लगते हैं। यानी हड्डी-माँस को ही तो इज्जत दे रहे हैं न। यदि कोई कमजोर है, शरीर पर कम माँस है तो उसका अपमान करने लगते हैं। कपड़े आदि देखकर इज्जत दे रहे हैं तो समझो कि कपड़ों की इज्जत कर रहे हैं। कोठी देखकर इज्जत कर रहे हैं तो समझो कि ईंट, पत्थर आदि की इज्जत कर रहे हैं। कभी कोई दुबला-पतला है, नाक-नक्शा ठीक नहीं है तो अपमान करने लगते हैं। यानी कोई आत्मा को नहीं देख रहा है न! सभी शारीरिक जीवन ही जी रहे हैं।

शेरशाह सूरी 18 साल भारत का बादशाह रहा। वो बहुत बहादुर था। हिमायूँ को उसने हराया। वो जायसी की रचना पढ़ता था। एक बार उसने अपने मंत्री से कहा कि मैं जायसी के दर्शन करना चाहता हूँ। उसे शाही मेहमान की तरह यहाँ लाओ। मंत्री ने कहा कि उसका पता मालूम नहीं है, इसलिए थोड़ा समय दीजिए। राजा ने कहा—ठीक है। मंत्री चला गया। काफी दिन के बाद वो राजदरबार में आया। उसके साथ में एक आदमी था। वो बहुत की कुरूप था। वो एक टाँग से लँगड़ा था; एक हाथ से लूला था; पूरे शरीर पर चेचक के बड़े-2 दाग थे। राजा ने उसे देखा तो घृणा आ गयी। उसने कहा—मंत्रीवर! वहीं रुक जाओ। इतना कुरूप इंसान मैंने ज़िंदगी में नहीं देखा। मंत्री ने कहा—जहाँपना, आप जायसी हैं। राजा ने व्यंग्यात्मक मुस्कान से जायसी की तरफ देखा कि इतनी सुंदर रचनाएँ लिखने वाला इतना कुरूप! जायसी समझ गया। वो निडर था; धीरे-धीरे कदम भरता हुआ राजा के तख्त के पास आया; कहा—अरे राजन्! तुम किस पर हँस रहे हो? मुझपर या मुझे बनाने वाले पर? यह शरीर तो ईश्वर की नियामत है। याद रख, मौत के बाद वो ईश्वर हमसे हमारे कर्मों के अनुसार ही बात करता है। राजा को समझ में आ गया। उसे अपनी भूल समझ आई। वो सिंहासन से उतरा और जायसी के चरणों पर गिर पड़ा।

तो कहने का भाव है कि इंसान आत्मा को देखकर व्यवहार नहीं करता है। इसलिए सब अधर्म की तरफ चल रहे हैं। सब नौकरी के लिए परेशान हैं, एक-दूसरे को देखकर ईर्ष्या कर रहे हैं। मैं कहीं से भी परेशान नहीं होता हूँ। किसी बाबा, महात्मा को देखकर, किसी के वैभव को देखकर ईर्ष्या नहीं करता हूँ। आपको भी हिदायत देता हूँ। यह दो कौड़ी का बना देगी आपको। जब भी इंसान ईर्ष्या करता है तो बड़ा छोटा हो जाता है। ऐसे में वो दोष बोलने लगता है। जब नहीं है तो भी झूठ बोलने लगता है, धूर्त बन जाता है। अशांति आ जाती है, भय आ जाता है। इसके निदान के लिए कितना सुंदर कहा—

जो तुझको काँटे बोवे, उसको बो तू फूल।
उसको उसके काँटे मिलेंगे, तुझको तेरे फूल॥

गुस्सा करीब-करीब सब करते हैं। इससे बड़ा नुकसान है। गुस्से के समय दिमाग की कोशिकाएँ ज़हरीला पदार्थ निकालती हैं। वो हृदय और पेट में पहुँचता है। उसकी सेहत कभी ठीक नहीं रह सकती है। इससे बचो। ध्यान ही न दो। गुस्से की शुरूआत अक्ल से है और इसका अंत बड़ा खतरनाक होता है। शुरूआत ऐसे होती है कि ऐसे करना चाहिए था, वैसे करना चाहिए था। पर अंत में लात-घूँसों पर बात आ जाती है। तब इस दिमाग के अंदर की क्रूर कोशिकाएँ जगती हैं। तब मारने में मज़ा आता है। दिल करता है कि हाथ पाँव तोड़ दें। विचार वाली कोशिकाएँ परेशान हो जाती हैं। जैसे शरीफ़ आदमी शरारती की संगत के कारण परेशान हो जाता है, इस तरह वो कोशिकाएँ परेशान होती हैं। इसलिए विचार की ताक़त कम हो जाती है। क्रोध से शक्ल भी ख़राब हो जाती है। तब आँखें तरेरता है, चेहरे को सकोड़ता है। कभी गुस्सा करके शीशे में अपने को देख लेना कि कैसे लग रहे हो। पता चल जायेगा। जैसे गाली देकर आए, वैसा शीशे में करके देख लेना। यह गुस्सा बड़ा खूँखार है। इससे दूसरे को पीड़ा मिलेगी। गुस्सा दो लोगों को नहीं आ सकता है। एक

ज्ञानी को और दूसरा पागल को। ज्ञानी विचार कर लेता है। गुस्से में इंसान गाली बकता है, लातें चलाता है। ये हरकतें अच्छी नहीं हैं।

क्रोध किये गत मुक्ति न होय ॥

शरीर का सिस्टम कुछ ऐसा है कि कुछ कोशिकाएँ प्रसन्नता के समय जाग्रत होती हैं। खुश होने से बड़ा लाभ है। इसलिए अपने मूड को हर समय गुस्से वाला नहीं रखना। मेरे पास बच्चे आते हैं। माँ-बाप नाम रखवाने आते हैं। पहले तो वे मुझे देखकर डर जाते हैं। शायद अजनबी लगता हूँ या फिर मेरी मूँछों को देख डर जाते होंगे। फिर मैं मुस्कराता हूँ तो वे मुस्कराकर जवाब देते हैं।

आत्मा आनन्दमयी है; गुस्सा आत्मा में नहीं है। यह शरीर की त्रुटियाँ हैं। इसकी शुरुआत तो बड़ी अक्लमंदी से होती है, पर परणीति बड़ी जाहिल है। अक्लमंदी यह है कि अक्ल को गुस्से में न लगाकर अक्ल से गुस्से को रोकना।

आत्मा में विकार नहीं है। शरीर में तो गंदगी है। हरेक अंग-प्रतिअंग से गंदगी निकल रही है। मुख आदि से गंदगी, नासिका से भी गंदगी, आँखों से भी गंदगी। मृत इंसान से जो बदबू निकलती है, वो बदबू मरे हुए चूहे से भी नहीं आती है। एक सैनिक की लाश 4 दिन बाद मिली तो उठा रहे थे। तब उँगलियाँ भी ज़िस्म में जा रही थीं। अब लाश तो उठानी थी; फायरिंग में मारा गया था; क्रियाकर्म करना था। इतनी बदबू थी कि कहने की बात नहीं, 7 दिन तक साबुन से रगड़-2 कर हाथ धोने पर भी बदबू नहीं गयी। इंसान के ज़िस्म में इतनी बदबू है। यह पूरा ज़िस्म ही बदबू और विकार से भरा है। पर आत्मा में कोई बदबू नहीं है, कोई विकार नहीं है। फिर यह सहज है। यह धोखा नहीं जानती है। यह स्वाभाविक है।

बच्चे क्यों अच्छे हैं? जब तक वो बच्चा है तो आत्मा का व्यवहार करता है। क्योंकि शांति दिमाग़ विकसित नहीं हुआ होता है। जब बड़ा हो जाता है तो दिमाग़ काम करने लगता है। यानी स्वाभाविक हम सहज

हैं। आत्मा स्वाभाविक रूप से सहज है। यह मन, बुद्धि आदि की संगत से खराब हो गयी है। यह बड़ी निर्मल है। एक पल भी यह अचेत नहीं है।

आत्मा निर्मल है। यह सबमें एक जैसी है। मैंने खूँखार लोगों से भी व्यवहार करके देखा तो उनमें भी प्रेम मिला। यानी एक चीज़ सबमें मिल रही है। आत्मा तो सबमें मिल रही है। मन की वृत्तियाँ भी सबमें मिल रही हैं। कुछ मूल चीज़ें सबमें मिल रही हैं। शरीर में निवास करने वाली हरेक आत्मा शरीर से प्रेम करती है। नेवला भी अपनी सुरक्षा चाहता है। हम सबके साथ विरोधी ताकतें भी निवास कर रही हैं। वो विनाश की तरफ खींच कर ले चल रही हैं।

अनहद लूट होत घट भीतर, घट का मरम न जाना ॥

आत्मा परमानन्दमयी है। क्यों? परमात्मा का अंश होने से जो चीज़ें उसमें हैं, इस आत्मा में भी हैं।

सो माया बश भयो गुसाई।

अब माया के वश में आकर उनके इशारे पर चलने लगी।

जड़ चेतन है ग्रंथ पड़ गयी ॥

आत्मा ने सच में अपने को शरीर मानना शुरू कर दिया। यहीं से समस्या आ गयी। कोई भी प्राणी शरीर नहीं छोड़ना चाह रहा है। साँप कठिन योनि में है। पर वो भी जीना चाहता है। मिटाने के लिए जाओ तो फौरन अपनी सुरक्षा के लिए उठता है। यानी किसी भी शरीर में हो आत्मा, उससे प्रेम कर रही है। कीट-पतंग आदि निकृष्ट योनियाँ हैं। यदि मच्छर को मारने जाओ तो फौरन उड़ जाता है। जिस भी शरीर में आत्मा है, उससे बहुत प्रेम कर रही है, उसे छोड़ना नहीं चाहती है।

आत्मा शरीर से प्रेम क्यों कर रही है? इसने शरीर को वरण किया; वहीं से दुख शुरू हुए। आखिर प्रेम क्यों कर रही है? एक आनन्द के लिए। दुनिया का हरेक आदमी मजे की तलाश में जी रहा है। शरीर में कौन-सा आनन्द है!


काँचे कुम्भ न पानी ठहरे ॥

थोड़ी ठंड लगे तो बीमार, थोड़ी गर्मी लगी तो बीमार ।

कहत कबीर सुनो भाई साधो, रुई लपेटी आग है ॥

दुनिया के मजे को पाने के लिए ही तो शरीर को नहीं छोड़ना चाहती है आत्मा । धारणा बनी हुई है कि इससे आनन्द मिलेगा । जीभ का क्या मजा है ? कई पदार्थ खाने पर भी तृप्ति नहीं हो रही है । जीभ कुछ देर तक इसका अनुभव कर रही है । अब इस मजे को लेने के लिए पदार्थ चाहिए । 6 रस हैं । अगर मीठा चाह रही है तो आम चाहिए, मिठाई चाहिए । यह डिमाण्ड करती है । कभी कहते हैं कि नमकीन खाना है । इसके लिए आदमी विनाश मचा देता है । पर एक पल का आनन्द है । फिर इन पदार्थों के लिए विनाश करता है । घर में कुछ ठीक न बना हो तो उठाकर फेंक देता है । यह स्वाद बड़ा ही जालिम है ।

जिभ्या स्वाद के कारने, नर कीन्हे बहुत उपाय ॥

 इसके द्वारा प्राप्त आनन्द हमेशा हमारे साथ रहेगा ! इसका वजूद कितना है ! यह बेहद खराब आनन्द है । इसी के लिए तो दुनिया में मस्त है इंसान । फिर दूसरा है शिशन का आनन्द । संभोग का मजा । बस इस पर इतना कहना चाहूँगा कि विवेकानन्द ने कहा है कि जो पदार्थ शरीर से निकलकर इतना आनन्द दे रहा है, वो शरीर में रहकर कितना आनन्द देगा ! वो सन्यासी थे । एक ही बात कहकर बात खत्म कर दी । जो भी भोजन खा रहे हैं, उससे रस बनता है । रस से रक्त, रक्त से मंजा और मंजा से अस्थियाँ और फिर उनसे वीर्य बनता है । इस आनन्द का अंत विनाश है । अति भोगों से अति रोगों की उत्पत्ति होती है । वेद में कहा कि 25 साल तक ब्रह्मचर्य का पालन करो । क्यों ? 4 भागों में जीवन को बाँटा । ब्रह्मचर्य, गृहस्थाश्रम, वानप्रस्त और सन्यास । 25 साल तक इसलिए ब्रह्मचर्य कि हड्डियाँ मजबूत रहेंगी । हड्डियों का फ्यूल है— वीर्य । हड्डियाँ वीर्य की ताकत से पनपती हैं । उन्हें वीर्य की शक्ति चाहिए । इसलिए 25 साल से पहले विषयों में उलझ गये तो अस्थियाँ कमजोर

होंगी, जीवन रोगयुक्त होगा। शरीर में रोगों से लड़ाई की जो ताकत है, वो भोगी में बहुत कम हो जाती है। इसलिए असाध्य रोगों की उत्पत्ति होती है। टी.बी की बीमारी अति भोगों से हो जाती है। बार-बार विकारों की तरफ दौड़ता फिरेगा तो संचय नहीं हो पायेगा। मेरा विचार है कि बीमारी शरीर का स्वभाव नहीं है। यह बुलाई जाती है। पर आज नहीं कह सकते हैं, क्योंकि भोजन अच्छा नहीं खा रहे हैं। इंसान के अंदर हरेक बीमारी से लड़ने की ताकत है। पर इसे विषयों में उलझकर कम नहीं करना है। पशु लोग विषयी नहीं होते हैं। वो तो केवल सृजन के लिए करते हैं। इंसान स्वाद के लिए करता है।

**कामी कुत्ता तीस दिन, अन्तर होत उदास।
कामी नर कुत्ता सदा, छह ऋतु बारह मास॥**

इसलिए उन्हें बीमारियाँ कम हैं। वो लड़ रहे हैं। यह ताकत वीर्य से मिलती है। इसका मतलब है कि यह विषय-विकार घाटे का सौदा है। इसलिए वेद कह रहा है कि 25 साल तक ब्रह्मचर्य का पालन करो। यदि नहीं रह सकते तो 25 साल के बाद विवाह करके देख लो कि क्या है गृहस्थ आश्रम। पर यह शरीर की मूल डिमाण्ड बनी है। इसके वशीभूत होकर आदमी कुछ भी कर लेता है। वेद आगे कह रहा है कि 50 साल के बाद बानप्रस्थ हो जाओ। फिर विषय भूलकर भी नहीं करना है। क्योंकि स्त्रियों का मासिक भी तब बंद हो जाता है। उसका नारीत्व समाप्त हो जाता है। पशु बड़े शिष्ट हैं इस मामले में। यदि बैल को पता चल जाए कि गाय बंझा हो गयी है तो पास नहीं जाता है। बड़े स्वाभाविक हैं वे। केवल इंसान स्वाद के लिए विषय-विकारों में उलझा है। तो वेद कह रहा है कि फिर दूध और पानी की तरह रहना दोनों, विषय-भोग नहीं करना। फिर रक्त भी अधिक नहीं बनता है। उतना ही बनता है जितना शरीर को चाहिए। फिर वीर्य को सृजित करने के लिए खून ज्यादा नहीं बन पाता है। तो इंसान यह सब आनन्द के लिए कर रहा है। पर यह स्थायी आनन्द नहीं है। इसमें अधिक उलझने से क्रोध भी अधिक आ जायेगा। क्योंकि

दिमाग की कुछ कोशिकाओं को वीर्य से ताक़त मिलती है, वो ठीक काम नहीं कर पाती हैं, जिस्से गुस्सा अधिक आता है, कण्ट्रोल भी नहीं हो पाता। विषय-विकारों वाला उदास रहेगा। बच्चे देखो, कितने मस्त हैं, खेलते रहते हैं। आदमी इस घाटे को समझ नहीं पा रहा है। यह मज़ा नहीं है, सज़ा है।

फिर तीसरा कानों का मज़ा मिलता है। लोग संगीत-डॉस में मस्त हैं। मुझे कुछ भी मज़ा नहीं दिख रहा है इसमें। चौथा खुशबू का मज़ा हा। पर सबसे जालिम मुँह का मज़ा है। फिर शिश्न है। जीभ कभी खट्टा, कभी मीठा। फिर इनकी प्राप्ति के लिए धन चाहिए तो पाप कर रहा है और पाप के प्रायश्चित के लिए जन्म-मरण को धारण करना पड़ता है। इसलिए साहिब समझा रहे हैं—

इंद्री पसारा रोक ले, सब सुख तेरे पास॥

इंद्रियों का मज़ा कहाँ से मिलता है? यह आत्मा का आनन्द है। आलू में मज़ा नहीं है। मज़ा आत्मा का है। किसी दिन आलू खाना और ध्यान कहीं और रखना तो देख लेना कि मज़ा नहीं आयेगा। इसका मतलब है कि इनकी अनुभूति हमारी आत्मा करती है। मन के द्वारा यह अनुभूति करती है। यही जकड़ा है। पर यह मज़ा है ध्यान में। सुरति जहाँ हैं वहाँ मज़ा आयेगा। यह ध्यान का मज़ा है। मन छल करके वहाँ दिखाता है। वो बताता है कि यह मज़ा वहाँ आया। पर था नहीं। बचपन से ही तो इंसान मज़ा ढूँढ़ता है। कभी माँ में, कभी खेल में। जहाँ-जहाँ सुरति लगती है, वहीं से मज़ा आने लगता है। इसलिए इस सुरति को एकाग्र कर लेना।

**सुरति संभाले काज है, तू मत भरम भुलाय।
मन सय्याद मनसा लहर में, बहत कतहू न जाय॥**

इंसान ने सुरति को गलत जगह पर लगा दिया है। इसे गुरु में लगाना है। वास्तव में जिसकी जहाँ पर सुरति है, वही उसका गुरु है।
**कामी का गुरु कामिनी, लोभी का गुरु दाम।
कबीर का गुरु संत है, संतों का गुरु नाम॥**

जो कामी है, उसका ध्यान हर समय स्त्री में ही लगा रहता है। उसका वही गुरु है। कुछ का ध्यान गाने सुनने में होता है। आजकल तो मोबाइल में गाने भरते हैं। कभी किसी को फ़ोन करता हूँ तो गाना बजता है। यानी यह है कान का मज़ा। यह दिलाता है मज़ा।

यह संसार फूल सेमर का, चोंच लगे पछताना है ॥
यह संसार झाड़ और झाँखड़, आग लगे बरि जाना है ॥
रहना नहीं देश बीराना है ॥

कितने चेतावनी भरे शब्द हैं!

एक बार किसी ने कहा कि जब भी मिर्ची खाता हूँ तो बीमार हो जाता हूँ। पर 10-15 दिन में खानी ही है।

जब पता है कि मिर्ची खाने से बीमार होना है तो भी क्यों खानी! यह है मज़ा। पूरी जिंदगी आत्मा आनन्द की तलाश में भटकती रहती है। अब स्त्री में मज़ा नहीं है। जहाँ ध्यान लगेगा, वहीं मज़ा है। मन जहाँ चाह रहा है, वहीं लगा रहा है।

कस्तूरी कुण्डल बसे, मृग खोजे बन माहिं।
ऐसे घट घट साईया, मूरख जानत नाहिं ॥

वो महक चुभने वाली नहीं है। वो बूटी-बूटी सूँघता फिरता है। वो परेशान रहता है, सोचता है कि कहाँ है खुशबू! इस तरह आनन्द आत्मा में है, पर इंसान उसे भौतिक पदार्थों में खोज रहा है।

आत्मा अज्ञानवश शरीर के सुख में खो गयी है। मन माया के विशाल अज्ञान में आत्मा खो गयी है, जिससे उसका नूर नजर नहीं आ रहा है, उसका जलवा नजर नहीं आ रहा है, उसका आनन्द नजर नहीं आ रहा है।

सुरति फँसी संसार में, ताते पड़ गयो धूर।

वर्तमान में आम आदमी की सुरति कुंद है। हीरा मिट्टी में होता है तो प्रकाश नहीं दे पाता है, लेकिन जब उसे निकाल कर साफ किया जाता है तो वो हीरा रोशनी देना शुरू कर देता है। हीरे की रोशनी कम

नहीं होती, केवल मात्र आच्छादित हो जाती है। इसी तरह हमारी सुरति अपने आप में परिपूर्ण है, वो घटती-बढ़ती नहीं, उसकी रोशनी, उसकी ताकत, उसका गुण कम नहीं हो सकता। इसलिए उसे किसी शक्ति की, किसी ताकत की जरूरत नहीं, पर उसमें मन-माया की गंध लग गयी है, जिसके कारण उसका प्रकाश लुप्त हो गया है, उसका गुण छिप गया है। इस आत्मा का न आगा है, न पीछा। ऐसी आत्मा को बड़ी प्लानिंग से जकड़ा हुआ है। सही में, बड़ी प्लानिंग से जकड़ा है। मन और माया में आत्मा फँसी है न! अब शरीर में कैसे जकड़ा है, यह तो पता चला। बरबस इंद्रियाँ अपने-अपने स्वार्थ की ओर खींच रही हैं। पर ये इंद्रियाँ ऐसे ही नहीं खींच रही हैं। इनके पीछे भी कोई है। मैं रामचरितमानस की बात बताता हूँ—

**इन्द्री द्वार झरोखा नाना। तहँ देवा कर बैठे थाना।।
इन्द्रिय सुनन ना ज्ञान सुहाई। विषय भोग पर प्रीत लगाई।।**

गोस्वामी तुलसीदास जी कह रहे हैं कि इन इन्द्रियों के देवताओं को ज्ञान अच्छा नहीं लगता, विषय भोग ही अच्छे लगते हैं। ये आत्मा को ज्ञान की तरफ नहीं जाने देते।

अब इन्द्रियों पर कौन-से देवता हैं, यह देखते हैं। आदमी के शरीर में पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ और चार अंतःकरण की सूक्ष्म इन्द्रियाँ हैं।

पाँच कर्मेन्द्रियाँ :

1. टाँगें (चलती हैं)
2. मल द्वार (मल बाहर करता है)
3. शिश्न (विषय भोग करती है)
4. मुख (खाता है)
5. हाथ (काम करते हैं)

अब इनके देवता देखते हैं—

पैर : उपेन्द्र जी

गुदा : यम
 शिश्न : ब्रह्मा जी
 मुख : अग्नि देव
 भुजाएँ : इन्द्र

ज्ञानेन्द्रियों की तरफ चलते हैं—

पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ :

1. त्वचा (शीतोष्ण का आभास करती है)
2. आँखें (दृश्यमान वस्तुओं को देखती हैं, दृश्यमान वस्तुओं का आभास कराती हैं)
3. कान (शब्द का ज्ञान कराते हैं)
4. नाक (खुशबू का आभास कराते हैं)
5. मुँह (कर्मेन्द्रिय और ज्ञानेन्द्रिय दोनों हैं, बोलते भी हैं और रसों का ज्ञान भी होता है)

इनके देवता लोग—

त्वचा : गरुड़ जी
 आँख : सूर्य देव
 कान : दिशा जी
 नाक : अश्विनी कुमार

अंतःकरण की इन्द्रियों को देखते हैं—

चार अंतःकरण की इन्द्रियाँ :

1. मन (इच्छा करता है)
2. बुद्धि (फैसला करती है)
3. चित्त (याद करता है)
4. अहंकार (क्रिया करता है)

इनके देवता लोग—

मन : चंद्रमा
 चित्त : वासुदेव

बुद्धि : ब्रह्मा

अहंकार : शिव

दुनिया ने या तो रामायण सुनी नहीं। गोस्वामी जी साफ़ कह रहे हैं—

इन्द्रिय सुरन ना ज्ञान सुहाई। विषय भोग पर प्रीत लगाई॥

यानी ब्रह्मा जी आत्मा को विषयों की तरफ खींच रहे हैं। अग्नि देव जी भी आत्मा को विषयों की तरफ खींच रहे हैं। सूर्य देव, अग्नि देव, सबका यही हाल है, सभी आत्मा को गलत दिशी की तरफ ले जा रहे हैं। वो सीधा कह रहा है कि खींच रहा है, विषय भोगों में प्रीत लगा रहा है। तो इन सबका संचालनकर्त्ता है—मन। इस मन के पिंजड़े में आत्मा कैद है। तो यह सब बताना निंदा है क्या! नहीं! हम यह सच्चाई ही तो बोल रहे हैं। सब जीव शैतानी ताक़त के हाथ में है। ‘**इन सब मिल जीव को घेरा।**’ इनका राजा मन है। पूरे शरीर के अंगों को मन चला रहा है। मान लो, आप कोई चावल या आटे की बोरी उठाते हैं। इसमें केवल हाथों की ताक़त नहीं लगी, पेट भी सुकुड़ जाता है यानी उसकी ताक़त भी लगती है, छाती की ताक़त भी लगती है। स्नायुमंडल की आदत है कि सहायता में लग जाता है। इस तरह मन की सहायता में इन्द्रियाँ लग जाती हैं। मिठाई देख मुँह में पानी आ जाता है। क्यों आया! मुँह ने तो देखा नहीं, फिर क्यों आया! क्योंकि सभी इन्द्रियाँ संबंधित हैं। आँखों ने फौरन मुँह को सूचना दी कि तेरी खुराक आ गयी है। पता नहीं चल पाता है बंदे को। आँखों ने सूचना दी। बड़े प्लान से आत्मा को बाँधा गया है भाइयो। जानकारी तो लें।

बहु बंधन ते बाँधिया, एक विचारा जीव।

यह मन द्वारा कई रस्सों से बाँधा गया है। मन ने इसे काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार में बाँध रखा है। काम, क्रोध आदि शत्रु ताक़तवर हैं। क्रोध से कितनी हिंसा करता है आदमी। बड़ी खराब चीज है। यह आत्मा में नहीं है। आत्मा के नूर को,

उसके जलवे को छिपा दिया है, उसकी शक्ति को आच्छादित कर दिया गया है। कामातुर होता है तो बड़ी क्रूरताएँ करने लगता है, रात को उठ-उठकर कहीं पहुँच जाता है, झूठ बोलता है, छल करता है। नपुंसक लोगों को भी तंग करता है काम। देवादि को भी तंग करता है। देवत्व भी अधीन आ जाता है इसके। मानव, कीट, पतंग, पशु, पक्षी सबको नचा रहा है यह। ये सब बुद्धि पर असर डालते हैं। क्रोध का असर भी बुद्धि पर पड़ता है। लोभ का भी। हमने बुद्धि को अपना मान रखा है। इसका मतलब है कि हमारे अन्दर के शत्रु बुद्धि पर असर डाल देते हैं। क्रोध आता है तो आदमी सोच नहीं पाता है, काम आता है, मति मार देता है। इस तरह आत्मदेव जड़ पदार्थों में आ गया।

इन सब मिल जीवहि घेरा। बिना परिचय भया यम को चेरा॥

राक्षस की सेना होगी तो खतरनाक ही होगी। वो भी खराब होगा। ये मनुष्य के अन्दर रहते हैं, अपना काम कर रहे हैं। ये सब शक्तिशाली हैं, एक से बढ़कर एक हैं। आत्मदेव आज्ञा पालन के लिए बाध्य है। अब सवाल उठा कि क्यों कर रहा है? ये इससे ताकतवर हैं क्या? नहीं, अज्ञान के कारण। अज्ञान यह कि अपने को मन समझ लिया, बुद्धि समझ लिया। इसलिए मन नचा रहा है। मन का हथियार अज्ञान है। पता नहीं चल रहा है कि कौन कर रहा है। अज्ञान से सब हो रहा है। पर किसकी ताकत से हो रहा है? आत्मा की। आत्मदेव अनुकरण न करे तो कुछ नहीं हो सकता है।

... तो जब तक माया की कैद में है, जब तक मन के दायरे में है, तब तक सच्चा सुख नहीं मिल सकता है। यही बात है कि योगी भी सच्चे सुख से वंचित रहते हैं।

योगी लोग 10वें द्वार तक ही जा पाते हैं। योगेश्वर लोग शरीर से भी निकल जाते हैं। पर फिर भी वो मन से नहीं निकल पाते हैं। जबकि संतजन 11वें द्वार से निकल मन से भी निकल जाते हैं और सच्चे आनन्द को प्राप्त करते हैं। अब यह 11वाँ द्वार क्या है। पहले देखते हैं कि 10वाँ

द्वार क्या है। यह कोई आसान काम नहीं है। यह कोई शरीर में दरवाजा नहीं है कि उसे खोलकर निकल गये। वाणियों में ज़िक्र आ रहा है कि 10वाँ द्वार है। यह सबमें है। चिकित्सा विज्ञान ने बड़ी तरक्की की है। एमस में तो मरीज के दिल को टेबल पर निकालकर फिर आप्रेशन करते हैं। उनके पास तो ऐसे सूक्ष्म यंत्र हैं कि बाल से हजार गुणा बारीक चीज़ को भी देख लेते हैं। पर कहीं उन्हें 10वाँ द्वार नहीं मिला। यदि शरीर में होता उन्हें ज़रूर मिल जाता। पर नहीं मिला। क्योंकि यह शरीर में कहीं एक जगह स्थित नहीं है। यह एक अवस्था है। यह कोई महज़ कल्पना नहीं है। पर—

वस्तु कहीं, ढूँढ़े कहीं, केहि विधि आवे हाथ।

कहैं कबीर भेदी लिया, तुरत लखावे बाट ॥

जब तक मुकम्मल भेदी का साथ नहीं मिलता, तब तक अंदर की दुनिया में नहीं घुस सकते हैं। पर भेदी मिल जाए तो काम आसान हो जाता है। जब 10वाँ द्वार खुलता है तो पूरे का पूरा साजो-सामान शरीर से निकलकर चल पड़ता है। पंच मुद्राओं में यह खेचरी मुद्रा कहलाती है। अन्य मुद्राओं में शरीर के साथ एक सूत्र जुड़ा रहता है।

कुछ ने महाशून्य के आसमानों का भी सफर किया। तब शरीर से पूरी सत्ता निकालकर यात्रा होती है। इसे जीते-जी मरना भी कहा गया है। आगे सफर आसान है। पर सद्गुरु के बिना उसे कोई नहीं पा सकता है। जीते जी मरकर यानी 10वें द्वार से निकलकर भी आनन्द को प्राप्त नहीं हुआ। क्योंकि तब भी मन में ही है। तब भी पूर्ण आत्मानन्द नहीं मिलता, इसलिए उसे भी सच्चा आनन्द नहीं कहा गया। तो भी आनन्द कहा गया, क्योंकि बहुत सूक्ष्म रूप में मन हो जाता है। यानी समझो कि 99 प्रतिशत आत्मानन्द होता है। पर 1 प्रतिशत झूठ होता है। इसी 1 प्रतिशत के भ्रम के कारण योगी को पुनः माता के पेट में आना ही पड़ जाता है।

10वें द्वार से परे 11वाँ द्वार सुरति के भीतर से ही है। यानी सच्चे आनन्द की राह इसी के भीतर से है।

जब तक पूर्ण आत्मानन्द नहीं मिल जाता, यह जीव मन की सीमा से बाहर निकलकर सच्चे आनन्द को प्राप्त नहीं कर सकता है। वो शुद्ध आत्मानन्द है। वो शुद्ध परमात्मानन्द है। उसकी बात ही कुछ और है। सद्गुरु के बिना इस शुद्ध और पूर्ण आत्मानन्द की स्थिति तक नहीं पहुँचा जा सकता है। सद्गुरु सच्चा नाम देता है और धीरे-धीरे शुद्ध आत्मानन्द की ओर ले चलता है। नाम आत्मा के ऊपर के मन-माया के आवरणों को हटाता जाता है। ये आवरण स्वयं नहीं हट सकते हैं। योगेश्वर तो केवल छः ही हुए, जिन्होंने 99 प्रतिशत तक के आत्मानन्द को प्राप्त किया। जो यह आनन्द है, वो भी गुरु के सान्निध्य के बिना नहीं पाया जा सकता है। तभी तो सबने गुरु किया।

राम कृष्ण से को बड़ा, तिन भी तो गुरु कीन।

तीन लोक के नायका, गुरु आगे आधीन॥

सबने गुरु किया। आत्मानन्द को पाने के लिए गुरु तो करना ही होगा। पर पूर्ण आनन्द को कोई नहीं पा सका, क्योंकि गुरु पूर्ण नहीं मिला। पूर्ण गुरु होगा तभी तो पूर्ण आनन्द मिल पायेगा। पूर्ण गुरु के पास अमर-लोक का विदेह नाम होता है। वो निःशब्द शब्द भी कहा जाता है। उसे ही सच्चा नाम कहा गया है। वो सांसारिक नामों से निराला है। जब तक वो नहीं मिल जाता, तब तक जीव आत्मानन्द को नहीं पा सकता है। सच्चा नाम आत्मा को चेतन कर मन की सीमा से परे कर देता है। आत्मा को उसके सही घर अमर-लोक में ले जाता है। मन की सीमा से बाहर निकलना ही अमर-लोक में जाना है। यानी जो मन की सीमा से निकल गया, वो फिर वापिस मन के जाल में नहीं आता है। फिर वो उसी आनन्द में समा जाता है।

आपको बार-बार अमर-लोक की बात इसलिए बता रहा हूँ कि आपके दिल में पक्की इच्छा बनाना चाहता हूँ कि अमर-लोक में जाना है, फिर लौटकर इस दुनिया में नहीं आना है। यानी यदि जीते-जी नहीं भी पहुँच सके तो भी पक्की इच्छा हो जायेगी तो मरकर वहीं जाओगे। इसलिए

जब सच्चा नाम मिल जाए तो बाकी को छोड़ देना, क्योंकि दो जगहों पर विश्वास रहेगा तो कहीं के नहीं रह जाओगे। इसलिए—

एक नाम को जानकर दूजा देई बहाय ॥

जब पूर्ण गुरु का सच्चा नाम मिल जाए तो बाकी सब आशा छोड़ देना। वो नाम आपको अमर-लोक ले जायेगा। तब उस परम तत्त्व में समाकर परम आनन्द में खो जाओगे।

इंद्रियों के मजे में जब आत्मा खो जाती है तो आनन्द प्रतीत होता है; पर पूर्ण आनन्द नहीं होता। अंदर की दुनिया में खो जाती है तो भी पूर्ण आनन्द नहीं होता। 10वें द्वार से निकल जाती है तो भी पूर्ण आनन्द नहीं मिलता। वो 1 प्रतिशत रह जाता है। यह 1 प्रतिशत का रह जाना ही मन की सीमा में ही रह जाना है, अमर-लोक नहीं पहुँच पाना है। पर पूर्ण सद्गुरु मिलता है तो यह अपने में ही खो जाती है। फिर यह अपने में बाहर नहीं निकलना चाहती है। इस तरह जब अमर-लोक में चली जाती है तो परम तत्त्व में खोकर परम परम आनन्द में लीन हो जाती है। यही तो सच्चा आनन्द है, जो परम शुद्ध आनन्द है। जब तक तीन लोक की सीमा में है, तब तक पूर्ण आनन्द मिल ही नहीं सकता है। इस तीन लोक की सीमा से परे जाकर ही पूर्ण आत्मानन्द को पाया जा सकता है, परमानन्द को पाया जा सकता है। बस, सद्गुरु यानी पूर्ण गुरु मिल जाए तो यह काम हो जायेगा। पलटू साहिब कह रहे हैं—

पलटू पावै सहज में, सतगुरु की है देर।

इहाँ उहाँ कुछ है नहीं, अपने मन का फेर॥

कठोपनिषद में एक रूपक के माध्यम से आत्मा की परमात्मा के घर की यात्रा के विषय में कहा गया है, जो वास्तव में निरंजन लोक तक की है। उसमें शरीर को एक रथ के समान माना गया है, पर स्थूल शरीर की बात नहीं की गयी, आन्तरिक साधना में प्राप्त होने वाले सूक्ष्म शरीर की बात है। उसी शरीर में बैठकर आत्मा रूपी रथी यात्रा करता है। इस रथ में इंद्रियाँ रूपी घोड़े लगे हैं। यदि ये घोड़े चारा खान में लग गये तो

यात्रा नहीं हो पायेगी, इसलिए उनपर मन की लगाम लगी है और इस लगाम को खींचने वाला बुद्धि रूपी सारथी है। भाइयो, बुद्धि मन का ही रूप है और मन कभी सही दिशा में नहीं जाता। तो सोचो, यह यात्रा कहाँ तक जायेगी। नहीं, यह यात्रा कभी सही मुकाम तक नहीं पहुँच सकती है। यह तो स्वर्ग लोक, ब्रह्म लोक या ज्यादा-से-ज्यादा निरंजन लोक तक जा सकती है। इसलिए संतों ने कहा—

यह सब साधन से न होई। तुम्हरी कृपा पाय कोई कोई ॥

अपनी बुद्धि के सहारे, अपनी कमाई से नहीं जा सकोगे। सहज मार्ग में सद्गुरु रूपी सारथी नाम रूपी रथ में हंस रूपी रथी को बिठाकर ले जाता है। उस रथ में तो सूक्ष्म इंद्रियों के घोड़े जुते थे, पर नाम रूपी रथ में ये घोड़े भी नहीं, इसलिए विषयों की ओर जाने का सवाल ही नहीं। रथी को केवल रथ पर सवार होना है, बाकी काम सद्गुरु का है।

सद्गुरु के बिना यह मनुष्य भटक रहा है। यह अपनी आत्मा को नहीं जान पा रहा है। आत्मा को किसी ताक़त की ज़रूरत नहीं है। वो परम-पुरुष की अंश होने से बड़ी ताक़तवर है। उसे किसी अतिरिक्त ताक़त की ज़रूरत नहीं है। गुरु केवल उसके ऊपर से मन-माया के आवरण को हटा देता है, जिससे उसे अपने स्वरूप को समझने का अवसर मिल जाता है।

साहिब ने बड़े सुंदर अलंकार से इस तथ्य की पुष्टि की है—

**बिना सतगुरु नर फिरत भुलाना ।
खोजत फिरत न मिलत ठिकाना ॥**

बड़े अच्छे अलंकार से साहिब ने आत्मतत्त्व विस्मृत कैसे हो गया, यह बताया है। अपनी ताक़त यह कैसे खो दिया है, यह बता रहे हैं। कह रहे हैं कि बिना सच्चे सद्गुरु के यह भूला हुआ है।

**केहर सुत इक आन गड़रिया ।
पाल पोस के कियो सयाना ॥**

‘केहर’ शेर को कहते हैं। ‘सुत’ बच्चे को कहते हैं।

एक बार एक शेर का बच्चा बक़रवाल की बकरियों में आ गया।
वो अपनी माँ से बिछड़ गया। बक़रवाल उसे उठाकर ले गया।

पाल पोस के कियो सयाना ॥

माँ से बिछड़ा हुआ था। माँ नहीं मिली। अब वो भेड़-बकरियों
के साथ रहने लगा।

करत कलोल फिरत अंजियन संग।

आपन मरन उनहूँ न जाना ॥

‘अजा’ बकरी को कहते हैं। ‘कलौल’ यानी खेलकूद। वो
गड़रिये की बकरियों के साथ खेलता था। अपना भेद उसे मालूम नहीं था
कि शेर हूँ। बड़ा हो गया। घास भी खाने लगा। घास क्यों खाने लगा?
आपके बच्चे भी कभी मिट्टी खाते हैं। बच्चों की जीभ इंद्री तेज़ होती है।
मिट्टी में एक तत्व है। खाने की चीज़ नहीं थी। विषैले पदार्थ भी हैं। पर
आदत पड़ गयी। मिट्टी खाना गंदी आदत है।

आत्मा को इंद्रियों के साथ रहने की बड़ी गंदी आदत पड़ गयी
है। मेरा भतीजा मिट्टी खाता था। उसकी माँ कहती थी कि यह मिट्टी खाता
है। मैंने कहा कि घर में मिट्टी न रखा करो। बाद में वो कहने लगी कि
यह बाहर जाकर मिट्टी खाता है। मैंने कहा कि बाहर न जाने दो। फिर
एक दिन कहने लगी कि जूते के तलवे से मिट्टी निकालकर खाता है।
देखा न, कितनी गंदी आदत थी! मैंने कहा कि जूते ऊँची जगह पर रखा
करो। फिर एक दिन कहने लगी कि अब दीवारों को चाटता है। अब
दीवारें थोड़ा तोड़नी थीं। वाह! ऐसा ही है मन।

तीन लोक में मनहिं विराजी। ताहिं न चीहृत पंडित काजी ॥

तो उसे बाद में समझाया, भय दिया कि नहीं खाओ। मिट्टी खाने
की चीज़ नहीं है। इस तरह शेर के लिए घास खाने की चीज़ नहीं है।

एक भैंस का कट्टा है। भैंस को चारा देने जाऊँ तो वो मेरे पैर की
टो पकड़कर नौचता है कहना चाहता मुझे भी दो। उसने दोनों टो खा ली
हैं। भूखा होता है तो कुछ खाना चाहता है। चारा उसके खाने की चीज़
नहीं है; पर भूखा था।

संभवतः, शेर का बच्चा भी घास खाना इसलिए सीख गया होगा, क्योंकि उसे कुछ और न मिला होगा। उसने देखा होगा कि बाकी भी यही खा रहे हैं। वो भी खाने लग गया। वो लड़ाई भी भेड़ की तरह ही करने लग गया। बोलने भी भेड़ की तरह ही लगा। गरजने की जगह मिनमिनाने लगा। कुत्ता भौंकता है, हाथी चिंगाड़ता है, शेर गरजता है, बकरी मिनमिनाती है। वो मिनमिनाने लगा। शेर को मिनमिनाना नहीं है। पर वो भेड़ों को मिनमिनाते देखता था। पूरे काम बकरियों वाले करने लगा। चलना भी बकरियों की तरह हो गया। वो बकरियों के साथ रह-रहकर बकरी बन गया। शेर कैसे बकरी बन सकता है? संगत।

**मृगपति और जंगल से आयो।
ताहि देख वो बहु डराना ॥**

अब जो बकरवाल था, वो जब भी बकरियों को डंडा मारता था तो शेर को भी मारता था। जैसे सभी उसके काबू में थे, वो भी था। जब कहीं खो जाता तो बकरवाल उसे पकड़ लाता था। क्या आदमी शेर को पकड़ सकता है? नहीं, बकरियों के संग में उसका यह हाल हो गया। वो पूरी-पूरी बकरी बन गया। अपने को नहीं जानता था। तो—

मृगपति और जंगल से आयो, पाल पोस कर कियो सयाना ॥

‘मृगपति’ शेर को कहते हैं। मृगा 27 फीट छल्लाँग लगाता है। शेर 28 फीट मारता है। शेर का स्वभाव है कि अपना शिकार एक्टिव करके मारता है। जैसे आप भोजन लचीला करके खाते हैं। शेर पहले दौड़ाता है। आप फुलका ठीक से बनाकर खा रहे हैं। शेर भी ऐसे ही करता है। वो पीछे से वार नहीं करता है। पहले भयभीत करता है। भागने का मौका देता है। दौड़ा-दौड़ाकर फिर मारता है। यह उसका स्वभाव है। उसे मृगा से चुनौती मिलती है। वो शेर को चैलेंज देता है। मृगा को शेर बड़े शौक से मारकर खाता है। पर जो शेर इंसान का माँस एक बार खा ले, वो फिर नरभक्षी हो जाता है, फिर दूसरे जानवर का शिकार करना उसे अच्छा नहीं लगता है। वो इंसान को ही खाता है। क्योंकि इंसान की चमड़ी ही

माँस है। भालू को खायेगा तो पहले बाल हैं; वो नौचता है। जिस शेर के मुँह पर इंसान का खून एक बार लग जाए तो वो दूसरे जानवर का शिकार नहीं करता है।

तो एक दिन दूसरे जंगल का मृगपति आया। उसे देखकर वो बकरी बना हुआ शेर का बच्चा डर गया।

ताहि देख वो बहु डराना ॥

शेर ने देखा कि यह शेर का बच्चा है और घास खा रहा है, बकरियों के साथ में है और डंडे भी पड़ रहे हैं। यह तो बकरी बना हुआ है। यह तो शेर के धर्म के खिलाफ है। वो उसके पास पहुँचा। उसे देख बच्चा डर गया।

एक बार लंगूरों के टोले में इंसान भी था। वो क्या कर रहा था? जैसे लंगूर छलाँग मार रहे थे, वो भी मार रहा था। इतना तेज़ कोई आदमी पेड़ों में नहीं जा सकता है। वो लंगूरों के साथ लंगूर हो गया था। जहाँ लंगूर जाएँ, वो भी चला जाता था।

अब सवाल उठा कि वो कैसे लंगूर बन गया? था वो आदमी। 2-3 चीजें हैं। पहली बात है कि 90 प्रतिशत मेलजोल है। आदमी की 90 प्रतिशत आदतें मिलती हैं। पर टेक्निकल कारण कुछ और हैं। वो क्यों छलाँगें मार रहा था? क्योंकि फल खाने और दूध पीने से उसका शरीर लचीला हुआ। छोटेपन से ही लंगूरनी उठाकर ले गयी होगी और उसे ममता दे दी होगी, अपना दूध पिला दिया होगा।

मैंने अखबार में पढ़ा कि एक कुत्तिया कूड़े के ढेर पर पड़े हुए छोटे-से बच्चे को रोज़ दूध पिलाने जाती थी। किसी ने बच्चे को कूड़े के ढेर पर फेंक दिया था। कुत्तिया ने सोचा होगा कि कचरे में पड़ा है। वो रोज़ दूध पिलाने जाती थी। उसका टॉइटल भी था—कुत्तिया की ममता।

संभवता लंगूरनी ले गयी होगी और प्यार दे दिया होगा। बच्चे ने भी उसे ही अपनी माँ समझ लिया होगा। जैसे कोई बच्चा अपनाते हैं तो वो तो उन्हें ही अपने माता-पिता समझता है न! ऐसा ही हुआ होगा। अब

धीरे-धीरे उसे सब सिखा दिया होगा। पर उसके शरीर का ढाँचा आदमी की तरह था। दूध पीने और फल खाने से आदमी तेज़ होगा।

पर यह नहीं कह रहा हूँ कि अनाज नहीं खाना। क्योंकि लोग मेरी बात को उलट-पुलट कर देते हैं। एक दिन मुझे किसी ने कहा कि गाय माता है तो भैंस क्या है? लोग सवाल पूछते हैं। भैंस की दो चीज़ें उसे थोड़ा किनारा कर रही हैं। भैंस पहले अपना शरीर बनाती है, पर गाय जितना खिलाओ, वापिस कर देती है। पर ईमानदारी से देखें तो—

जिसका पीजिए दूध, तिसको कहिये माय॥

इसलिए सभी की रक्षा करनी है।

तो वो बच्चा लंगूर हो गया। वो इंसान से किनारा करता गया। लंगूर बन गया। छलाँगें इसलिए मार रहा था कि दूध वही पिया, जीनस् आ गये। लंगूरों के टोले में भाषा भी सीख गया। बच्चों की याददाश्त भी बड़ी तेज़ होती है।

एक बार गुरुदेव के पास कुछ लोग आए, कहा कि यह कैसा कलयुग आ गया है, इंसान का बच्चा लंगूर बन गया है। तो गुरुदेव ने यह बात बताई थी।

वो लंगूरों की तरह ही काट भी रहा था, लंगूरों की तरह आदमी से चिढ़ रहा था, सब काम कर रहा था, उलटे लटक रहा था। संभवतः वो शेर का बच्चा भी वैसे ही हो गया। एक गाय ने बच्चा दिया तो दूसरे दिन मर गयी। अब दूसरी गाय उसे दूध पिलाने लगी। वो समझ रही थी कि इसकी माँ मर गयी है। कभी-कभी वो दूध पिला देती थी। फिर उसे निप्पल से दूध पिलाने लगे। पहले विरोध हुआ। पर बाद में वो समझ गया कि उसकी जीविका का कोई और साधन नहीं है।

संभवतः इसी तरह हमारी आत्मा मन और इंद्रियों के संग में बिगड़ी है।

तो जंगल के शेर ने देख लिया कि घास खा रहा है। फिर आश्चर्य हुआ। वो वहाँ गया तो उसे देख बच्चा डरने लगा। शेर ने कहा कि डरो

नहीं। उसने कहा कि तुम मुझे खा जाओगे। शेर ने कहा कि तू भी शेर है। उसने कहा कि मैं तो बकरी हूँ। वो डरने लगा।

पकड़ भेद ताहि समझाना ॥

वो बच्चे को चश्मे के पास ले गया और उसे दिखाया कि देख, मैं और तू एक जैसे ही हैं। उसने कहा कि क्या सच में मैं शेर हूँ? शेर ने कहा कि तू शेर है। उसने उसे सब कुछ सिखा दिया। पंजा चलाना भी सिखा दिया। दहाड़ना भी सिखा दिया। उसकी वो ताकत तो थी ही। इस तरह आत्मा की ताकत कम नहीं हुई है, केवल मन के संग में कुंद हो गयी है।

सबकी गठरी लाल है, कोई नहीं कंगाल ॥

...तो—

मृगपति और जंगल से आयो....

तो जब जंगल का शेर आया तो सब सिखा दिया।

पकड़े भेद ताहि समझाना ॥

पानी के चश्मे में दिखाया कि तू क्या है। कहा कि तू अपनी माँ से बिछड़ गया था। उसे सब कुछ सिखाया, कहा कि अब जा! सभी सिखाते हैं। चिड़िया उड़ना सिखाती है। कुत्तिया भी अपने बच्चे को सिखाती है। तो जब वो बकरियों के बीच में गया तो जैसे गडरिया पहले सबकी तरह उसे भी डंडा मारता था, अब भी मारने लगा तो वो दहाड़ा। सारी भेड़ें भाग गयीं; गडरिया भी भाग गया। रूपांतर यह है कि परमात्म रूपी शेर का बच्चा इंद्रिय रूपी भेड़ों के साथ विषय रूपी घास खा रहा है। मन रूपी गडरिया उसे डंडे मार रहा है। जंगल के शेर रूपी संतजन मिलते हैं तो आज्ञाचक्र रूपी चश्मे के पास ले जाते हैं, कहते हैं कि देख, तू आत्मा है।

उसकी ताकत कहीं कम नहीं हुई थी। पर कहाँ थी ताकत? ताकत भेड़ों जैसी बन गयी क्या? नहीं, भेड़ों के साथ रहकर भी शेर जैसी ही ताकत थी। ताकत नहीं बदली। वही थी। स्वभाव बदल गया। भेड़ों

की संगत में रह-रहकर भेड़ों की तरह ही हो गया। शेर मिला तो उसे उसका स्वरूप दिखा दिया।

इस तरह संतजन मिलते हैं तो आत्मा को जगा देते हैं। इंद्रिय रूपी भेड़ें भी डरने लगती हैं। मन कहीं भटकाता है तो आत्मा कहती है कि यह नहीं करना है। मन की ताकत नहीं रह जाती है।

गुरु माया का नशा उतार देगा। फिर मन लगेगा ही नहीं किसी चीज में। जब ऐसा हो तो समझो कि नशा उतर गया है। सब पर शैतानी ताकतों का नशा है। जिस दिन गुरु नाम की ताकत देता है तो ड्राइविंग बिंदु पर खुद बैठ जाता है, मन हट जाता है। जब गुरु खुद वहाँ बैठ जाता है तो दुश्मन ठीक से समझ आने लग जाते हैं। ऋषि, मुनि नहीं समझ पाए। तपस्वी, योगी आदि भी भटक जाते हैं, पर भक्त भटक नहीं पाता है। अन्दर में रहने वाले शत्रु किसी मंत्र से, किसी तपस्या से काबू नहीं आने वाले। पर गुरु उन्हें काबू करने की नाम रूपी ताकत दे देता है। फिर क्रोध डेडिकेशन में बदल जायेगा, मोह प्रेम में, अहंकार भरोसे में और काम आनन्द में बदल जायेगा। 'बिन मारे बैरी मरे', वाली बात हो जायेगी। धरती पर इन्हें मारने वाला कोई पैदा नहीं हुआ। सभी इनकी चपेट में आ गये। एक अदद गुरु के संपर्क में आने से ही ये काबू में आयेंगे। तब मोह, ममता हट जायेगी। जिन्होंने आत्मा को बीमार कर रखा है, सब शक्तिहीन हो जाते हैं।

यह सब गुरु कृपा से ही संभव हो जाता है।

हरि कृपा जो होय तो, नहीं होय तो नाहिं।

कहैं कबीर गुरु कृपा बिन, सकल बुद्धि बह जाहिं॥

कह रहे हैं कि यदि परमात्मा की कृपा हो जाए तो ठीक है, पर यदि नहीं हो तो भी कोई फर्क नहीं पड़ता, पर गुरु की कृपा का होना बड़ा जरूरी है। इसके बिना काम नहीं चल सकता।

गुरु कृपा से साधु कहावै। अनलपच्छ हवै लोक सिधावै॥

गुरु की कृपा से ही मनुष्य साधु बनता है और अनल पक्षी की

तरह होकर अपने लोक को जाता है। बड़ा ही अजीब होने के कारण अनल पक्षी को राष्ट्र पक्षी रखा था। उसकी कहानी भी बड़ी प्यारी है।
अनलपच्छ जो रहै अकाशा। निशि दिन रहै पवन की आशा॥
दृष्टिभाव तिन रति विधि ठानी। यह विधि गरभ रहे तिहि जानी॥

अनल पक्षी पृथ्वी से बहुत ऊपर शून्य में रहता है, जमीन पर आते ही मर जायेगा। वो सोता भी हवा में ही है, उसका कोई घोंसला नहीं होता। फिर हवा में ही खाता है और खाता भी हवा ही है, दाना नहीं चुगता है अनल पक्षी। वो विषय भी नहीं करता है, मात्र दृष्टि से अपनी मादा को गर्भवती कर देता है।

अंड प्रकाश कीन्ह पुनि तहवां। निराधार आलंबहिं जहवां॥
मारग माहिं पुष्ट भो अंडा। मारग माहिं विरह नौ खंडा॥

हवा में ही अब वो अंडा देता है और अंडा नीचे गिरना शुरू होता है। इतनी ऊँचाई से जब वो नीचे की ओर आता है तो आते आते रास्ते में ही वो अंडा पकता है। मुर्गी तो बैठकर सेती है, पर वो अंडा खुद ही सेह जाता है और फिर रास्ते में ही फूट भी जाता है। इतना ही नहीं—

मारग माहिं चक्षु तिन पावा। मारग माहिं पंख पर भावा॥
महि ढिग आवा सुधि भइ ताहिं। इहां मोर आश्रम नहिं आहीं॥

रास्ते में ही उसे आँखें भी आ जाती हैं, रास्ते में ही पंख भी निकल आते हैं। पृथ्वी पर गिरे तो मर जाता, पर पृथ्वी पर गिरने से पहले ही उसे सुधि भी आ जाती है कि उसका घर यहाँ नहीं है। इसलिए—

सुरति संभाल चले पुनि तहवां। मात पिता को आश्रम जहवां॥
अनलपच्छ तेहि लेन न आवैं। उलट चीन्ह निज घरहि सिधावैं॥

अब सुरति संभालकर वो खुद ही अपने घर की ओर चल पड़ता है। उसके माता पिता उसे लेने नहीं आते हैं। ठीक इसी तरह जब गुरु की कृपा होती है तो आत्मा खुद-ब-खुद अपने घर की ओर चलती है।

अब गुरु की कृपा क्या है? वास्तव में गुरु जो नाम रूपी अमोलक धन का दान देते हैं, वो ही शिष्य पर उनकी सबसे बड़ी कृपा है।

सभी रसायन मैं किया, नहीं नाम सम कोय ॥

कह रहे हैं कि सभी दवाएँ मैंने कीं, पर नाम के समान कोई दवा नहीं। पर यह सांसारिक नाम नहीं है। यह 52 अक्षर से परे निःअक्षर है, सजीव है, विदेह नाम है और गुप्त है। इस नाम का रहस्य केवल संतजन ही जानते हैं। इन नाम को पाकर जीव अनलपक्षी के समान खुद-ब-खुद अपने लोक की ओर चलता है।

यही बढ़ाई शब्द की, जैसे चुम्बक भाय।

बिना शब्द नहीं ऊबरै, के ता करे उपाय ॥

जैसे चुम्बक लोहे को अपनी ओर खींच लेता है, उसी तरह नाम भी जीव को सांसारिक बंधनों से छुड़ाकर अपनी ओर खींच लेता है और जीव खुद-ब-खुद अपने सही घर की ओर खिंचता चला जाता है।

वहाँ जाने में व्यक्तित्व की रूकावट आती है, आपे की रूकावट आती है, 'मैं' की रूकावट आती है।

साधो सो जन उतरे पारा, जिन मन तें आपा डारा ॥

कोई कहै मैं ज्ञानी रे भाई, कोई कहै मैं त्यागी।

कोई कहै मैं इंद्री जीति, अंह सबन को लागी ॥

कोई कहै मैं जोगी रे भाई, कोई कहै मैं भोगी।

मैं तें आपा दूरि न डारा, कैसे जीवै रोगी ॥

कोई कहै मैं दाता रे भाई, कोई कहै मैं तपसी।

निज तत नाम निश्चय नहिं जाना, सब माया में खपसी ॥

कोई कहै जुगति सब जानौं, कोई कहै मैं रहनी।

आतम देव से परिचय नाहीं, यह सब झूठी कहनी ॥

कोई कहै धर्म सब साधे, और बरत सब कीन्हा।

आपा की आँटी नहिं निकसी, करज बहुत सिर लीन्हा ॥

गरब गुमान सब दूरि निवारे, करनी को बल नाहीं।

कहैं कबीर साहिब का बंदा, पहुँचा निज पद माहीं ॥

जो मन की 'मैं' को छोड़ देता है वही पार उतर सकता है। कोई

कहता है कि मैं ज्ञानी हूँ, कोई कहता है कि मैं त्यागी हूँ, कोई कहता है कि मैंने इन्द्रियों को जीता है। इस तरह अहंकार सबको लगा हुआ है। कोई अपने को योगी कहता है, कोई कहता है कि मैं भोगी हूँ, मेरे पास धन-दौलत और संसार का ऐश्वर्य है, पर कोई भी 'मैं', 'तू' के अहंकार रूपी रोग को नहीं छोड़ता, फिर यह मानसिक रोगी कैसे जी सकता है! कोई कहता है कि मैं दाता हूँ, कोई कहता है कि मैं तपसी हूँ, पर कोई भी अपनी आत्मा से परिचित नहीं है, सब माया में उलझे हुए हैं। कोई कहता है कि मैं योग-साधना से पार होने की सब युक्तियाँ जानता हूँ, कोई कहता है कि मुझे पता है कि संसार में कैसे रहना है। आत्म-देव का परिचय किसी को नहीं है, इसलिए सब थोथी बातें ही करते हैं। कोई कहता है कि मुझे सब धर्मों का ज्ञान है और सब व्रतों को मैंने किया हुआ है, पर अहंकार की गाँठ दूर नहीं हुई, अहंकार से भरे कर्मों का बोझा ढो रहा है। साहिब कहते हैं कि जो सब प्रकार का घमण्ड निकाल देता है, अपनी करनी का अहंकार नहीं रखता, वो ही साहिब का बंदा है और वो आत्मदेव को जान उसमें पहुँच जाता है।

स्वामी विरजानन्द के पास स्वामी दयानन्द गये तो बाहर से ही द्वारा खटखटाया। विरजानन्द ने अन्दर से ही पूछा—

विरजानन्द : कौन है?

दयानन्द : यही तो जानने आया हूँ।

तो 'कौन हूँ!' क्या मोहन, सोहन आदि हूँ! ये संज्ञाएँ तो शरीर के कारण हैं। तो क्या शरीर हूँ! नहीं।

किसी ने बड़ा प्यारा कहा है—

मम देह है तू मानता, तब देह सै तू भिन्न है।

है माल के मालिक अलग, यह बात सबको मान्य है।।

कहा कि यदि शरीर को अपना मान रहे हो, आभास हो रहा है कि शरीर मेरा है तो स्पष्ट है कि तुम शरीर नहीं है, शरीर से भिन्न हो। कहा जाता है कि जब अमरदास तीन वर्ष के ही थे, तो एक दिन माँ ने

गोद में बिठाया हुआ था। अमरदास ने अचानक पूछ लिया—

अमरदास : मैं कौन हूँ, माँ?

माँ : तू मेरा लाडला बेटा है।

अमरदास : कहाँ है तुम्हारा बेटा?

माँ (उसके सिर पर हाथ रखते हुए): यह है मेरा बेटा।

अमरदास : यह तो सिर है।

माँ (उसे गले लगाते हुए) : यह है मेरा लाल।

अमरदास : यह तो शरीर है। यह कब आया तुम्हारे पास?

माँ (आश्चर्य से): यह तो शादी के बाद आया मेरे पास।

अमरदास : उसके पहले मैं कहाँ था? शरीर तो मैं हूँ नहीं, क्योंकि जब यह नहीं था, मैं तब भी था। जब यह नहीं होगा, मैं तब भी हूँगा। मैं पूछ रहा हूँ कि वो मैं कौन हूँ?

तो 'मैं' जो है, वो 'मेरा' नहीं हो सकता। मेरा नाम सोहन है, मेरा बेटा, मेरा हाथ आदि तो मैं से अलग हैं। तो मेरा शरीर और मेरा मन का भी जो आभास हो रहा है, ये भी नहीं हो सकते न मैं।

'कौन हूँ' प्रश्न संसार का महत्वपूर्ण प्रश्न है। आखिर आप आत्मा ही तो हैं। हम सब एक बात कहते हैं, आत्मा अजर है, अविनाशी है, आनन्दमयी है, अनाश्रित है, किसी पर आश्रित नहीं। जैसे शरीर तो आश्रित है, भोजन नहीं मिले, उसका अंत है, उष्मा नहीं मिले, तो भी अंत है, हवा नहीं मिले, तो भी अंत है। पर आत्मा का किसी देश, काल या अवस्था में नाश नहीं है। क्योंकि यह परमात्मा का अंश है। इसलिए जो गुण परमात्मा में हैं, वो ही इसमें भी हैं। परमात्मा के गुण ही इसमें आए। यह साधारण नहीं है। हरेक चाहता है, आत्मा का ज्ञान हो और मुक्ति की प्राप्ति हो। ये दो चीजें भक्ति में स्थान रखती हैं।

तो मैं, मेरा से अलग है, इसलिए मेरा शरीर, मेरा मन भ्रमांक है। यह नहीं हूँ। सच यह है कि 'मैं' भी नहीं हूँ। वो मैं, मेरा—दोनों से परे है। वहाँ न 'मैं' है, न 'तू'। यदि 'मैं' ही नहीं तो 'तू' कहाँ से आया।

‘मैं’ क्या है ? ‘मैं’ ही है—मन। उस चेतन सत्ता में मन मिला तो आत्मा नाम दिया, इसलिए जब तक आभास हो रहा है कि ‘मैं’ एक आत्मा हूँ, जब तक याद आ रहा है कि ‘मैं’ फलाना हूँ, तब तक मन है।

जो आप वर्तमान में अपने को अनुभव कर रहे हैं कि मैं हूँ, यही है मन, यह आत्मा नहीं, यह आपका स्वरूप नहीं है। इसलिए जब आप अपने देश में चलेंगे तो यह आभास समाप्त हो जायेगा कि फलाना हूँ। कुछ याद नहीं होगा। अपने को भुलाकर ही वहाँ जाना होता है। जब तक इस संसार का कुछ याद आ रहा है, तब तक मन मिला हुआ है। जब आत्मा वहाँ पहुँचकर अपने को देख लेती है, तो इस संसार का कुछ याद नहीं रहता। कौन था, यह भी नहीं। वहाँ जाते समय ही यह स्मृति गौण होती जाती है कि फलाना हूँ। पर जब तक यह याद आ रहा है कि फलाना हूँ, तब तक मन है यानी जब आत्मा शुद्ध रूप से अपने को देख लेती है तो याद नहीं रहता कि कौन हूँ। इस संसार का बोध तब समाप्त हो जाता है। फिर अपने आत्म-स्वरूप का बोध हो जाता है, सत्य का बोध हो जाता है और फिर परम सत्ता में समाकर हर तरह की ‘मैं’ समाप्त हो जाती है और परमानन्द में खो जाता है।

परमानन्द में ‘मैं’ का आभास बिलकुल भी समाप्त हो जाता है। संसार में आपको कभी बहुत सुख मिलता है तो आप थोड़ी देर के लिए भूल जाते हैं कि ‘कौन हूँ’। यह अवस्था आती है। यदि सुख में आप अपनी सत्ता को थोड़ी देर के लिए भूल कर उसमें मग्न हो जाते हैं तो कल्पना कीजिए कि उस परमानन्द में ‘मैं’ का आभास कैसे होगा। इसलिए वहाँ न ‘मैं’ है न ‘तू’ है। कष्ट में ही मैं का अधिक आभास आपको होता है। आप नाटक, पिक्चर आदि में भी पायेंगे कि यदि आपको वो पिक्चर बहुत अच्छी लग रही है, आपको उसमें आनन्द मिल रहा है तो आप अपनी व्यक्तिगत सत्ता को भूलने लगते हैं, उसी में रमने लगते हैं। यह तुलना तो उस आनन्द से नहीं की जा सकती है, पर इस संकेत को समझिए। प्रेम में भी आप कभी अपने को भूल जाते हैं। वो

तो प्रेम का सागर है। जब वहाँ पहुँचोगे तो आधे मिनट बाद भूल जाओगे कि कोई संसार भी था। अपने स्वरूप का बोध भी हो जायेगा, पर वहाँ ऐसा आनन्द होगा कि उसी में खो जाओगे और भूल जाओगे कि 'मैं' हूँ। परम आनन्द ही आनन्द है वहाँ, कोई दुख का निशान भी नहीं।

साधनाकाल में जब शरीर से प्राण ऊपर उठते हैं तो आभास होता है कि शरीर नहीं हूँ, पर जा रहा हूँ, यह आभास होता है, क्योंकि प्राणों में ही फँसा है। लगेगा कि मैं तो इतना छोटा हूँ। जब प्राणों से भी निकल शून्य शिखर पर पहुँचेगा तो भी आभास होगा कि हूँ। उस समय अपना वजूद नष्ट होता आभासित होगा। बस, उस अपने सांसारिक वजूद को, जो वास्तव में मन के धोखे से आपने अपना मान रखा है, को मिटा दिया तो वास्तव में 'मैं कौन हूँ', इसका ज्ञान हो जायेगा।

आपा खोवे आप को चीहने, तब मिले ठौर ठिकाना।।

अपने स्वरूप को पा लोगे, उसे देख लोगे तो फिर कुछ ही देर में 'मैं हूँ' का आभास भी समाप्त हो जायेगा।

तो जीव, आत्मा आदि संज्ञाएँ मनुष्य को समझाने के लिए दी गयीं। संतों ने चेतन सत्ता को हंस कहा, जिसे जहाँ से छूटना है। आत्मा भी कहना पड़ा ताकि दुनिया सरलता से समझ सके। जो आप वर्तमान में अपने को अनुभव कर रहे हैं कि 'मैं' हूँ, यही है मन। जब तक यह आभास रहेगा कि 'मैं हूँ', समझो मन है। जब हंस में से मन निकल जाता है और हंस अपने देश चला जाता है तो यह आभास समाप्त हो जाता है कि 'मैं हूँ'। वहाँ से पहले जब तक आभास हुआ कि 'मैं' तो मन नहीं हूँ, कुछ और (आत्मा) हूँ, तो भी मन है, क्योंकि आभास हो रहा है कि 'मैं' हूँ। वर्तमान में तो मन ही मन है, चेतन सत्ता गुम है। जब आभास हुआ कि मन नहीं हूँ, कुछ और हूँ, जिसे आत्मा कहा गया या जिसे जीव कहा गया तो भी मन मिला है, पर थोड़ा सा। इसलिए जब चेतन सत्ता मन की सीमा से परे अपने देश चली जाती है तो यह आभास समाप्त हो जाता है कि 'मैं' फलाना हूँ, कुछ याद नहीं रहता। अपने को भुलाकर ही

वहाँ जाते हैं और वहाँ परमानन्द में खोकर भी अपने पाए हुए आपे की सुध भूल जाती है.....परम....परम...परम आनन्द में खो जाना होता है।

..... तो मन की प्रेरणा से पाँच तत्व से बने माया के शरीर में जीवात्मा आनन्द खोज रही है। पाँचों की पाँच -पाँच वृत्तियाँ हैं, पाँचों के रंग हैं। शरीर में वीर्य की उत्पत्ति से वासना है। यह जल तत्व है। जल तत्व से वासना की उत्पत्ति है। हाड़, माँस, रोम आदि पृथ्वी तत्व है। भूख, प्यास आदि अग्नि तत्व से उत्पन्न होते हैं। शब्द, रूप आदि आकाश तत्व से उत्पन्न होते हैं। अब रंग। पृथ्वी का रंग पीला और स्वाद मीठा है। पाँच तत्व का पूरा खेल है। जल का रंग सफेद, वायु का नीला है। दूर से आकाश में नीला देखते हैं, वायु है। इस तरह अग्नि का रंग लाल है और आकाश का काला। इसलिए शून्य अँधकारमय है। शून्य में अँधकार है; मन की क्रियाएँ नहीं दिखती। मन शून्य गुफा में निवास कर रहा है। यहीं से अज्ञान उत्पन्न हो रहा है। इस तरह पूरी दुनिया का आधार अज्ञान है। अज्ञान से ही संसार का अस्तित्व है।

फूलों से खुशबू आयी, महक आयी, नाक ने आभास किया, यह आत्मा ने नहीं किया। कभी कभी कुछ कहते हैं कि इसकी आत्मा खाने को कह रही है। खाना मुँह का विषय है। आत्मा में मुँह नहीं। इसे क्या जरूरत पड़ी! कभी कहते हैं कि इसकी आत्मा घूमने को कह रही है। आत्मा न भीतर है, न बाहर, यह घूमना चाहेगी!! नहीं, कभी नहीं। यह पैर, आँखें आदि घूमना चाहते हैं। आत्मा मन के निर्देश से सभी काम किये जा रही है। मन के संग रहकर अपने को मन मान लिया इसने। जो जो मन कह रहा है, सत्य मान रही है। मन कहता है सुख तो सुख मान रही है, मन कहता है दुख तो दुख मान रही है। मैं मन पर बहुत कहता हूँ, क्योंकि आपका बैरी केवल मन ही है, आत्मा को दुखों में फेंकने वाला मन ही है। मन की इच्छाओं की पूर्ति में आत्मदेव कुल्ली की तरह लगा है।

धन जीवन का आधार है। जीवन के लिए रक्त चाहिए, तेज

चाहिए, उसके लिए भोजन चाहिए और तरह-तरह के खाद्य पदार्थ पैसे से ही आयेंगे। इसलिए धन की जीवन में बड़ी आवश्यकता है। दरिद्र होना संसार का सबसे बड़ा दुख है। पैसे की ज़रूरत को हम सब अच्छी तरह समझते हैं। भाइयो, पैसे से ज़्यादा आत्म ज्ञान की ज़रूरत है, पर हमने उसे नज़र-अंदाज़ कर दिया है। पैसे की ज़रूरत को समझकर यह इंसान भागीरथी प्रयास किये जा रहा है। कोई मजदूर कड़कती धूप में भी सड़क पर लुक डालने में लगा है। क्यों? वो पैसे की एहमियत को जानता है।

जब तब आत्म-ज्ञान के महत्व को नहीं जानेंगे, तब तक प्रयास नहीं करेंगे। धन से करोड़ों गुणा ज़्यादा महत्व है आत्म-ज्ञान का। धन उतना ही कमाओ, जितनी आवश्यकता है। क्योंकि उसके लिए ताक़त लगती है, सुरति लगती है।

आत्मा को किसी चीज़ की भी ज़रूरत नहीं है। आत्मा को किसी स्वाद से कोई मतलब नहीं है, किसी शब्द से कोई मतलब नहीं है, किसी सुगंध-दुर्गंध से कोई मतलब नहीं है, किसी इंद्रि से कोई सरोकार नहीं है। इंद्रियाँ न होने से विषय-विकार नहीं हैं। इसमें मन का अभाव होने से चाह भी नहीं है, बुद्धि भी नहीं है। तो फिर क्या पागल है? नहीं, बुद्धि से परे है। इसलिए इसका न कोई मित्र है, न शत्रु। फिर यह निःतत्त्व है। इसके कारण सोने-जागने से परे है। 'मन बुद्धि चित अहंकार न कहिये, ज्यों का त्यों कर जाना ॥' यह शब्द, रूप, रस से भी परे है। कोई भी तत्त्व आत्मा को प्रभावित नहीं कर सकता है।

एक समय था जब मैं रोटी नहीं खाता था, सोता भी नहीं था। एक आदमी रोटी खा रहा था तो मैंने कहा कि तुझे नहीं पता है कि यह तू नहीं खा रहा है। वो हँस पड़ा। वो बड़ी जोर से हँसा, सबको कहने लगा कि यह पागल हो गया है। मैं चुप हो गया, मैंने कहा कि दुनिया को सत्य कहो तो पागल कहती है। बारीक बात करनी ही नहीं है। शास्त्रों में भी आता है कि पहले आदमी भोजन नहीं खाता था। आत्मा रह लेगी तो भी, एक विधि है।

सभी शरीर बन कर जी रहे हैं। एक आनन्द ढूँढ़ रहे हैं। क्योंकि आत्मा आनन्द की आदि हो चुकी है। यह उस आनन्द में रह चुकी है। यह आनन्द स्वरूपिनी है। जो गद्दे पर सोने वाला है, उसे जमीन पर लेटने को कहो तो उसे नींद नहीं आयेगी, करवट ही लेता रहेगा सारी रात। तो हरेक आनन्द खोज रहा है। कोई किसी में, कोई किसी में। कोई पैसे में, कोई विषयों में ढूँढ़ रहा है आनन्द। उसे रात दिन फिर वही नारी ही दिखती है, वो उन्हीं में खोया रहता है। राजा लोगों ने बड़ी-बड़ी रानियाँ रखीं, विषय किये, पर सुख नहीं मिला।

दुनिया का हरेक आदमी नशे में घूम रहा है। देखता हूँ कि कोई अपने दोत्रे-पोत्रे को उठाए-उठाए फिरते हैं, चूमते-चाटते रहते हैं, कोई देखता हूँ कि कई-कई घण्टे लड़कियों के इंतजार में खड़े रहते हैं। फिल्मी दुनिया वाले भी कभी-कभी बड़ी प्यारी बात कह देते हैं। एक ने कहा—

नशे में हूँ लेकिन, मुझे यह पता है,
कि इस जिंदगी में, सभी पी रहे हैं।
कोई पी रहा है, लहू आदमी का,
किसी को नज़र से, पिलायी गयी है।
किसी को नशा है, जहाँ में खुशी का,
किसी को नशा है, गमे जिंदगी का॥

दुनिया में सबको नशा है। कोई इंसान का लहू पी रहा है, किसी को नज़रों से पिलायी गयी है, कोई सुख के नशे में है, कोई दुख के नशे में। वो कह रहा है कि नशे में हूँ लेकिन मुझे पता है कि सभी पी रहे हैं। मुझे तो इसमें रुहानियत नज़र आई। मैं बड़ी गहराई में गया। इतना तो जिसने लिखा होगा, वो भी नहीं गया होगा। सच है, सभी नशे की गोलियाँ खाए जा रहे हैं। कोई काम के नशे में है, कोई क्रोध के नशे में है, पूरी दुनिया नशे में है। भजन का नशा किसी को पता नहीं है। उसमें ही है सच्चा आनन्द। 'नाम खुमारी नानका चढ़ी रहे दिन रात॥' वो अजीब नशा है। जब वो मज़ा मिल जाता है तो बाकी मज़े फीके हो जाते

हैं। और जितने भी नशे हैं, उनका अंत दुख है। इसलिए आत्मा का मज़ा लेना ज़रूरी है, उसका ज्ञान पाना ज़रूरी है। जब तक ऐसा सद्गुरु नहीं मिल जाता, जो हमें उस मजे से जोड़ सके, तब तक हम संसार के मजे में ही उलझे रहेंगे, सांसारिक नशा ही हम पर चढ़ा रहेगा और आखिर हम दुख को ही प्राप्त करेंगे।

आत्म ज्ञान के लिए बाधक क्या है? इस पर चिंतन करना होगा। एक तरफ तो हम कहते हैं कि यह अजर है, अमर है। फिर क्या बात है? साहिब कह रहे हैं— ‘मन तरंग में जगत भुलाना।’

आपके पास वायु पहुँच रही है। अगर फूलों से होती हुई वायु आयेगी तो खुशबू के साथ आपके अंदर प्रविष्ट होगी। वायु तो वही थी। यदि गंदगी से होती हुई आयेगी तो दुर्गन्ध लायेगी। इस तरह कल्पनाओं का मिश्रण हो रहा है आत्मा में। आत्मा मन को अपना वजूद मान रही है। ‘मैं’ मन के स्वरूप का नाम है। यह ‘मैं’ पूरा मन है, यह ‘मैं’ अंतःकरण है, यह ‘मैं’ व्यक्तित्व है। यह ‘मैं’ कैसे बनी? जैसा जिसका चिंतन है, उसी के अनुसार उसकी मैं बनती है, जैसी सोच होगी, वैसा व्यक्तित्व बनेगा। इसमें काफी चीज़ें हैं। मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार इस मैं में हैं। इस ‘मैं’ को मारना चिंतन को रोकना है, इस मैं को मारना संकल्प को रोकना है, इस मैं को मारना चित्त को रोकना है। चार प्रक्रियाएँ मनुष्य में स्वाभाविक रूप से हो रही हैं, इन्हें रोकना ही मैं को मारना है। इच्छाओं का स्वाभाविक उद्गम हो रहा है इस ‘मैं’ में। इच्छाओं को रोकना ही मैं को मारना है। इसमें निश्चय हो रहा है, उसे रोकना ही मैं को मारना है। इसमें चिंतन हो रहा है। चाहे-अनचाहे यह चिंतन हो रहा है।

हमारा अहंकार क्रिया कर रहा है, हमारी बुद्धि फैसला कर रही है, हमारा मन इच्छाएँ कर रहा है। इनके बीच में आत्म तत्व ढक गया है। इसलिए आत्मा का बोध नहीं हो रहा है। जब भी अपने अंदर झाँकी मारेंगे तो ये ही दिखेंगे, मन की क्रियाएँ दिखेंगी। किसी के अंदर झाँकी मारेंगे

तो भी ये ही दिखेंगे। यह फैसला इस तरह से ले रहा है, यह सोचता इस तरह से है, यह काम इस तरह से करता है। इन चारों के बीच आत्म रूप ढक गया है। इसलिए साहिब ने कहा—

तेरा बैरी कोई नहीं, तेरा बैरी मन ॥

सब कामों को प्रेरणा देने वाला मन है। हरेक क्रिया मन की है। कोई भी इस बात को नहीं समझ पा रहा है, मन सबको प्रेरित किये जा रहा है, सभी काम किये जा रहे हैं।

**काम काम सब कोई कहे, काम न चीन्हे कोय।
जेती मन की कल्पना, काम कहावे सोय ॥**

एक क्षण के लिए भी मन शांत नहीं हो रहा है। यदि एक पल के लिए भी मन स्थिर हो जाए तो आत्म-साक्षात्कार हो जायेगा।

**तन थिर मन थिर वचन थिर, सुरति निरति थिर होय।
कहैं कबीर वा पल को, कल्प न पावै कोय ॥**

स्वाँसा चल रही है, एक पल भी रुक नहीं रही है। सुरति भी एक पल के लिए रुकने का नाम नहीं ले रही है। वो मन के संकल्पों का हल ढूँढ़ने में लगी है। मन इतना होशियार है कि एक पल के लिए भी स्थिर नहीं होने दे रहा है। एक पल भी बुद्धि को स्थिर नहीं होने दे रहा है, एक पल भी निरति को स्थिर नहीं होने दे रहा है। 'तीन लोक में मनहिं विराजी। ताहु न चीन्हें पण्डित काजी ॥' इसका वेग भी बड़ा ताकतवर है। चाहे-अनचाहे आत्मा को काम, क्रोध आदि में शामिल होना पड़ रहा है। क्या योग से, किसी क्रिया से मन को निग्रह किया जा सकता है। नहीं, बेवकूफी है, यदि कोई करने की कोशिश कर रहा है। क्यों? क्योंकि जितनी भी क्रियाएँ करते हैं, उस अवस्था में मन ही तो चेतन है, मन ही तो कर्त्ता है। मन को चेतन करके मन को एकाग्र कर रहे हैं। यह तो मन को मारकर करना है। तो कैसे होगा? साहिब कह रहे हैं—

**कितने तपसी तप कर डारे, काया डारी गारा।
गृह छोड़ भये सन्यासी, तऊ न पावत पारा ॥**

गण यानी बी. आई. पी. लोग, गंधर्व यानी कलाकार लोग। किसी को नहीं छोड़ा है मन ने। जो-जो चाह रहा है, वही तो करवा रहा है। दिव्य पुरुषों के जीवन पर चिंतन करते हैं तो पता चलता है कि मन ने सबको नचाया। कहीं शादी करवा दी, कहीं हत्या करवा दी, कहीं अन्य बुरा काम करवा दिया। हमने उन्हें लीला या माया में शुमार कर दिया।

साहिब मन के विशेषज्ञ थे। तो आत्म ज्ञान की तरफ कैसे जाए? कोई विधि है क्या? नहीं। योग, क्रियाएँ, मुद्राएँ कुछ नहीं कर सकती हैं। क्योंकि इनको करने में मन भी तो होगा। मन अपना नाश खुद करेगा क्या!!!

...तो आत्मा को कोई भ्रमित करने वाला है तो मन। जैसे आवाज़ शून्य से टकराकर जा रही है, इसमें वायु का सहयोग भी है। तभी शब्द हो रहे हैं। ऐसे ही आत्मा की शक्ति बिना चारों का कोई वजूद नहीं है। यह मन गजब का काम कर रहा है। यह आत्मा की शक्ति से संचालित होकर आत्मा को भी बाँध रहा है। मन की प्रेरणा से आत्मा अपने को बाँध रही है। जैसे कुत्ते ने शीशे में अपने स्वरूप को ही दूसरा कुत्ता मान लिया, ऐसे ही आत्मा ने मन को ही अपना रूप मान लिया। मन आत्मा को मूल ज्ञान की तरफ नहीं चलने देता है। अगर यह अपने को जान लेगी तो मन का वजूद ही खत्म हो जायेगा। इसलिए अपने को चेतन करने के लिए यह इसे अपने स्वरूप से परे रख रहा है। यदि आत्मा अपने को जान गयी तो फिर मन कुछ नहीं कर पायेगा, फिर संकल्प भी नहीं हो पायेंगे। पर आत्मा जो खुद अपना नाश कर रही है, यह बड़ा अनर्थ हो रहा है। मन की उर्जा आत्मा है। आत्मा बिना सोचे, बिना विचार किये अपनी पूरी उर्जा मन को दिये जा रही है।

योगावशिष्ट में संवाद आता है। वशिष्ट जी राम जी से कहते हैं कि आत्मा को देख लेने के बाद जीव संसार-सागर से पार हो जाता है। तब राम जी आश्चर्य से पूछते हैं कि आत्मा का ऐसा क्या स्वरूप है कि मात्र इसे देखने के बाद मनुष्य संसार से पार हो जाता है।

वशिष्ठ जी कहते हैं कि तब यह ज्ञान हो जाता है कि इस संसार का कोई भी पदार्थ मुझ तक नहीं पहुँच सकता है, संसार के किसी भी पदार्थ की मुझे ज़रूरत नहीं है।

हमारा अज्ञान ही है कि शरीर को अपना स्वरूप मान रहे हैं। इस शरीर के लिए आहार की ज़रूरत पड़ती है, उसके लिए लग गये हैं। संसार के जितने भी कर्म हैं, शरीर की पूर्ति के लिए किये जा रहे हैं, आत्मा के कल्याण के लिए कुछ नहीं कर रहा है कोई। ...तो कहा—हे राम! आत्मा को जानने के बाद ज्ञान हो जाता है, पता चल जाता है कि आत्मा के लिए किसी भी पदार्थ की ज़रूरत नहीं है। फिर मन चाहकर भी आत्मा को भ्रमित नहीं कर सकता है। विषय विकार भी छूट जाते हैं। जैसे रस्सी साँप का भ्रम देती है। पर जब पता चल जाता है कि यह रस्सी है, तब कोई चाहे कि डरूँ तो भी नहीं हो पायेगा। ऐसे ही आत्मा को जानने के बाद चाहकर भी संसार के पदार्थों में नहीं रम सकता है। साहिब ने आत्म ज्ञान के लिए बहुत कुछ कहा।

हंसा तू तो सबल था, अटपट तेरी चाल।

रंग कुरंग में खो गया, अब क्यों फिरत बेहाल ॥

साहिब ने हंस कहा इस चेतन सत्ता को। यह हंस क्या है? यह जीव क्या है? यह परमहंस क्या है? शरीर में बैठ प्राणों को धारण करके स्वाँस लेने वाला जीव है। आप अपनी आँखों के पीछे ध्यान को एकाग्र करें तो पायेंगे कि कोई चेतन सत्ता स्वाँस ले रही है। वो ही है आत्मा। जब आत्मा शरीर को मैं मानती है तो कहते हैं शरीरधारी। जब थोड़ा ज्ञान हो जाता है, पर मन में ही रहती है तो जीवात्मा संज्ञा होती है। जब पंचभौतिक शरीर से परे हट जाता है तो आत्म अवस्था है।

आत्मा चार अवस्थाओं में घूमती है। ये सब अवस्थाएँ भी स्वप्न हैं। ये चारों माया हैं। पूरे ब्रह्माण्ड में जो भी आभास कर रहे हैं, सब स्वप्न है। कुछ कहते हैं कि यह संसार स्वप्न है। नहीं, यह पूरा ब्रह्माण्ड स्वप्न है। साहिब कह रहे हैं—

नाद बिंद योग स्वप्न, जीव ईश भोग स्वप्न,
भूमि आव तार निराकार स्वप्न रूप है।

जीव भी स्वप्न है। आत्मा जब प्राणों को धारण करती है, तो इसकी संज्ञा है जीव। इसलिए यह भी स्वप्न है। ईश्वर भी स्वप्न है। जब परमात्मा साकार रूप में अवतार धारण करता है तो उसकी संज्ञा है— ईश्वर।

पाप पुण्य करै स्वप्न वेद औ वेदान्त स्वप्न,
वाचा और अवाचा स्वप्न रूप सो अनूप है।

बोलना, सुनना भी स्वप्न है। वाह!

चंद्र सूर्य भास स्वप्न पंच में प्रपंच स्वप्न,
स्वर्ग नर्क बीच बसै सोऊ स्वप्न रूप है।

चाँद, सूर्य आदि भी स्वप्न हैं, स्वर्ग, नरक आदि भी स्वप्न हैं।

ओहं औ सोहं स्वप्न पिण्ड और ब्रह्माण्ड स्वप्न,
आत्मा परमात्मा स्वप्न रूप सो अरूप है।

आत्मा भी स्वप्न है। आपको वहम आ जायेगा कि आत्मा कैसे स्वप्न है! चेतन शुद्ध सत्ता को आत्मा तब कहते हैं, जब इसमें मन मिल जाता है। जब चेतन सत्ता मन के संसर्ग में आती है, मन में मिल जाती है, तो आत्मा कही जाती है। और परमात्मा नाम मन का है। जैसे दूध जमाया तो संज्ञा हुई दही। मन के मिश्रण के बाद आत्मा नाम पड़ा, इसलिए यह शुद्ध चेतन सत्ता नहीं, इसलिए स्वप्न कहा। और परमात्मा निरंजन को कहते हैं। वो भी स्वप्न है।

जरा मृत्यु काल स्वप्न, गुरु शिष्य बोध स्वप्न,
अक्षर निःअक्षर आत्मा स्वप्न रूप है।

गुरु शिष्य का आभास भी स्वप्न है। पंच भौतिक तत्व है, इसलिए स्वप्न, पर सद्गुरु स्वप्न नहीं है, क्योंकि वो तत्व सुरति में है। जब आगे चलती जाती है, तो शुद्ध होती जाती है। आप भ्रमित नहीं होना।

कहैं कबीर सुन गोरख बचन मम,
स्वप्न से परे सत्य सत्य रूप भूप है।
सोई सत्यनाम सत्यलोक बीच वास करे,
नहीं कहूँ आवे नहीं जावे सत्यरूप है ॥

स्वप्न से परे एक सत्य है। इन सबसे परे है वो। उसका वास सत्य-लोक में है। वो कभी इस संसार में नहीं आता। वही सत्य है, जो कभी उत्पन्न नहीं होता, विनाश को प्राप्त नहीं होता। वहाँ मन का वजूद नहीं है, वहाँ मन की इच्छा नहीं है, वो मन की सीमा से बाहर है, इसलिए उसे सत्य कहा।

सत्य सोई जो विनशे नाहीं ॥

पूरा ब्रह्माण्ड ही स्वप्न है। चार अवस्थाएँ भी स्वप्न हैं। इन्हीं के द्वारा संसार का आभास हो रहा है।

चेतना का खेल है। महापुरुषों के पास विराट् चेतना होती है।

एक समय गोरखनाथ जी की साहिब से गोष्ठी हुई। गोरखनाथ की उम्र तब 500 साल की थी। वो 700 साल तक रहे। गोरख जी ने व्यंग्य से पूछा—

कबते भये बैरागी कबीर जी, कबते भये बैरागी।

साहिब ने कहा—

नाथ जी हम जबसे भये वैरागी, मेरी आदि अंत सुधि लागी।
धुधूकार आदि को मेला, नहीं गुरु नहीं चेला।
जबका तो हम योग उपासा, तबका फिरों अकेला।

कहा—जब न गुरु था, न चेला था, तब का सन्यासी हूँ। अब सवाल उठा कि क्या इतनी अवस्था थी! कह रहे हैं—

जो बूझो सो बावरा, क्या उमर हमारी।
असंख्य युग परलय गई, तबके ब्रह्मचारी॥
कोटि निरंजन हो गये, परलोक सिधारी।
हम तो सदा महमूब हैं, सोहं ब्रह्मचारी॥

दश कोटि ब्रह्मा भये, नौ कोटि कन्हैया।
 सात कोटि शंभू भये, मोरी एक पलैया॥
 कोटिन नारद हो गये, महम्मद से चारी।
 देवतन की गिनती नहीं, क्या सृष्टि बिचारी॥
 नहीं बूढ़ा नहीं बालक, नहीं भाट भिखारी।
 कहै कबीर सुन गोरख, यह उमर हमारी॥

जो परम चेतन अवस्था में रहने वाला है, वो चाहे इस लोक में रहे, चाहे उस लोक में, नीचे नहीं आता है; उसका ज्ञान कम नहीं होता है, वो दूसरी अज्ञानमय अवस्थाओं को प्राप्त नहीं होता है। इसलिए कह रहे हैं कि करोड़ों प्रलय हो गयी, तबका ब्रह्मचारी घूम रहा हूँ। पलटू साहिब भी कह रहे हैं—‘कोटि प्रलय हो गयी, हम न मरण हारा।’ मौत क्या है! यह चार अवस्थाओं का खेल है—सुषुप्ति, स्वप्न, जाग्रत, तुरीया। हम इन चार में घूमते रहते हैं। सुषुप्ति अत्यंत कुंद अवस्था है। जब भी वहाँ पहुँच जाता है इंसान तो उसकी चेतना कुंद हो जाती है। आपको इन अवस्थाओं में इसलिए भुलाया गया कि आप पिछले जन्मों की सुधि न पा सकें, यह जान न सकें कि क्या थे। सुषुप्ति में आदमी की चेतना जाग्रत से 1000 गुणा कम होती है। इसलिए याददाशत आत्मा नहीं है, मन की अवस्था है। कभी सुषुप्ति में पहुँच जाते हैं। इसे गहरी निद्रा भी कहते हैं। फिर जब उठते हैं तो जानने की कोशिश करते हैं कि कहाँ हूँ! थोड़ी देर में जब चेतना आज्ञाचक्र में आती है तो मालूम पड़ता है कि यहाँ हूँ। जब आपकी चेतना आज्ञाचक्र में होती है तो आप होश में होते हैं। कभी ऐसे भी किसी को कह देते हैं कि क्या बात है, होश में आओ। वो मानो सोकर उठा है। अब उठकर होश में कैसे आना है! वो फौरन अपनी सुरति उठाकर आँखों में लाता है। यह है होश में आना। मन आपको सुषुप्ति, स्वप्न आदि में काफी देर घुमाकर बेहोश रखना चाहता है। मृत्यु के समय भी ऐसी अवस्था में ला दिया जाता है।

कुछ को पूर्व जन्म याद होता है, क्योंकि सुषुप्ति में भी विस्मृति

नहीं हुई। वे चेतन रहे। इसलिए पूर्वजन्म की सुध रहती है।

अब जाग्रत में आप देखते हैं, पर सुषुप्ति कुंद थी। जब स्वप्न में जाते हैं तो भी निराली अवस्था होती है। जाग्रत में बैठे हैं तो छल है, दिल दिमाग़ एक नहीं है, पर स्वप्न अवस्था इस दृष्टि से बड़ी ही यथार्थ है, आदमी का दिल दिमाग़ एक होता है। जाग्रत में तो छल है, बनावट है। आप किसी के लिए कह देते हैं कि अच्छा है, पर दिल से नहीं कहते हैं।

जाग्रत में हम जो-2 देख रहे हैं, सब सच्चा लग रहा है। यह खेल है अवस्था का।

जिस भी अवस्था में आत्मा जाती है, वो ही नित्य लगती है। नानक देव जी कह रहे हैं—

ज्यों सपना पेखना, जग रचना तिम जान।

इसमें कछु साँचो नहीं, नानक साँची मान॥

कह रहे हैं कि मेरी बात को सच मानना, इसमें कुछ भी नित्य नहीं है। यह सब स्वप्न की तरह है। साहिब भी कह रहे हैं—

जगत है रैन का सपना। समझ न कोई यहाँ अपना॥

तो चौथी अवस्था में ब्रह्माण्ड दिखता है। वही सच लगता है। यह प्रज्ञावस्था होती है। प्रज्ञावस्था में देवत्व रहता है। पर वो भी स्वप्न है। वो भी बंधे हैं। जैसे शराब पिया तो नशे की अवस्था में पहुँच गया; अब कुछ भी कर सकता है, कई भूलें करता है। इस तरह जब तक इन अवस्थाओं में है, कुछ भी कर सकता है, मन के बंधन में है, पूरी होश नहीं है।

फिर प्रज्ञावस्था के बाद महाप्रज्ञावस्था आती है। वो भी भ्रमांक है। देवता लोक तो प्रज्ञावस्था में रहते हैं। पर उसमें हजार गुण ज्यादा अभी से ज्ञान होता है; जाग्रत से हजार गुणा अधिक ज्ञान होना कोई साधारण बात नहीं है; बहुत ज्ञान होता है। पर वो भी स्वप्न है। और महाप्रज्ञा में योगेश्वर रहते हैं। केवल छः योगेश्वर इस अवस्था में पहुँचे। पर यह भी स्वप्न है। वाह! स्वप्न बड़ा लंबा है।

कोई कोई पहुँचा ब्रह्म लोक में, धर माया ले आई॥

यह आत्मा विराट् चक्र में है।

तुरीयातीत ताहीं के पारा। विनती करे तहँ दास तुम्हारा ॥

तुरीयातीत में भी मन का मिलन होता है। जैसे दही में लस्सी होती है, मक्खन निकाल देते हैं, लस्सी तो भी रहती है, घी निकालते हैं, लस्सी फिर भी रह जाती है। फिर उसे आँच देकर लस्सी को पूरी तरह निकाल सकते हैं। उसकी बात ही कुछ और होगी। वो शुद्ध घी है। पर जिस घी में लस्सी की मात्रा है, वो कभी भी खराब हो सकता है।

चार अंतःकरण के संग आत्मा खराब।

जैसे नीच संग से, ब्राह्मण पियत शराब ॥

इसलिए इन अवस्थाओं में पहुँचकर भी शुद्ध आत्मज्ञान नहीं है। कभी-2 कुछ आत्माएँ मरने के बाद भी मिलने लग जाती हैं, क्योंकि एक ऐसी अवस्था को प्राप्त हो गया कि शक्ति आ गयी। आत्मा के ऊपर पर्दे हैं। आत्मा के अंदर कुछ नहीं डाला जा सकता, पर इसके ऊपर आवरण डाल दिये गये हैं।

जीव ब्रह्म और माया सृष्टि चेतना का खेल है। पशु लोग स्वप्न अवस्था में हैं। मनुष्य जाग्रत में, देव तुरीया में, महान योगेश्वर तुरीयातीत में। उसके परे जो चेतना कभी नहीं बदलती, वो संत कहलाता है। 'नानक संत अकाल सदाहिं ॥' उसमें विकार नहीं आ सकते हैं। लोहा था तो जंग लग सकती थी, जब पारस के स्पर्श से सोना बन गया तो कीमती हो गया। अब जंग नहीं लग सकती। एक संत ऐसी अवस्था को प्राप्त हो जाता है, फिर मन में नहीं आता। लोहा सोना बन गया तो जंग का खतरा हमेशा के लिए समाप्त हो जाता है।तो कह रहे हैं कि करोड़ों निरंजन हो गये। शून्य सृष्टियाँ भी समाप्त हो जाती हैं, महाशून्य की भी समाप्त हो जाती हैं। कहा—मेरे सामने 10 करोड़ बार ब्रह्मा जी जन्म ले चुके हैं, सात करोड़ बार शम्भू हो चुके हैं, पर मेरा एक पल होता है तब। शास्त्रों में भी आता है कि जब मृत्यु लोक का एक वर्ष होता है, पितर लोक का एक दिन होता है। पितर लोक का एक वर्ष होता है

तो ब्रह्मा जी का एक पल होता है। ब्रह्मा जी के सो वर्ष विष्णु जी एक पल होता है। विष्णु जी के सो वर्ष शिवजी का एक पल होता है। शिवजी का एक पूरा जन्म माया का एक पल होता है। माया का पूरा जीवन निरंजन का एक पल होता है और निरंजन के कई जन्म होते हैं, तब साहिब कह रहे हैं कि एक पल होता है मेरा। लोग तो लड़ाई करने आ जाते हैं।तो कह रहे हैं कि मेरी आयु पूछ रहे हो तो यह है मेरी आयु। यानी इस आत्मावस्था से नीचे नहीं आता हूँ। आत्मा की कोई उम्र नहीं है अमर लोक में।

मैं इससे बारीक कहूँगा तो पता नहीं चलेगा, समझ नहीं आयेगा, इसलिए उतना ही कहना है, जितना समझ सको।

जिस समय यह आत्मा अनन्त ब्रह्माण्डों को चीरते हुए अमर लोक में जाती है तो ऐसा थोड़े लगता है कि हम यहाँ पहली बार आए हैं; ऐसा लगता है कि अपने असली घर पहुँच गये। नींद के बाद जब जाग्रत में आते हैं तो यह नहीं लगता कि कहाँ आए! जानते हैं कि स्वप्न में थे, धोखा था। तो ऐसे लगता है कि कुंद अवस्था में थे।

कालांतर में जितने भी सिद्ध हुए, किसी ने भी शुद्ध अस्तित्व को नहीं पहचाना, मूल स्वरूप को नहीं जाना। उसे स्थिति में मन गौण रहता है। जैसे दूध में थोड़ी सी भी चीनी डाल दो तो स्वाद बदल जाता है, इस तरह गौण रूप से जब मन समाविष्ट रहता है, तब कहते हैं आत्मा। यह मन आत्म साक्षात्कार नहीं करने देता है। तुरीयातीत में भी मन का अस्तित्व रहता है। जब नितांत बाहर निकल जाता है तो हंसा कहते हैं। पर जब अंतिम पराकाष्ठा को प्राप्त कर लेता है तो उस साहिब का तद्रूप हो जाता है। जितने भी सिद्ध हुए, साधक हुए, वो सच मानना, मन की सीमा से निकल न पाए। तब वो स्थिति होती है—

लाली मेरे लाल की, जित देखूँ तित लाल।

लाली देखन मैं गया, मैं भी हो गया लाल॥

.... तो वर्तमान में मन के कारण से आत्मा का ज्ञान नहीं हो पा

रहा है। आत्मज्ञान में यदि कोई रूकावट है तो मन की। मन ने ही आत्मा को माया के पिंजड़े में फँसाकर रखा है। आत्मा चेतन, अमल, सहज और आनन्दमयी है। पर यह अपने स्वरूप को भूल गयी है। साहिब कह रहे हैं—

उतपति प्रलय की कथा अनन्ता। बहु विधि सत्य कबीर भनन्ता॥
 उतपति प्रलय कोटिन बारा। स्वसमवेद निर्णय निरधारा॥
 प्रथमै आदि में ऐसो कहेऊ। स्वतह स्वछंद जीव यक रहेऊ॥
 रह स्वतंत्र आनन्द अकेला। नहिं तब गुरु नहीं तब चेला॥
 पक्की तत्व को ताकी अंगा। अंग पिंड दोनों यक ढंगा॥
 माया पुरुष सो जीव उपाना। सत्यस्वरूपी ताको बाना॥
 अपनो रूप अनूप निहारी। अहमित भयौ जीव तिहि बारी॥
 मोहित भा लखि रूप निकाई। ताहि मोह में गा गफिलाई॥
 आपा भूलि रहा नहिं चेता। महागमन मन भो ता हेता॥
 परमानन्द में गयो भुलाई। निजस्वरूप की सुधि बिसराई॥
 तत्व प्रकृति पलटि गइ तबहीं। पक्की से कच्ची भई जबहीं॥
 क्रम ही क्रम भै छीन शरीरा। धरि धरि देह पाव बहु पीरा॥
 जब कच्चा भा पक्का सांचा। अंड पिंड दोनों भा कांचा॥
 निज स्वरूप को ज्ञान न राखा। भई योनि चौरासी लाखा॥

कह रहे हैं कि पहले जीव स्वछंद था, आनन्द में था। उसकी देही पक्के तत्व की थी। फिर माया और पुरुष (निरंजन) ने मिलकर कच्ची देही का निर्माण किया। उसे देख जीव मग्न हो गया और अपनी सुध भूल गया। तब पक्के तत्व की देही से कच्ची देही में आ गया और उस देही में बार बार आकर बहुत कष्ट भोगने लगा। अपने स्वरूप का ज्ञान भूल गया और चौरासी में घूमने लगा।

पक्के तत्व के नाम इस प्रकार हैं—

1. सत्य
2. विचार

3. शील
4. दया
5. धीरज

फिर इनसे तीन पक्के गुण हुए।

1. सत्य और विचार का गुण—विवेक
2. शील और दया का गुण—साधु भाव
3. धीरज का गुण—वैराग्य

इन पाँच पक्के तत्वों की 25 प्रकृतियाँ इस प्रकार से हैं—

1. सत्य की प्रकृति—निर्णय, निर्बंध, प्रकार, थीर, क्षमा
2. विचार की प्रकृति—अस्ति, नास्ति, यथार्थ, शुद्धभाव, सत्यता
3. शील की प्रकृति—क्षुधा निवारण, प्रिय वचन, शांति बुद्धि, प्रत्यक्ष पारख, सर्व सुख प्रकट
4. दया की प्रकृति—अद्रोह, मित्रजीव, सम, अभय, समदृष्टि
5. धीरज की प्रकृति—झूठ का त्याग, सत्य को ग्रहण करना, निस्संदेह, अहंकार का नाश करना, अचल

जब जीव पक्के तत्व की देही से कच्चे तत्व की देही में गया तो इन्हीं पाँच पक्के तत्वों से पाँच कच्चे तत्व बने।

1. धीरज से आकाश तत्व बना
2. दया से वायु तत्व बना
3. शील से तेज तत्व बना
4. विचार से जल तत्व बना
5. सत्य तत्व से धरती बनी

फिर इन पाँच कच्चे तत्वों से तीन कच्चे गुण हुए।

1. धरती और जल से सतोगुण हुआ
2. अग्नि और वायु से रजोगुण हुआ
3. आकाश से तमोगुण हुआ

इस तरह ये देही विषय विकारों से युक्त हुई। काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार आदि हुए।

इस तरह परम आनन्दमयी आत्मा माया के शरीर में खो गयी। शरीर में जीव, ब्रह्म और माया—तीन चीजें हैं। जो अपने को फील कर रहे हैं, वो जीव है। दुनिया जीव बनकर जी रही है। आपको हमने आत्म-निष्ठ किया।

कभी किसी ने नहीं सोचा कि कितना बड़ा भ्रम है कि हम अपने को शरीर मानकर जी रहे हैं। आत्मनिष्ठ जीवन कैसा होता है, यह सुनना। **इड़ा पिंगला सुषुम्ना सम करे, अर्द्ध औ उर्द्ध बिच ध्यान लावै। कहैं कबीर सो संत निर्भय हुआ, जन्म औ मरण का भ्रम भावै॥**

इस समय आप अपने को शरीर क्यों अनुभव कर रहे हैं? अगर शरीर वैसे ही दिखे, जैसे एक कण दिख रहा है तो कैसा हो!

जो मैं आत्मनिष्ठ जीवन जीना जानता हूँ, वैसा मैं कभी भी कर लूँगा। पर मैं वैसा नहीं करना चाहता हूँ। तब ऐसा होगा कि फिर मैं आपसे बात नहीं करूँगा। फिर मैं आपमें से किसी को भी पहचानूँगा नहीं। फिर नहीं पहचान पाऊँगा कि यह फ़लाना है, वो फ़लाना है। यानी फिर हम चाहकर भी किसी को पहचान नहीं सकते हैं। हम ऐसी स्टेज में पहुँच सकते हैं। याददाश्त ने ही बताया कि यह फ़लाना है। यानी मैं सत्संग के समय अनुभूति के साथ बैठा हूँ। यदि इससे निकल जाऊँगा तो पता नहीं चलेगा कि सामने कौन बैठा है। फिर मैं अपने में ही रहूँगा। तब आपके लिए बहुत बुरा हो जायेगा। आप जब भी चाहें, इस देही से निकल सकते हैं। आपको सोने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी, आपको खाने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी, आपको स्वाँस की भी कभी ज़रूरत नहीं पड़ेगी, आपको कभी पानी की ज़रूरत नहीं पड़ेगी। ये सब बातें कितनी अटपटी लग रही हैं! क्या कोई वैज्ञानिक सहमति देगा! क्या संसार के दायरे में जीने वाले इन बातों को पागलपंथी नहीं कहेंगे! कोई इन बातों को मंजूर नहीं करेगा।

शरीर के अंदर हमारी आत्मा बँधी किस सिस्टम से है? आत्मा शरीर नहीं है। फिर भी अपने को शरीर मान रहे हैं। यह कैसी असमंजस है? यही निरंजन का खेल है। यह देही निरंजन की है। इसी बिंदू पर

अटकी है आत्मा। आखिर आत्मा शरीर के अन्दर है या बाहर है ?

मैं दर्पण की तरह दिखाता हूँ। हमारी आत्मा इस शरीर में है। सच यह है कि आत्मा शरीर नहीं है। यह मुकम्मल सच है। उदाहरण देता हूँ। हमारी आटा मशीन खराब हो गयी। एक पुर्जा टूट गया था। मैंने कहा कि इसे निकाल दो, नया ले लो। पर सब कहने लगे कि यह इसी के साथ में है। मैंने कहा कि इसका कहीं जोड़ होगा। पर कहीं जोड़ नहीं मिला। वहाँ जोड़ वाली जगह मिट्टी जम गयी थी। इसलिए वो दिख नहीं रहा था। बाद में दिखा कि आधा हिस्सा टूट गया था। इस तरह हमारी आत्मा भी अलग है शरीर से। कहीं जोड़ होगा इसका भी, जहाँ से यह अलग हो सके। कहीं-न-कहीं आपकी आत्मा का ऐसा कोई लोक है। आत्मा शरीर नहीं हो सकती है। यदि शरीर है तो पूरी पोथियाँ बंद कर दो। फिर ज्ञान की ज़रूरत नहीं है। पर कहीं-न-कहीं लॉक पिन है। यह है स्वाँस में। पर उस बिंदू तक कोई नहीं पहुँच पाता है। बड़े-बड़े योगी भी नहीं पहुँच पाते हैं, बड़े-बड़े योगेश्वर भी नहीं पहुँच पाते हैं। यह अपने बस की बात नहीं है। मैं घमण्ड नहीं करता हूँ, पर किसी भी बिंदू पर योग करने वाला आ जाए, उसकी बोलती बंद कर दूँगा। यह अहंकार नहीं है। इसलिए कोई भी बहस करने नहीं आता है। अगर आया तो दो मिनट में बोलती बंद कर दूँगा।

एक हार्ट के वकील को नाम दिया तो कुछ दिन बाद पूछा कि कैसे हो? उसने कहा कि मुझपर तंत्र-विद्या का भी इस्तेमाल होता है। फाँसी तक देनी होती है तो तंत्र-विद्या का लोग इस्तेमाल करते हैं, जिस कारण से ब्रेन परेशान रहता है। इस कारण से जज लोग डरे-डरे भी रहते हैं। पर जबसे मैंने नाम लिया है, ऐसा लगता है कि ब्रेन आज़ाद हो गया है, सारे बादल छँट गये हैं। मैं बहुत ही फ्री अनुभव कर रहा हूँ।

...तो वो लॉक स्वाँस में है। आप कैसे वो जीवन जी सकते हैं, बताता हूँ। पर उसी धुन में रहे तो आपके पड़ौस से कोई भी नहीं आयेगा, कहेंगे कि पागल हो गया है। सभी कहेंगे कि पागल कर दिया है इसे।

सुनो, यह आत्मदेव आज्ञाचक्र में रहता है। मन का बास सुषुम्ना में है। वायु का बास अष्टदल कमल में है। वायु की गठान यहीं पर है। यह तुन्नी (नाभि) फटेगी तो रावण ही नहीं, कोई भी मर जायेगा।

आत्मा का बास आज्ञाचक्र में है। अँधेरे में आदमी खड़ा है। आप इतना तो जान जाते हैं कि कोई खड़ा है, पर पहचान नहीं पाते हैं। आप चुपके से देखना कि स्वाँस कोई ले रहा है। कोई खींच रहा है। यह खुद नहीं चल रही है। चुपके से देखना कि कौन ले रहा है। स्वाँस ली जा रही है। चुपके से देखना कि कौन ले रहा है। चुपचाप देखना कि जो ले रहा है, वो आप हैं। वो सुरति है। उसका रँग-रूप नहीं दिखता, पर वो चेतन लगता है। इसी ने वहम में अपने को शरीर माना है। इसे यहाँ से उठाना है।

स्वाँस सुरति के मध्य में, कभी न न्यारा होय॥

यह स्वाँस में बँधा है। इसे व्यस्त कर रखा है। यह स्वाँस ले रहा है। इसे उलझा दिया है। इस शरीर को जिंदा रखने के लिए स्वाँस की जरूरत है। इस तरह से इसे शरीर में फँसाया गया है। यह बात बड़ी कठिन है। दुनिया में कोई नहीं कह पायेगा। दूर तक भी इसका कोई ज्ञान नहीं है। केवल जोकरों की जमात इकट्ठा हो रखी है। ऊपर स्वाँस कैसे जाती है! इसी ने स्वाँस ऊपर फेंकनी है। जब ऊपर चलने लगेगी तो यह भी ऊपर की ओर ध्यान करने लग जायेगा। इसलिए मैंने ध्यान ऊपर करने के लिए कहा।

मैं ब्रेन के ऊपर बैठकर आप लोगों की समस्याएँ सुनता हूँ। नहीं तो यह थोड़ी देर में बस कर देगा। बड़ी-बड़ी समस्याओं वाले आते हैं। मैं परेशान नहीं होता हूँ।

तो आत्मदेव उलझा बैठा है। गुरु बताता है कि कैसे उठाना है।
**पवन को पलट कर, शून्य में घर किया।
 धर में अधर भरपूर देखा।
 कहें कबीर गुरु पूरे की मेहर से, त्रिकुटी मध्ये दीदार देखा॥**

धीरे-धीरे चेतन भी उठकर ऊपर बैठ जाता है। मन से ऊपर आकर जब बैठ जाता है तब भूख-प्यास भी नहीं लगती है।

अधर आसन किया, अगम प्याला पिया।

यहाँ बैठ जाता है तो पूरी दुनिया ख़ाब लगने लगती है।

सुन्न महल की फेरी देही। सो बैरागी पक्का होई॥

दुनिया को बुद्धि चलाती है; मैं बुद्धि को चलाता हूँ। दुनिया को मन नचाता है; मैं मन को नचाता हूँ। आप देखना कि मैं कभी उलझा नहीं मिलूँगा, असमंजस में नहीं मिलूँगा।

...तो वहाँ भूख-प्यास नहीं लगती है; आत्मज्ञान है। यह स्वाँसा का खेल खेलना है। तभी तो साहिब कह रहे हैं—

स्वाँस स्वाँस प्रभु सुमिर ले, बृथा स्वाँस न खोय।

फिर कह रहे हैं—

स्वाँस स्वाँस को सुमिरता, इक दिन मिलिये आय॥

कभी शरीर से बाहर होना मुश्किल नहीं है। बस, वो लॉकिंग पिन देखनी है।

सुमिरण से सुख होत है, सुमिरन से दुख जाय।

कहैं कबीर सुमिरण किये, साईं माहिं समाय॥

सुमिरण क्या है? सुमिरण आत्मा तक पहुँचने का द्वार है, एक रास्ता है। बड़े कम लोग हैं, जो सुमिरण को समझते हैं। आइए, सुमिरण बताता हूँ। वासुदेव ने कहा कि हे अर्जुन! जो गुज़र चुका, वो निरर्थक है, उसका कोई मतलब नहीं है। अगर पहले राजा थे, आज राज्य नहीं है तो याद करने से कुछ लाभ नहीं होने वाला है। अतीत अर्थहीन है। अतीत का कुछ याद करना समय नष्ट करना है। भविष्य अनिश्चित है; उसका कोई पता नहीं है। अनिश्चित का संकल्प अच्छा नहीं है। किसी कारण से प्लैन किया हुआ काम नहीं भी बन सकता है। इसलिए अनिश्चित है। इसलिए तू अतीत का कुछ भी याद नहीं कर और भविष्य की कल्पना भी नहीं कर। तू वर्तमान में जी।

मैंने कइयों से पूछा कि वर्तमान क्या होता है? कोई नहीं बता पाया। जो बोला जा रहा है, वो वर्तमान नहीं है। जो देखा जा रहा है, वो वर्तमान नहीं है।

वर्तमान में जिओगे तो केवल एक शुद्ध चेतना रह जायेगी, जिसमें न संकल्प है, न विकल्प। वो आत्मनिष्ठता की स्थिति है।

इसका मतलब है कि सुमिरण द्वार है, क्योंकि सुमिरण से ही ऐसी स्थिति बनती है।

चिंता तो सत्यनाम की, और न चितमें दास।

जो कुछ चितमें नाम बिन, सोई काल की फाँस॥

सुमिरण से आत्मनिष्ठ हो जाओगे। आप अपने में आते जायेंगे। अतीत और भविष्य दोनों को भूल जाओ तो आप आत्मा के नज़दीक पहुँच जायेंगे।

खावता पीवता सोवता जागता, कहैं कबीर सो रहे माहिं॥

सुमिरण एकाग्र करता है। नानक देव कह रहे हैं—

नानक जो निशि दिन भजे, रूप राम तेहि जान॥

नानक देव जी कह रहे हैं कि जो निरंतर सुमिरण कर रहा है, वो प्रभु का रूप हो जायेगा। पक्का।

सुमिरण का भाव आपके ध्यान को एकाग्र करता है। यह एक ही मन है। यदि सुमिरण में नहीं लगाया तो भटकाता रहेगा। यदि सुमिरण में लगा दिया तो भटकाव खत्म हो जायेगा।

जब आप वर्तमान में हैं तो समझो कि आत्मा में हैं। साहिब के शब्द बड़े स्टीक हैं। पर वर्तमान कोई नहीं समझ पाता है। वर्तमान है—आत्मा। देखना भी अतीत है। जब कोई संकल्प न हो, कोई विकल्प न हो तब बनेगा वर्तमान।

पलट वजूद में अजब विश्राम है, होय मौजूद तो समझ आवै॥

सुमिरण एक बड़ी चीज़ है। साहिब ने सुमिरण पर बड़े शब्द कहे।

सुमिरण से सुख होत है, सुमिरण से दुख जाय।

कहैं कबीर सुमिरण किये, साईं माहिं समाय ॥

क्या सुख सुमिरण से मिलता है? क्या कोई वैज्ञानिक तथ्य है? सुमिरण की महापुरुषों ने बड़ी तारीफ़ की है अपनी वाणियों में। क्या चीज़ है सुमिरण? मेरा मानना है कि जो सुमिरण करता है, वो खुली आँख से, चलते-फिरते भी रूहानी नज़ारे देखता है। साहिब एक बात कह रहे हैं—

जप तप संयम साधना, सब सुमिरण के माहिं।

कबीर जानत संत जन, सुमिरण सम कछु नाहिं ॥

इसका मतलब है कि जप, तप, संयम, साधना आदि चीज़ें सुमिरण के अन्दर हैं।

कबीर जानें संत जन, सुमिरण सम कछु नाहिं ॥

सुमिरण के बराबर दुनिया में कुछ भी नहीं है। चारों चीज़ सुमिरण के अन्दर समाई हुई हैं। ऐसी क्या चीज़ है? इस धातु को समझना होगा। आगे साहिब कह रहे हैं—

साईं माहिं समाय ॥

तो ज़रूर साईं में समाता है। नहीं तो साहिब ने ऐसा नहीं कहा था। कैसा सुमिरण? सुमिरण से क्या लाभ है? एक बात है कि जितनी जल्दी समझें, उतना ही ठीक है। आपका ध्यान ही आपकी आत्मा है।

गोण्डा के पास से एक माता का फ़ोन आया, कहा कि मुझे आपसे नाम पाने के लिए कितनी देर और तड़पना होगा? मैं टी.बी. पर आपके सत्संग सुनती हूँ; एक बार गोण्डा में जब आए तो भी सत्संग सुना, पर आपसे बात नहीं कर पाई। उसने कहा कि क्या आपको पता चलता है कि कोई तड़प रहा है? मेरा जवाब था—

जिसकी सुरति लाग रहे जहँवा। कहैं कबीर पहुँचाऊँ तहँवा ॥

मैं मानता हूँ कि ध्यान एक शरीर है। आप जिसका भी ध्यान करते हैं, उसे पता चलता है। जो आपका ध्यान करेगा, वो आपके पास

है। आप जिसका भी ध्यान करेंगे, आप उसी के पास हैं। यह वैसे ही है जैसे आपने मोबाइल से जिस नंबर पर रिंग किया, उसी के मोबाइल में घंटी बजी। उसने कहा कि मैं दीक्षा लेना चाहती हूँ, कहाँ लूँ? मैंने कहा कि नज़दीक में गोण्डा है, वहाँ आकर ले लेना।

सात सुरति का सकल पसारा ॥

शरीर में सारा खेल सुरति का है। साहिब कह रहे हैं—

सुरति से देख सखी वो देश ॥

इसका मतलब है कि उस देश की अनुभूति भी सुरति से होगी। सुरति आत्मा है। भाई, जैसे शरीर के अन्दर सिस्टम बना है। आँखों का एक सिस्टम है। कानों में सुनने का टॉप सिस्टम है। यह सुनना मामूली नहीं है। नाक सूँघने का काम कर रहा है। मुख षट्स की अनुभूति कर सकता है। यह भी साधारण चीज़ नहीं है। आपकी सुरति का एक सिस्टम है। आत्मा भी निष्क्रिय नहीं है। शरीर का पूरा संचालन करने के लिए वो उर्जा दे रही है। यह मामूली काम नहीं है। जैसे रक्त उर्जा के रूप में सारे अंगों तक पहुँच रहा है। इस तरह शरीर के संचालन में आत्मा का बहुत बड़ा रोल है। जैसे आँखों का अलग सिस्टम है, नासिका का अलग सिस्टम है, इस तरह सात सुरति अलग-अलग काम कर रही हैं। अलग-अलग काम शरीर में करके उसे संचालित कर रही है। जो भी आपको आनन्द मिल रहा है, यह भी सुरति का कमाल है। आसाम साइड में ट्रेनों में बड़ी-बड़ी लकड़ियाँ चढ़ाने में हाथी की मदद ली जाती है। 4-5 हाथी लकड़ी को धकेलते हैं और फिर सूँठ के सहारे ऊपर ट्रेन पर चढ़ाते हैं। हाथी बड़े बुद्धिमान हैं। उनकी आपस की अंडरस्टैंडिंग बड़ी तगड़ी है। कहीं थक गये तो एक साथ सभी रुक जाते हैं। जब फिर से धकेलना है तो एक साथ ज़ोर लगाते हैं। इतनी अंडरस्टैंडिंग आदमी में भी नहीं है।

हमारी आत्मा इस शरीर में सात मुकामों पर काम कर रही है। जैसे इन आँखों में सिस्टम है कि दृश्य दिखाती हैं, मुँह में सिस्टम है कि रस का अनुभव होता है। कान में सिस्टम है कि शब्दों का अर्थ या सार

बताते हैं। इस तरह इंद्रियों से अलग-अलग काम हो रहे हैं। हमारे कान सुनने का काम करते हैं। यह सिस्टम इनमें है। आँखें देखने का काम करती हैं। त्वचा स्पर्श का अनुभव करती है। इस तरह शरीर में सात सुरति से काम होता है।

सात सुरति का सकल पसारा। सात सुरति से कछु न न्यारा ॥

पहली अमी सुरति है। जैसे आँख, कान आदि अलग-अलग काम कर रहे हैं, इसी तरह शरीर में भी आत्मा सात रूपों से काम कर रही है। पूरा खेल शरीर में सुरति का है।

प्रथम सुरति आनन्द कहिये ॥

यह अमीय सुरति है, जो आनन्द का अनुभव करवाती है। यह गुण आत्मा में है। जैसे दृश्य का अनुभव आँखें करवाती हैं, इस तरह आनन्द का अनुभव आत्मा करवाती है। यह सबमें है।

यह सुरति आनन्द देती रहती है। इसमें आनन्द है। इसमें मन घुस गया है। मन इस सुरति को चला रहा है। सुरति मन में रम गयी है। वो सोच रही है कि फलानी जगह घूमने जाना है। तो इस सोच में भी आनन्द मिला। यह सोचा मन ने। आनन्द सुरति से मिला था, पर मन ने जताया कि यह इच्छा करने से मिला है। बड़ी बारीक बात है, बड़ा उलझाव है।

मन ऐसे काम कर रहा है जैसे पानी में चीनी मिलाई तो मीठा हो गया। सुरति में ऐसे मन रम गया है।

जो आनन्द का अनुभव आप कर रहे हैं, यह सुरति की ताकत है। जो दृष्य देख रहे हैं, वो आँख की ताकत है। इस तरह आनन्द सुरति सबमें है। मन बाहर जगत में आनन्द की अनुभूति करवा रहा है। सच यह है कि वो सुरति में है आनन्द। इस आनन्दमयी सुरति को मन और माया भ्रमित कर रहे हैं। इसे आभास होता है कि आनन्द बाहर से मिला।

पलट वजूद में अजब विश्राम है, होय मौजूद तो समझ आवे ॥

....तो

दूजी मूल सुरति कहीजे ॥

यह भी सबमें है। जब भी कोई काम करता है तो इसी ध्यान से करता है। सूर्य में धागा पिरोना है तो माताएँ एकाग्र हो जाती हैं, गाड़ी चलानी है तो ड्राइवर एकाग्र हो जाता है। जब किसी चीज़ को गहराई से करते हैं, तो मूल सुरति की ज़रूरत पड़ती है। तब वो निकलती है। हमारे शरीर में मूल सुरति का विशेष स्थान है। यह चीज़ पशुओं में भी है। सभी एकाग्र हो जाते हैं। आत्मा का गुण सबमें मिल रहा है। इस सुरति को भी मन दौड़ा रहा है। मन की हुकूमत हो गयी है। मन ख़ामख़ाह हुकूमत करने लग गया है। इसने अपना पूरा कब्ज़ा कर लिया है।

एक मूल अवस्था है हमारी, एक मूल सुरति है। यह चाहो नींद में जाओ तो भी रहती है, चाहो सुषुप्ति में जाओ, तो भी रहती है, चाहे सतलोक में जाओ तो भी रहती है। अगर यह मूल अवस्था नहीं होती, मूल सुरति नहीं होती तो हम सतलोक से आकर कैसे बताते कि एक सतलोक भी है, परम पुरुष भी है। इसका मतलब है कि कुछ बाकी रहता है। जैसे दूध का मूल रूप रहता है, ख़त्म नहीं होता। चाहे उसका दही बना दो, चाहे पनीर, पर उनमें भी दूध का मूल रूप नष्ट नहीं होता, एक स्वाद रहता है। वो कभी समाप्त नहीं होता। आप किसी भी शरीर में जाओ, मूल सुरति ख़त्म नहीं होती है। चाहे कुछ भी हो जाए, नहीं होती है। यह मूल सुरति, यह बेसिक कॉन्शियस ही आत्मा है। हालांकि इसमें मन मिल गया। चाहे पानी में खटाई डाली। खट्टा हुआ, पर मूल स्वाद ख़त्म नहीं हुआ।

मुझे एक आदमी ने पूछा भी कि आत्मा सतलोक जाती है तो क्या यह दुनिया याद रहती है? मैंने कहा कि नहीं रहती है। वो बोला कि यदि याद नहीं रहती तो यहाँ यह याद रहता है कि सतलोक है? मैंने कहा-हाँ, बिलकुल। अगर मुझे याद न होता तो कैसे बताता कि एक अमर लोक है, जहाँ आत्मा आनन्द में रहती है। मैं कहता हूँ कि आपने जितने भी जन्म लिये हैं, वो सब आपको याद हैं, पर याद रहते हुए भी नहीं हैं।

जब आत्मा सतलोक जाती है तो यह नहीं लगता है कि वाह,

कैसा है। बहुत पीछे से ही यह याद आ जाता है कि यही तो मेरा घर है। वहाँ सभी पहचान वाले मिलते हैं। वहाँ पहुँचने पर याद आ जाता है कि मैं तो यहीं था। परम पुरुष को देखने पर ऐसा नहीं लगता कि पहली बार मिले हैं। वहाँ ठीक ऐसा लगता है, जैसे सपना देखने वाले को सपने की चीजें सच्ची लगती हैं, पर जब जगता है तो हँसता है, कहता है कि यह तो मिथ्या था। इसी तरह वहाँ पहुँचने पर लगता है कि मैं तो यहीं का था, पर झूठी दुनिया में चला गया था।

वहाँ क्या चीज थी, यह याद रहा। दिमाग भी यहीं रह गया, याददाश्त भी यहीं रह गयी, फिर कैसे याद रहा? वैज्ञानिक कह रहे हैं कि कोशिकाओं में याद करने की ताकत है, पर वे इससे आगे नहीं कह पा रहे हैं। जैसे रेलगाड़ी लेट हो, पर पता न हो कि कितनी लेट है तो वो लिखते हैं कि अनिश्चित समय के लिए लेट है या फिर अनाउंसमेंट करना ही बंद कर देते हैं। ऐसे वैज्ञानिकों को आगे की खबर नहीं है तो खामोश रह रहे हैं। पर मैं प्रमाण देता हूँ।

लोग मर जाते हैं, प्रेत योनि में पहुँच जाते हैं या पितर लोक में चले जाते हैं तो घर वालों को मिलते हैं। यानी याद है न। देही तो जल गयी, खोपड़ी भी जल गयी, दिमाग भी उसके साथ जल गया, फिर क्यों याद है कि यह मेरा भाई है। फिर क्यों याद है कि यह मेरी बीबी है। फिर क्यों याद रहा कि यह मेरी बेटी है। यानी एक याददाश्त थी जो नष्ट नहीं हुई। कभी पितर आकर कहते हैं कि दुखी हैं, कभी कोई और बात करते हैं। यानी यह है। यह क्या चीज थी? इसी को अंतःकरण कहा। जब भी हम लोग रूहानी सफर की बात करते हैं तो स्वप्न लगता है। जब कोई मर गया, शरीर छूट गया, स्वर्ग में चला गया तो पता चलता है कि फलाना हूँ, वहाँ मेरा घर है, वो मेरी बीबी है, मेरे इतने बच्चे हैं, कभी कभी आपकी दादी नानी स्वप्न में आती है, पता चलता है। वो स्वप्न नहीं होता है। मौत के बाद भी याद रहता है। सत्लोक में जाने के बाद भी याद रहता है। यानी एक याददाश्त है। अगर पितर लोक में गये तो यह याद रहा कि

यहाँ क्या है। पार्थिव शरीर को जला दिया, दिमाग तो खत्म हुआ, पर फिर भी मूल सुरति से याद रहा। यही चौंकाने वाली बात है। यह कोई न समझ पाया। एक चेतना है, वो कहीं भी चले जाओ, होती है। सत्लोक में मन, बुद्धि आदि भी नहीं हैं तो फिर भी वहाँ की बातें याद रहीं। यह अजीब बात है। चाहे किसी भी अवस्था में जाओ, मूल सुरति रहती है।

चाहे दूध से बर्फी बनाओ, चाहे दही बनाओ, चाहे पनीर बनाओ, पर दूध का जो मूल रूप है, वो खत्म नहीं होता है। घी में भी दूध का मूल रूप है। इसी तरह चाहे सपने में जाओ, चाहे पितर लोक में, वहाँ भी मूल सुरति है। कहीं भी जा रहे हैं, मूल सुरति काम कर रही है। यह मूल सुरति हमारी आत्मा है। यह निर्मल भी है। आप नशे में हैं, तभी भी वो है। वो डिस्टर्ब नहीं होती है।

आप पूर्वजन्म की घटनाओं से भी जान सकते हैं। कभी कभी आप देखते हैं कि किसी को अपना पूर्वजन्म याद होता है। एक 5 साल के लड़के ने अपनी बेटी का कन्यादान किया। वो टी.बी. पर भी दिखाया गया। उसे अपने पूर्व जन्म की सारी कहानी याद थी। उसने अपने कातिलों को सजा दिलाने की भी ठानी। जिनको सजा हुई थी, वो उसके कातिल नहीं थे। उसे धोखे से जिस तरह मारा गया था, कातिल के अलावा कोई नहीं जानता था। उसने वो सारी कथा बताई कि कैसे उसे मारा गया। यानी याद रहा सब। एक लड़की कह रही थी कि वो कल्पना चावला है। उसने भी कई बातें सच बताईं, कुछ बातें वो अटपटी बता रही थी। वो अपनी छोटी बुद्धि के अनुसार हो सकता है। वो जहाज देखकर डर जाती है। बस, अन्तर यह है कि आपको अपना पूर्व जन्म याद नहीं है।

गीता में भी आ रहा है—हे अर्जुन, इस आत्मा की आँखें नहीं हैं, फिर भी सभी दिशाओं से देख सकती है। हे अर्जुन, इस आत्मा की टाँगें नहीं हैं, फिर भी सभी दिशाओं से चल सकती है। हे अर्जुन, इस आत्मा को मुँह नहीं है, फिर भी सभी दिशाओं से बोल सकती है।

जैसे बिना पैरों के चला जा रहा है, बिना मुँह के बोला जा रहा है, बिना आँखों के देखा जा रहा है, वही चीज बिना दिमाग के भी याद कर रही है, यही मूल सुरति है।

...तो मूल सुरति सबमें है। चाहे चींटी है, उसमें भी मूल सुरति है। उसके नन्हें रूप को देखकर भ्रमित नहीं होना। धरती पर ऐसे भी जीव हैं, जिनकी उम्र मात्र 3 घण्टे है। वे भी जवान होते हैं, शादी करते हैं, बच्चे होते हैं, बूढ़े होते हैं और मर जाते हैं। उनके पास भी मूल सुरति है।

मैं एक बगीचे में लड्डू खा रहा था। बचपन से ही मैं एकांतप्रिय रहा हूँ, कभी मिट्टी भी नहीं खाई। बच्चों से बड़ा डरता था, उनसे दूर ही रहता था, उनकी हरकतें बेवकूफों वाली लगती थी। बड़ा गंभीर था। एक पहाड़ था, मैं वहाँ चला जाता था एकांत में। तो मैं बगीचे में लड्डू खा रहा था, एक टुकड़ा उसका नीचे गिर पड़ा। एक चींटी आई, उसने देखा, हिलाना चाहा, पर नहीं हिला। वो चली गयी। मैं जानता था कि चींटी बड़ी हिम्मती होती है। मैं भी उसके पीछे-पीछे गया, सोचा देखता हूँ कि कहाँ जाती है, क्या करती है। वो कुछ दूर तक गयी, उसे 1-2 मिनट लग गये वहाँ तक जाने में। वहाँ एक बिल था, वो उसमें चली गयी। 20-25 सैकेंड बाद वो बाहर आई तो बड़ी स्पीड में पीछे-पीछे कई चींटियाँ उसके साथ आ गयीं। वो स्पीड में उन्हें लेकर वहाँ पहुँची। सबने मिलकर उसे उठाया। उनका कॉन्शियस कैसा था! उठाने की उनकी टाइमिंग भी बड़ी प्यारी थी। उनके लिए वो पहाड़ से कम नहीं था। कुछ की टाँगें सिकुड़ गयीं तो फिर पोसीशन चेंज की और घसीटते-घसीटते उसे वहाँ तक लाई। आधा घण्टा लगा। अब खड्डे के अंदर वो नहीं जा पा रहा था। फिर उन्होंने उसके टुकड़े किये और अंदर बिल में ले गयी।

इसका मतलब है कि पहले चींटी ने वहाँ जाकर सब चींटियों को आवाज़ लगाई होगी, कहा होगा कि चलो जल्दी, बहुत कुछ है खाने को। फिर कमाण्डर ने तगड़ी-तगड़ी चींटियों को चुना होगा। जैसे कुछ भारी काम होता है तो मैं भी सेवा के लिए चुनता हूँ, जो कर सकते हैं। तो

उन्होंने भी छाँटा होगा। वो वहाँ पहुँचीं। फिर अक्ल कितनी थी! सुराख कम था तो टुकड़े किये। यानी मूल सुरति थी उनके पास। यही सबमें है।

आपको बताऊँ, सतयुग में सभी जानवर की भाषा जानते थे। सच मानना। मूल सुरति सबमें एक है। बच्चे रोते हैं। यह रोना क्या है? यह एक भाषा है। पर इसको जो समझे वो जान सकता है। जो समझता है, उसे भी नहीं पता है कि वो जानता है यह भाषा। माँ समझती है, पर वो तय नहीं है कि उसे पता है। बच्चे को बोलना नहीं आता है, पर अपनी बात कह देता है। यह मूल सुरति है। वो रोता है तो पुकारता है—आओ। मूल रूप से हम सबकी एक ही भाषा है। धरती पर अनेक भाषा बोलने वाले हैं, विभिन्न भाषाएँ बोलते हैं, पर विचारों को बाहर रखना ही मूल लक्ष्य है।

वो रोता क्यों है? माँ को बुला रहा है। जोर से क्यों रोता है? ज्यादा दिक्कत में है तो बुलाता है। रो क्यों रहा है, क्योंकि अलफाज निकालना नहीं आते। वो रोने की आवाज़ में अपनी बात कह रहा है कि यह दिक्कत है। वो जान चुका है कि रोने के बाद मेरी माँ आती है। उसके पास ज्ञान है। वो जानता है कि मेरी माँ समझती है। यह काम पशु भी करते हैं। अरनिया में मैं सत्संग कर रहा था तो एक भैंस जोर-जोर से चिल्लाए जा रही थी। किसी ने ध्यान नहीं दिया। उसे तो धूप में बाँध रखा था, वो परेशान थी। वो कह रही थी कि मैं छाया में नहीं जा पा रही हूँ, मुझे बाँध रखा है, खोलो। जहाँ उसका मालिक था, वहीं मुँह करके चिल्ला रही थी। मैंने सुना, पर और कोई नहीं सुना कि क्या कह रही है। मैंने एक सत्संगी को धूप में खड़ा किया। एक मिनट बाद पूछा कि कैसा लग रहा है? उसने कहा कि बहुत कष्ट है। मैंने उसी को वहाँ भेजा, कहा कि उस भैंस को खोलकर छाया में बाँधो, चाहे जिसकी भी भैंस हो। फिर मैंने देखा कि उसे प्यास भी लगी थी। तो एक को कहा कि बाल्टी लेकर जाओ और उसे पानी पिलाओ। तो मैंने उसकी पुकार सुनी। मैंने उसकी भाषा समझी।

चोराचौकी में सत्संग कर रहा था तो कौवे आकर पेड़ पर बैठे। वे चिल्लाए जा रहे थे। कोई नहीं उड़ाया उनको। मैंने सुना, वो बाकियों को बुला रहे थे कि आओ, यहाँ बहुत कुछ बना है खाने को। मैंने हारकर एक को कहा कि उड़ाओ, पर पहले इसलिए नहीं कह रहा था कि सोचा यह खुद उड़ाए तो ठीक है, सत्संग में बाधा न पड़े।

हमारी एक गाय है, बड़ी चालाक है। उसके साथ में दो और गाएँ बँधी होती हैं। जब तीनों को चारा डालता हूँ तो वो क्या करती है कि अपने सामने पड़ा हुआ नहीं उठाती है। पहले आजू-बाजू का खाती है, जो दूसरी गायों का हिस्सा है, क्योंकि उसे पता है कि यह सामने वाला तो मेरा ही है। वो खाती भी बड़ी स्पीड में है। एक दिन एक गाय छूट गयी और जहाँ सुबह का चारा पड़ा था, वहाँ पहुँचकर खाने लगी। दूसरी गाय जोर-जोर से चिल्लाने लगी। वो बुला रही थी। जो देखभाल करने वाला था, वो गया तो देखा कि एक गाय खुली है। यानी वो सोच रही थी कि मेरा हिस्सा भी है इसमें और यह सब खा रही है।

इसलिए किसी से नाइंसाफी नहीं करना। गोस्वामी जी कह रहे हैं—

हित अनहित पशु पक्षिन जाना ॥

मुझे भैंसे बुलाती हैं, कभी गर्मी लगती है तो कहती हैं कि पंखा चलाओ, कभी कहती हैं कि आज बड़ी देर कर दी खिलाने में, जल्दी आओ, भूख लगी है। यानी एक मूल सुरति सबमें है। तभी तो शास्त्रों में कहा गया— ‘आत्मवतन सर्वभूतेशू।’

आप विश्वास करना, आत्मा में हरेक भाषा बोलने की ताकत भी है। कोई हंकार से नहीं बोल रहा। सच बताता हूँ, मैं संसार के समस्त प्राणियों से बात की है।

मैं मकान बना रहा था। एक कमरे का फर्श नहीं डाला। पैसे का जुगाड़ नहीं हुआ। दो साल हो गये। माँ ने कहा कि वहाँ भी फर्श डालो, उसका इस्तेमाल नहीं कर पा रहे हैं। एक दिन मैं जब पत्थर डालने लगा

तो बहुत से चींटे बाहर निकल कर आए। लाल-लाल रंग के अजीब चींटे थे। उन्होंने कहा कि क्यों छेड़ रहे हो, उन्होंने हमला किया, कहा कि हम यहाँ रहते हैं, हमारे बच्चे भी हैं। मैंने कहा कि बाहर आ जाओ। वो नहीं आए। मैंने अगले दिन फिर कहा कि एक दिन की मौहलत और देता हूँ। वो अगले दिन भी नहीं गये। मैंने पत्थर डालने शुरू किये। एक मिस्त्री आया, कहा कि डालता हूँ। मैंने कहा कि यह मेरा निजी काम है, आश्रम का नहीं है, मैं खुद करूँगा। मैंने बड़ी स्पीड में पत्थर बिखेर दिये। 50-60 चींटे आए, हमला किया, कहा हम सब अंदर हैं। मैंने चींटों को कहा कि तुम्हें समय दिया था, पर तुम नहीं निकले, अब मुझे फर्श तो डालना है। मैंने डाल दिया। 48 घण्टे बाद मैंने फर्श डाल दिया। 12 बजे रात को सभी चींटे मेरे सामने आए, कहा कि हमारे बच्चे हैं वहाँ फर्श तोड़ो। सच मानना, वो इंसान की भाषा में बोल रहे थे। मैंने कहा कि अब नहीं तोड़ूँगा, बड़ी मेहनत से डाला है, तुम जमीन खोदकर कहीं ओर से अपना रास्ता बना लो।

जब मैं कहूँगा तो आपको आश्चर्य होगा। किसी देवस्थान पर जाता हूँ तो बात करता हूँ। गंगा जी के पास गया तो गंगा जी से बात की है, शिवजी के स्थान पर गया तो शिवजी से बात की है। जहाँ स्थान है, वे हैं। पर आप ऐसे ही आ जाते हैं।

मैं जे. सी. ओ बना तो पार्टी देनी थी। मुझे कहा कि पार्टी दो। उनकी पार्टी क्या होती है—शराब, मुर्गे। मैंने कहा कि कितने पैसे लगेंगे? कहा—5 हजार। मैंने कहा कि मैं 7 हजार दूँगा, पर मुर्गे नहीं खिलाऊँगा। काजू-बादाम, जो भी खाना हो, खिला दूँगा। वहाँ एक बात होती है कि पार्टी करवानी पड़ती है। आपपर मुसीबत आए तो आप कमजोर पड़ जाते हैं। पक्रे रहें। तो वो खाते भी राक्षस की तरह हैं। मैं मीट, शराब की पार्टी नहीं दे रहा था। कुछ शांति में अशांति का सृजन कर देते हैं और कुछ अशांति में भी शांति ढूँढ़ लाते हैं। मैंने बड़ा कहा कि कुछ भी खाओ, खिला दूँगा, पर यह नहीं। वो नहीं माने। मैंने भी नहीं खिलाया। वैसे 10-

15 दिन के अंदर ही करवानी होती है। वे बड़े लोगों के हवाले देने लगे कि वो भी नहीं खाता था, उसने भी करवाई..... उसने भी करवाई। पर मैं अड़ गया कि नहीं दूँगा यह सब। कुछ उत्तेजित करने के लिए कहने लगे कि कंजूस है। मैंने कहा कि 7 हजार की पार्टी करवा रहा हूँ। वो नहीं माने। समय निकलता गया। 6 महीने निकल गये, मैंने नहीं करवाई पार्टी। बाद में कहा कि दो। मैंने कहा कि अच्छा जिस दिन मुर्गे वाला दिन होगा, उस दिन चबा लेना हड्डी। वो नहीं माने। कहा कि किसी दूसरे दिन। मैं आखिर कहा कि अच्छा दारू पी लो, सोचा कि पीकर नाली में ही गिरेंगे, पाप तो नहीं होगा, जीव हत्या तो नहीं होगी। अंत में तय हुआ कि पैसे दे दिये जाएँ, वो जो करना है, कर लें। शाम को छः बजे एक लड़का 5-7 मुर्गे लाया। टाँगें पकड़ा हुआ, धड़ नीचे की ओर। वो चिल्ला रहे थे, कां-कां कर रहे थे। मैं रात को लेटा तो 12 बजे सभी मुर्गे मेरे सामने आए, इंसान की भाषा में कहा कि इंसान करो। मैं जो कह रहा हूँ, सच्चाई है। कहा कि आप जिम्मेदार हैं। वो दो डिमाण्ड रखे, कहा—या तो हमें मानव तन दो या फिर मुक्ति। मुझे उनमें से एक बात माननी पड़ी उनकी।

किसी का दिल मत दुखाओ। जब भी लगे कि दिल दुखा तो साँत्वना दो। यह मत सोचना कि क्या बिगाड़ेगा।

बेशक मंदिर मस्जिद तोड़ो, और भी गिरजाघर हैं।

लेकिन किसी का दिल मत तोड़ो, खास खुदा का घर है॥

आपको पेड़ों की बात बताता हूँ, उनमें भी मूल सुरति है। वे भी बात करते हैं। रॉजड़ी में एक पेड़ है, एक दिन उसकी एक डाल बड़ी जोर से हिली। मैंने सोचा कि कोई बड़ा पक्षी आकर बैठा है। ऊपर देखा तो इंसान की गर्दन आई, कहा—नमस्कार। हिंदू धर्म में पेड़-पौधों की पूजा की जाती है, इसमें गहराई है। तो कहा कि आपकी बड़ी फसल है, कोई कमी नहीं है, पर मैं और मेरा छोटा भाई है, हम दोनों बीमार पड़ गये हैं। सभी आपकी सेवा करते हैं, हम भी करना चाहते हैं। मैंने कहा—करो। कहा कि आप दो बार दवा छिड़क देना। एक दिसंबर में और एक

मार्च में। मैंने सुबह माली को बुलाया और कहा कि इसपर दवा छिड़क देना। उसे थोड़ा बताया कि पेड़ ने कहा है। बहुत बूर लगे। फल लगे, वो गिरने लगे। मैंने पूछा कि भाई हमने दवा छिड़की तो भी फल नहीं लगे। उसने कहा कि दवा एक बार छिड़की है। वो माली एक बार छिड़ककर भूल गया था। वो चेतन पेड़ है। उसने पहला फल गिराया, जब मैं ब्रश कर रहा था। गजब का फल था, कहा—खाना। मैंने फल तुरना को दिया, कहा कि इसे रखो, भोजन के साथ देना। जब मैंने फल खाया तो वैसे ही उसने कहा कि आज मैं धन्य हो गया, मैं यही चाहता था।

जो जीव महापुरुषों के चरणों के नीचे मर जाते हैं, वो मनुष्य योनि में जन्म लेते हैं। जिस पेड़ का फल खाया, वो मुक्त हो जायेगा। जिसके घर में भोजन किया, समझो उसने पूरे ब्रह्माण्ड को भोजन खिला दिया। 100 योगी को भोजन खिलाना एक साधु को भोजन खिलाने के बराबर है। साधु वो जो काम, क्रोध को छोड़ा है, वो नहीं जो साधु का चोला पहना है। और पूरे ब्रह्माण्ड को भोजन खिलाना और एक संत को भोजन खिलाना एक समान है।

तो पेड़ कितना चेतन था। वो फल तब गिराता है, जब मैं हूँ या वो लड़की तुरना, क्योंकि वो जानता है कि यह लड़की नहीं खाती है। बाकी खा लेते हैं। वो फल भी छिपाकर रखता है। ढूँढ़ते रहो, नहीं मिलेगा। इसलिए भाई, सबमें एक आत्मा को देखो, किसी को मत मारो।

जीव न मारो बापुरा, सबके एकै प्राण।

हत्या कबहुँ न छूटती, कोटि सुनो पुराण॥

हम कहते भी हैं— ‘धर्मराय जब लेखा माँगे, क्या मुख लेकर जायेगा॥’ वो इसी मूल सुरति से लेखा लेता है। हरेक जीव का हिसाब होगा। वो कभी भी अन्याय नहीं करता है। उसकी सभा में चित्रगुप्त है, वो सज़ा सुनाता है कि इस पाप के लिए क्या सज़ा होनी चाहिए। जब उससे मामला नहीं सुलझता, कोई पेचीदा मामला आ जाता है तो स्वर्ग से विद्वानों की टीम को बुलाता है, वेदव्यास और अन्य मिलकर विचार करते हैं और सज़ा सुनाते हैं।

तो मूल सुरति है। जब भी ब्रह्माण्ड में जाते हैं तो मूल सुरति होती है। ये बातें कहने में नहीं आती हैं। मान लो कि किसी ने गुप्ता जी को कुछ कहा। गुप्ता जी उसे चार चाँटे मारें तो कोई कहे कि ठीक ही किया। पर अंदर से कॉन्शियस कहेगा कि गलत किया। हम सबके अंदर एक चीज़ बैठी है। कुछ भी गलत नहीं करो। यह रानी सुरति है, इसलिए इसका नाम मूल सुरति रखा है। शरीर के सभी अंग चेतन हैं, पर ब्रेन अधिक चेतन है। उससे अधिक कुछ चेतन नहीं है। इस तरह सातों सुरति में मूल सुरति चेतन है।

आदमी इनके बारे में कम जानकारी रख रहा है। किडनी अलग काम कर रही है, फेफड़े अलग काम कर रहे हैं। हालांकि उर्जा वही है। इस तरह ध्यान भी अलग-अलग तरीके से काम कर रहा है।

...तो तीसरी सुरति है—चमक सुरति।

तीजे चमक सुरति है भाई ॥

यह क्या कर रही है? आत्मा विभिन्न तरीके से काम कर रही है। पर अभी वैज्ञानिक नहीं समझ पा रहे हैं। ये कौन हैं? कालेज के, यूनिवर्सिटी के प्रोफेसर लोग हैं। पाँच तत्वों पर रिसर्च करने वाले हैं। लेकिन सुरति का खेल नहीं समझ पा रहे हैं। यही चमक सुरति आँखों, पावों आदि को चेतन कर रही है। देख तो आँख रही है, पर इसे चेतन करने वाली सुरति है। बल्ब जल रहा है तो बिजली का कमाल है। हीटर चल रहा है तो भी बिजली का कमाल है। जैसा पात्र मिला, वैसा ही काम बिजली ने करना शुरू कर दिया। आत्मा भी सात मुकामों पर अलग-अलग काम कर रही है। सभी इंद्रियाँ चमक सुरति से काम कर रही हैं। अगर चमक सुरति न हो तो आँख देखना बंद कर देगी। चमक सुरति पूरे शरीर को क्रियाशील कर रही है, सजग कर रही है, होश में ला रही है। देखा न, हमारी आत्मा शरीर में अलग-अलग तरीके से काम कर रही है। पर सिर में ज्यादा चोट लग गयी तो आत्मा क्यों नहीं काम कर रही है? जैसे ढोल फट गया तो हाथ हैं, तो भी नहीं बजता है। ऐसे ही शरीर नष्ट

हो गया तो आत्मा काम नहीं कर पाती है। शरीर का रोम-रोम चमक सुरति से चेतन है। एक पौधे के लिए पानी जो काम कर रहा है, वही काम वो चमक सुरति शरीर के लिए कर रही है।

तो चौथी है—शून्य सुरति। यह शून्य सुरति बड़ी खास है। इससे खामोश हो जाता है, अपने नज़दीक हो जाता है। यह शून्य सुरति का खेल है। तब कुछ भी चिंतन अच्छा नहीं लगता है। हरेक में ये चीज़ें हैं; हरेक यह करता है; हरेक में यह मिलता है।

तो पाँचवीं सुरति है—निश्चय सुरति।

शुभ अरु अशुभ सुनावे दोई ॥

यह अच्छे-बुरे का ज्ञान देती है। वो फैसला करती है कि क्या उचित है, क्या अनुचित। कभी आप मन के वेग में जल्दी से निर्णय लेते हैं। पर कोई अन्दर से कहता है कि यह ठीक नहीं है। कभी कुछ करने के बाद आप पछताते हैं। करने वाले भी आप थे, पछताने वाले भी। मन ने उसी समय संकेत दिया। आपके मन के वेग ने वो काम कर दिया। पर अंदर बैठी निश्चय सुरति ने कहा कि यह गलत हुआ। यानी आपका फैसला भी आपका नहीं है। आत्मा मानसिक पिंजड़े में मायाबी जीवन जी रही है।

छठी सुरति है—‘ठाँव ठाँव रस चाखे ॥’ इससे आप स्वाद को अनुभव करते हैं। इसमें भी मन बैठा है। यह केवल हमारी जितनी भी इंद्रियाँ हैं, उनको चेतन करती है। आपकी बुद्धि, आपका चित्त आदि को चेतन करती है। यह भी आत्मा का खेल है।

आत्मा चली जाती है तो शरीर काम नहीं कर पाता है। कभी अचानक भी शरीर छूट जाता है। कोई बीमारी नहीं होती है, कोई मंजे पर भी नहीं होता है, फिर भी चला जाता है। 10-15 मिनट पहले वो काम कर रहा होता है, पर अचानक ही आत्मा निकल जाती है। वैज्ञानिक चक्र में आ जाते हैं। तो सुरति का विशेष स्थान है। शरीर में जो भी काम हो रहा है, आत्मा का खेल है।

सप्तम सुरति है हृदय के माहीं। हृदय से कछु न्यारा नाहीं ॥

इसका काम है कि जो खाया, उसे हरेक अंग तक पहुँचाना। मल-मूत्र को बाहर करना। सारे काम आत्मा से हो रहे हैं। पर काम करता हुआ शरीर लग रहा है। पर सच्चाई परे है। काम करने वाली आत्मा है। आत्मा ही सारे काम कर रही है। तो सात सुरति से सारे काम हो रहे हैं।

सात सुरति में रम रहा।

ये सातों निरंजन के हाथ में हैं। इसलिए आदमी उलझ गया। आत्मदेव को निरंजन ने बाँध कर रखा है। आदमी ठीक से समझ नहीं पा रहा है। हमारे ऋषि-मुनियों ने बड़ी अनुभूतियाँ की, पर साहिब कह रहे हैं कि पूर्ण सद्गुरु आपकी सुरति को एकाग्र करके एक बिंदू पर ला देगा। तभी हम मन से लड़ सकेंगे। इस मन ने हमारी सुरति को सात भागों में बाँट दिया है। इसलिए यह उससे टक्कर नहीं ले पा रही है। जब यह एकाग्र होकर एक-साथ मिल जायेंगी, तभी हम मन से टक्कर ले पायेंगे।

अगर शरीर के अन्दर आत्मा के अस्तित्व को किसी भी तरह अनुभव किया जा सकता है, तो वो है—ध्यान। इसी ध्यान को सुरति भी कहते हैं। इसका मतलब है कि हमारी आत्मा सुरति है। बिना सुरति के कोई भी काम नहीं हो सकता है। दुनिया का छोटे-से-छोटा काम भी करना हो तो ध्यान की ज़रूरत पड़ती है। दुनिया का हरेक काम सुरति से हो रहा है। तो यह एक मुख्य चीज है। यह आत्मा का नज़दीकी रूप है। जैसे मक्खन घी का करीबी रूप है, इस तरह ध्यान आत्मा का बहुत नज़दीकी रूप है। जितने भी मत-मतान्तर हैं, पहला सिद्धांत है—ध्यान। सभी ध्यान करना बोल रहे हैं।

ध्यान ही वेद शास्त्र कहत हैं, ध्यान ही संत बखाना।।

साहिब इसी को सुरति के रूप में इंगित कर रहे हैं। यह सुरति, यह ध्यान बड़ी ख़ास चीज़ है। ध्यान एक ताकत है। चलना है तो ध्यान चाहिए, बात करनी है तो भी ध्यान चाहिए, सुनना है तो भी ध्यान चाहिए, देखना हो तो भी ध्यान चाहिए। ध्यान कहीं चला जाए तो आँख खुली रहने पर भी कुछ नहीं देख पायेंगे।

हम कहीं सत्संग में जाते हैं, वहाँ ध्यान से गुरु जी के, महात्मा जी के प्रवचन सुनते हैं। यदि हमारा ध्यान घर या कहीं और चला जाए तो हम गुरु जी को, महात्मा जी को देख भी नहीं पायेंगे.....चाहे वे हमारे सामने हों, क्योंकि हमारा ध्यान वहाँ से हट, दूसरी जगह पहुँच गया। फिर उनके प्रवचन सुन भी नहीं पायेंगे और समझ भी नहीं पायेंगे, क्या बोला। ध्यान से ही यह सब सम्भव था। जब ध्यान ही हट गया तो कुछ भी नहीं रहा। इसका मतलब है, ध्यान में, सुरति में देखने की ताकत भी है, सुनने की ताकत भी और समझने की भी। इसमें बड़ी ताकत है। सारा खेल ही सुरति का है।

सुरति में रच्यो संसारा। सुरति का है खेल सारा ॥

इसका मतलब है कि हमारा ध्यान सक्षम है, हमारे ध्यान के अन्दर योग्यता है। यह ध्यान बड़ी खास चीज है। यह कुछ आइटम है। यह एक स्पन्दन है। इसे देखा जा सकता है। इसे अनुभव किया जा सकता है। जब यह शरीर से चला जाता है तो भी महसूस किया जा सकता है। हम कहते भी हैं कि इसका ध्यान कहीं चला गया है। रेलवे वाले कह रहे हैं—

सावधानी हटी दुर्घटना घटी ॥

वो भी ध्यान की बात कर रहे हैं। हमारा ध्यान ही तो बंधन में है। इसी ध्यान या सुरति को सात भागों में विखण्डित करके मन दुनियावी चीजों में उलझा रहा है। 24 घण्टे यह इसे संसारी पदार्थों की ओर ले जा रहा है। हर पल इसे संभालने की ज़रूरत है, इकट्ठा करने की ज़रूरत है।

पल पल सुरति संभाल ॥

जैसे वायु को स्पन्दन द्वारा महसूस किया जा सकता है, ऐसे ही ध्यान को अनुभव किया जा सकता है, आत्मा को भी अनुभव किया जा सकता है। आत्मा जानी जा सकती है। अगर पेट में ध्यान रोको तो लगेगा कि कुछ रुका, अगर कंठ में ध्यान रोको तो भी पता चलेगा कि कुछ रुका, हृदय में रोको तो भी पता चलेगा, एक स्पन्दन लगेगा। इसी ध्यान को खींचकर ऊपर ले जाओ तो पता चलेगा कि कोई चीज़ ऊपर की ओर गयी। यह है—सुरति। अगर सुरति को आग में डालो तो जलकर भस्म नहीं होती, पानी में डालो तो गलेगी नहीं।

सुरति के दो अंग हैं। एक है—सुरति और दूसरा है—निरति। सुरति का एक हिस्सा शरीर में फँसा हुआ है। निरति स्वाँसा द्वारा शरीर में फँसी हुई है।

आत्मा का वास आज्ञाचक्र में है। अँधेरे में आदमी खड़ा है। आप इतना तो जान जाते हैं कि कोई खड़ा है, पर पहचान नहीं पाते हैं। आप चुपके से देखना कि स्वाँस कोई ले रहा है, कोई खींच रहा है। यह खुद नहीं चल रही है। चुपके से देखना कि कौन ले रहा है। स्वाँस ली जा रही है। चुपके से देखना कि कौन ले रहा है। चुपचाप देखने पर पता चलेगा कि जो ले रहा है, वो आप हैं। वो सुरति है। उसका रँग-रूप नहीं दिखता, पर वो चेतन लगता है। इसी ने वहम में अपने को शरीर माना है। इसे यहाँ से उठाना है।

स्वाँस सुरति के मध्य में, कभी न न्यारा होय॥

यह स्वाँस में बँधा है। इसे व्यस्त कर रखा है। यह स्वाँस ले रहा है। इसे उलझा दिया है। इस शरीर को जिंदा रखने के लिए स्वाँस की ज़रूरत है। स्वाँस लेनी-ही-लेनी है, हर पल ले रहा है, क्योंकि अपनो को शरीर जो मान बैठा है, इसलिए शरीर के नष्ट हो जाने के भय से भयभीत होकर लगातार स्वाँस लिए जा रहा है, लिए जा रहा है। स्वाँस लेने का आदी बना दिया गया। इस तरह से इसे शरीर में फँसाया गया है। यह बात बड़ी कठिन है। दुनिया में कोई नहीं कह पायेगा। दूर तक भी इसका कोई ज्ञान नहीं है। केवल जोकरों की जमात इकट्ठा हो रखी है। ऊपर स्वाँस कैसे जाती है! इसी ने स्वाँस ऊपर फेंकनी है। जब ऊपर चलने लगेगी तो यह भी ऊपर की ओर ध्यान करने लग जायेगा। ऐसे में सुरति और निरति मिल जायेंगे। जब दोनों मिल जायेंगे तो बहुत बड़ी ताकत हो जायेगी।

सुरति और निरति मन पवन को पलट कर,
गंग और जमुन के घाट आने।
कहें कबीर सो संत निर्भय हुआ,
जन्म और मरण का भ्रम भाने॥

जैसे दौड़ने के लिए दानों टाँगों का समान महत्व है। एक टाँग से दौड़ा नहीं जाता; रास्ते में गिर जायेंगे। दोनों की ज़रूरत है। काम करने के लिए दोनों हाथों का भी समान महत्व है। एक हाथ से ज्यादा काम नहीं कर पायेंगे। दोनों हाथों से भारी वज़न भी उठा सकते हैं। इसी तरह सुरति और निरति—दोनों का एक हो जाना बड़ा महत्व रखता है। जब दोनों मिल जायेंगे तो 'फिर देखो गुलज़ारा है।'।

सुरति और निरति के मिलने से आत्मतत्त्व का पता चल जायेगा। फिर क्या है सुरति और क्या है निरति? ये कैसे मिलें? आओ, इस ओर चलते हैं।

जैसा कि पहले कहा कि अगर बाहरी दृष्टि से भी देखें तो पता चलता है कि सुरति विशेष चीज है। हम सब बाहरी कामों को करने के लिए सुरति का इस्तेमाल करते हैं। दुनिया के जितने भी कार्य हम करते हैं, उनमें सुरति चाहिए। बोलना हो, सुनना हो, चलना हो या कोई अन्य कार्य करना हो, सुरति नितान्त आवश्यक है। इसी सुरति का दूसरा नाम ध्यान है। यदि एक्सीडेंट हो जाए तो ड्राइवर को यही कहते हैं कि भाई, ध्यान कहाँ था? इसी ध्यान या सुरति का दूसरा हिस्सा है—निरति। निरति शरीर में फँसी हुई है। यह शरीर को चलाने वाली शक्ति है। हाथ जो चल रहे हैं, निरति है। निरति का ही नाम है—जीव। निरति का वास आँखों के पीछे है, पवन में समायी है। श्वास खुद-ब-खुद नहीं चल रही है, लगेगा कि कोई ले रहा है और छोड़ रहा है। इस क्रिया को करने वाला है—निरति। यही है—जीव। इसी श्वास से पूरा शरीर चेतन है। इसी में निरति है। यह स्वांसा द्वारा 9 नाड़ियों में से 72 नाड़ियों में, फिर पूरे जिस्म में फैली है। स्वाँसा में आपकी हाजिरी है। कोई मर गया तो कहते हैं कि यम प्राण निकालकर ले गया। यानी वायु में आत्मा का वास है।

तो निरति स्वांसा द्वारा शरीर में समाई हुई है जबकि सुरति मन के साथ बाहर घूम रही है। इस तरह सुरति को मन ने और निरति को माया ने पकड़ रखा है। ये दोनों को एक नहीं होने दे रहे हैं। इन्हीं को एक करने के लिए ध्यान किया जा रहा है। जब ये दोनों मिल जायेंगे तो

आत्म-साक्षात्कार हो जायेगा। ध्यान एकाग्र करने से यही तात्पर्य है कि किसी बिंदु पर पूर्ण रूप से सुरति और निरति को क्रमशः बाहरी जगत से और शरीर से निकालकर एकाग्र किया जाए। ध्यान एकाग्र करने से यही तात्पर्य है कि किसी बिंदु पर पूर्ण रूप से सुरति और निरति को इकट्ठा करके एकाग्र किया जाए।

अब मन ने कैसे पकड़ा सुरति को? मन के चार रूप हैं—मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार। जब यह संकल्प करता है तो इसे मन कहते हैं। इच्छाएँ आत्मा की नहीं हैं, शरीर और मन की आवश्यकता है। कोई निश्चय करने पर यही मन बुद्धि कहलाता है। मान लो, मन ने इच्छा की कि कमरा बनाना है। फिर बुद्धि इस पर निश्चय करती है कि बनाएँ या नहीं, पैसा है या नहीं। मान लो, बुद्धि ने हाँ कर दी, तो फिर तीसरा रूप चित्त सक्रिय हो जाता है। चित्त बताना शुरू करता है कि लेबर वहाँ फलानी जगह मिलेगी, सीमेंट वहाँ मिलेगा, रेत, बजरी के लिए फलाने को आर्डर देना है। जब हम चलकर वहाँ जाते हैं तो वो मन का चौथा रूप अहंकार कहलाता है। इसलिए जितनी भी अनुभूतियाँ हैं—मेरा घर, मेरे बच्चे, यह सब मन है।

सुरति ध्यान है। कभी यह ध्यान इच्छाओं में, कभी निश्चय में, कभी याद में लगा रहता है। बस, ऐसे ही उलझा रहा है मन आत्मा को। मन ही इच्छा करता है। मन और इंद्रियों की साँठ-गाँठ है। ये मिलकर आत्मा को परेशान कर रहे हैं।

इन सब मिल जिव को घेरा।।

आत्मा का जिन कर्मों से कोई संबंध नहीं है, वो किये जा रही है। जो भी काम हो रहे हैं, शरीर के निमित्त ही। खेती-बाड़ी का आत्मा से क्या संबंध। जितने भी कर्म हैं, लक्ष्य एक ही है, शरीर की आवश्यकताओं की पूर्ति। इन सब कर्मों में आत्मा भी शामिल हो गयी। आत्मा ने अपने को शरीर माना। यही अज्ञान है। आत्मा में इंद्रियाँ ही नहीं हैं। आत्मा का भोग-विलास से क्या संबंध। किसी से कोई संबंध नहीं है आत्मा का, पर आत्मा इन कामों में प्रविष्ट हो रही है। जैसे मकान खड़ा है तो नींव

आधार है, इसी तरह अज्ञान ही इस संसार का आधार है। ज्ञान हो जाने पर संसार का अस्तित्व ही समाप्त हो जाता है। वशिष्ठ मुनि से जब राम जी ने संसार के बारे में पूछा तो उन्होंने कहा—हे राम, किस संसार की बात कर रहे हो। संसार कभी उत्पन्न ही नहीं हुआ है। यह तुम्हारे चित्त का परिणाम है। चित्त का निग्रह करो, संसार का अस्तित्व ही मिट जायेगा। जो कुछ भी हम अनुभव कर रहे हैं, मन है। 24 घंटे मन आत्मा को भरमा रहा है। ज्ञान की प्राप्ति के बाद संसार का अस्तित्व उसी प्रकार समाप्त हो जाता है, जैसे रस्सी को साँप समझ लेने का भ्रम।

मन 24 घंटे आत्मा को भ्रमित किये हुए है। आखिर क्यों? क्योंकि जितने भी काम हैं, उनमें आत्मा की उर्जा चाहिए। यदि आत्मतत्त्व को निकाल दो तो संसार में कुछ नहीं होगा, वीरान हो जाएगा संसार। यदि सब आत्मनिष्ठ हो जाएँ तो कैसा होगा। कोई काम नहीं करेगा फिर। क्योंकि तब आत्मा को पता चल जाता है कि संसार का कोई भी पदार्थ उसतक नहीं पहुँच सकता, उसे किसी चीज की जरूरत नहीं है। इसलिए मन इसे भ्रमित किये हुए है।

मन बेहद गंदी चीज है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार मन की वृत्तियाँ हैं। ये पाँचों बड़ी गंदी चीजें हैं। ये मन की सहायक हैं। ये जगत के आधार हैं। ये ही शस्त्र हैं। इन्हीं से मन आत्मा पर वार करता है।

जैसे बुखार पकड़ लेता है तो मुख कड़वा हो जाता है, इसी तरह मन ने सुरति को पकड़ा हुआ है। पूरी दुनिया मन की तरंग में उलझी हुई है। सृजन को स्थिर रखने के लिए मन ने काम, क्रोध आदि को उत्पन्न किया। यदि काम न होता तो न ही विषय-विकार होते और न ही सृजन आगे बढ़ता। यदि लोभ न होता तो कोई संग्रह ही नहीं करता। मोह नहीं होता तो कोई किसी को न पालता। जंगल में छोड़ देते तब माँ-बाप अपने बच्चों को या नदी में बहा देते।

जिस तरह पिंजरे का हरेक तार पंछी को कैद करने के लिए है, इसी तरह मन की प्रत्येक वृत्ति आत्मा को कैद करने के लिए है। ये सब मिलकर सुरति को बाहर उलझाए हुए हैं। दूसरी ओर निरति माया के

साथ उलझी है। वो श्वास के साथ इंद्रियों में उलझी है। शरीर में सार ही श्वास है। गोरखनाथ की कबीर साहिब से गोष्ठी हुई तो गोरखनाथ ने पूछ—

गोरख : काया मध्ये सार क्या?

साहिब : काया मध्ये श्वासा सार।

गोरख : कहाँ से उठत है, कहाँ को जाय समाय?

साहिब : शून्य से उठत है, नाभि दल में आय।

गोरख : हाथ पाँव इसके नहीं, कैसे पकड़ी जाय?

साहिब : हाथ पाँव इसके नहीं, सुरति से पकड़ी जाय।

सुरति के दंड से, घेर मन पवन को, फेर उलटा चले....॥

सुरति और निरति का मेल नहीं हो रहा है, तभी आत्मा का साक्षात्कार नहीं हो रहा है। यह बहुत बड़ा रहस्य है। असल में श्वास शून्य से नाभि में चक्कर काट रही है। इसे ऊपर की ओर पलटना है, तभी सुरति और निरति का मेल हो पायेगा। गोस्वामी जी भी कह रहे हैं—

उलटा जाप जपा जब जाना, बाल्मीकि भये ब्रह्म समाना॥

पलटू साहिब भी तो यही कह रहे हैं—

अरे हाँ रे पलटू, ज्ञान भूमि के मध्य चलत तहँ उलटी स्वाँसा॥

इस श्वास को शीश से सवा हाथ ऊपर शून्य की ओर ले जाना है। अभी तो यह आदत नहीं है, पर धीरे-धीरे आदत हो जाने से सहज हो जायेगा। यहाँ साहिब कह रहे हैं—

पवन को पलट कर, शून्य में घर किया, धर में अधर भरपूर देखा।

कहैं कबीर गुरु पूरे की मेहर से, त्रिकुटि मध्य दीदार देखा॥

ध्यान रहे कि सुरति के द्वारा श्वास ऊपर की ओर चलेगी। इसलिए—

सकल पसारा मेटि कर, मन पवना कर एक।

ऊँची तानो सुरति को, तहाँ देखो पुरुष अलेख॥

जब श्वास ठीक ऊपर की ओर चलेगी तो शरीर खाली होने लगेगा, सुरति और निरति मिलने लगेंगी। ऐसे समय में मन चालाकी से

सुरति को दूसरी जगह ले जायेगा और उसी समय निरति नीचे नाभि में आ जायेगी, क्योंकि वो श्वास में है और श्वास सुरति के सहारे ही ऊपर जा रही थी। अतः सारा खेल ही समाप्त हो जायेगा। इसलिए साहिब कह रहे हैं—

पल पल सुरति संभाल ॥

सुरति के सहारे ही निरति ऊपर की ओर चलेगी।

सुरति के दंड से घेर मन पवन को, फेर उलटा चले ॥

वाह, मन को क्यों घेरना? क्योंकि यह सुरति के अन्दर, निरति के अन्दर समाया हुआ है। सुरति और स्वाँसा एक कर दोगे तो स्वाँसा अष्टमचक्र की ओर चलने लगेगी। ऐसे में सुरति का सिमटाव होने लगता है। मन ऐसा नहीं होने देता है। वो सुरति को चुपके से हटा देता है। जब नाभि में स्वाँसा गिरेगी तो पता है क्या होगा। स्वाँस के गिरते ही निरति बिखर जायेगी, शरीर में समा जायेगी। अब जब समा गयी तो सुरति का शुद्ध रूप नहीं मिल पायेगा। वास्तविक रूप दोनों के मिलने के बाद मिलेगा।

तन थिर मन थिर बचन थिर, सुरति निरति थिर होय।

कहैं कबीर वा पलक को, कल्प न पावै कोय ॥

वो एक पल कल्पांतर की साधना से ही उत्तम है। पर यह पल इतनी आसानी से आता नहीं है।

इंड़ा पिंगला चलती हैं तो साँस नाभि में आती है। इड़ा बायाँ स्वर है और पिंगला दायाँ स्वर है। जब दोनों बंद होगी तो सुषुम्ना खुलेगी। इसी को कह रहे हैं—

बाहर का पट बंद कर, अन्दर का पट खोल ॥

इंड़ा पिंगला के मध्य सुषुम्ना से होती हुई श्वास शीश से सवा हाथ ऊपर शून्य की ओर चलेगी, जहाँ सुरति और निरति का मेल होना है, पर मन की चेष्टा होगी कि सुरति और निरति न मिल पाएँ। वो ध्यान को हटाएगा, भगाएगा कहीं ओर। मत सोचना कि अब यह दिखे, वो दिखे। देखते रहो कि मन कहाँ जा रहा है। क्योंकि इसी को नियंत्रित करके तो आत्म-साक्षात्कार होगा।

राजा जनक द्वारा आत्म-ज्ञान माँगने पर अष्टावक्र ने उनसे कहा— मैं तुम्हें दो मिनट में आत्मज्ञान देता हूँ, पर अपना तन, मन, धन मुझे दे दो। राजा जनक ने कहा—दिया। अष्टावक्र ने कहा कि आज से तुम्हारा मन मेरा है, तुम्हारा तन मेरा है और धन भी मेरा है। इसलिए हम आज्ञा देते हैं कि मन से कोई इच्छा नहीं करना, बुद्धि से कोई फैसला नहीं करना और चित्त से कुछ याद नहीं करना और अहंकार में आकर कोई क्रिया नहीं करना। फिर कहा—आँखें बंद करो। राजा जनक ने आँखें बंद की। अष्टावक्र ने पूछा—कुछ पता चला। राजा ने कहा—हाँ, अनुभव हो गया।

मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार का निग्रह करने के बाद जो बचता है, वो ही आत्मा है। राजा जनक पात्र थे, इसलिए दिखा दिया।

....इस तरह जैसे-जैसे मन एकाग्र होता जाएगा, शरीर खाली होता जाएगा। शरीर स्वांस के बिना मुरझाने लगता है। यह चेतन ही स्वांसा से है। मन स्वांस को नीचे लाने लगता है। तब चाहोगे कि हिलूँ तो नहीं हिल पाओगे। यह तो पता चलेगा कि हाथ यहाँ हैं, पैर यहाँ हैं, पर आज्ञा नहीं मानेंगे। ऐसे में मन डरायेगा कि शरीर नहीं मिलेगा। बड़े-बड़े यहाँ पर डर जाते हैं और शरीर के विषय में सोचने लगते हैं। फिर लगेगा कि घोर अंधकार में सिमटता जा रहा हूँ। हरेक को शरीर से महोब्बत है। कुछ शरीर को बलात ढूँढ़ने लगते हैं। फिर धीरे-धीरे लगेगा कि केवल स्वांस हूँ। मन स्वांसा को नाभि में लाकर आपको तंग करना चाहता है, हताश करना चाहता है, पर लगे रहना। जैसे ही शीश से सवा हाथ ऊपर शून्य में स्थित हो जाती है स्वांस, इसी को कह रहे हैं—

शून्य महल चढ़ बीन बजाय, खुले द्वार सत्यघर की।।

जब शून्य पलटने लगती है तो अपना वजूद भी मिटने लगता है। जो यह अनुभूति है कि फलाना हूँ..... भूलने लगता है। जैसे ही शून्य पलटती है तो आत्म-साक्षात्कार हो जाता है।



मेरा भेद निरंजन से प्यारा

विष अमृत रहत इक संग। मलयागिरि में रहत भुजंगा ॥

इस शरीर के अंदर विष भी भरा है और अमृत भी। यह देही का खेल कितना सूक्ष्म है! इतना बुद्धिमान प्राणी शरीर के संचालन के सिस्टमों को नहीं जानता है। बहुत बड़ा दुख है। जब भी अपने को जानने की कोशिश करता है तो अबूझा-सा महसूस होता है। लगता है कि इसे अपने बारे में जानकारी नहीं है। नहीं जानता है कि आत्मा कहाँ बैठी है, मन कहाँ बैठा है, क्या कर रहा है। नहीं जान रहा है कि काम, क्रोध आदि कैसे काम कर रहे हैं। नहीं जानता है कि मन का रूप कैसा है। मन के पास क्या ताकत है, नहीं जान रहा है। इंसान नहीं जानता है कि आत्मा शरीर में कैसे स्थित है। मनुष्य नहीं जानता है कि कहाँ से आया है और कहाँ जाना है। इन बातों से आदमी बिलकुल भी बेखबर है। घट का बिलकुल परिचय नहीं है।

काया गढ़ खोजो मोरे भाई। तेरी काल अवध टर जाई ॥

क्या मनुष्य अंदर की संरचना, अपनी आत्मा, कर्मज्ञानेन्द्रियों को समझने में सक्षम है? अपनी ताकत से किस सीमा तक जा सकता है? ये विषय अत्यंत गंभीर हैं। हममें अगर विरोधी शक्तियाँ काम कर रही हैं तो कैसे कर रही हैं? क्या कर रही हैं? वो कैसे भ्रमित कर रही हैं? हमारा शत्रु कौन है, कैसा है, जो हमारी आत्मा को अज्ञान की पतों में ढके हुए है? हम अक्षम हो रहे हैं। जब चिंतन करते हैं तो संकेत मिलता है कि क्रूर ताकत, जो हमारी विरोधी है, वो ही हमें अपना निजस्वरूप पाने नहीं दे रही है। जब अपनी आत्मा की ओर बढ़ते हैं तो वो रुकावट दे रही है। इन बातों पर कोई चिंतन नहीं कर रहा है। हम आस लगाए हुए हैं कि स्वर्ग में जाकर मोक्ष पायेंगे। जब वहाँ सुख का भोग किया जा रहा है तो

मन है। इसलिए वहाँ आत्मज्ञान नहीं है। वहाँ तो कर्मों का फल भोगा जा रहा है। त्रिलोक के अन्दर जितने भी लोक हैं, कोई सुरक्षित नहीं है। शांतिर ताक़त इतनी ताक़तवर है।

सय्याद के काबू में हैं सब जीव विचारे ॥

एक विरोधी ताक़त हमें बाँधे हुए है। वो जब भी चाहती है, जैसा भी चाहती है, करवा लेती है। शरीर का कण्ट्रोल भी वही कर रही है।

मन ही निरंजन सबै नचाए।

तीन लोक में मनहिं विराजी। ताहिं न चीहृत पंडित काजी ॥

उसी की हुकूमत चल रही है। हमारा अन्तःकरण उसी के द्वारा संचालित हो रहा है। जब भी चाहता है, जो भी चाहता है, करवाता है। हम सब नितान्त एक क्रूर ताक़त के हाथ में हैं। किसी कीमत पर अपनी सामर्थ्य से नहीं छूट सकती है आत्मा। अगर ईमानदारी से भक्तियों की तरफ देखें तो समस्त भक्तियों का केंद्र मन तक है। जिनके सान्निध्य में हम मोक्ष की आकांक्षा करते हैं, वो खुद मुक्ति की राह पर कितना चल चुके हैं, आत्मा और, परमात्मा के कितने नज़दीक हैं, यह देखना होगा।

अंधे को अंधा मिले, राह बतावे कौन ॥

इसका मतलब है, हमें देखना होगा कि जिनका अनुकरण करके, जिनके नक्शेकदम पर चलकर हम अपना कल्याण करना चाहते हैं, उनका अपने मन पर कितना नियंत्रण है, वे आत्मा के कितने नज़दीक पहुँचे हैं। क्या वे हमारी आत्मा को विरोधी ताक़त से छुड़ाने में सक्षम हैं? जब चिंतन करते हैं तो वो जानकारी नहीं रख रहे हैं। बाप अपने बेटे को गद्दी देकर जा रहा है।

अंधा अगुआ तेहि गुण माहिं। बहु अंधा तेहि पाछे जाहिं ॥

साहिब ने सच बोला, पर वो भी मृदुल भाषा में बोला।

वाणी ऐसी बोलिये, मन का आपा खोय।

औरन को शीतल करे, आपहु शीतल होय ॥

इस दुनिया में अंधापन चल रहा है। जैसे अन्तर्मुखी होंगे, आपका विरोध होगा। कभी मेरे नामी कहते हैं कि लोग विरोध करते हैं। मैं कहता हूँ कि यह तो होगा ही। जैसे ही आप कुरीतियों को छोड़ेंगे, अन्तर्मुखी होंगे, आपका विरोध होगा। जिस महापुरुष ने पाखण्ड के विरुद्ध बोला, उसे यातनाएँ दी गयीं। चाहे आज हम उन्हें भगवान के तौर पर, महात्मा के तौर पर मान रहे हैं, पर उस काल में उनका घोर विरोध हुआ। इस तरह साहिब ने एक मुहिम चलाई कि आत्मा को छुटकारा प्राप्त कराना है। क्यों? क्योंकि यह विरोधी ताकतों के शिकंजे में है। हमारी आत्मा को ये अनात्म कर्मों में लगा रही हैं।

जो आत्मा के अनुकूल नहीं है, वही सब इससे करवाया जा रहा है। जैसे बाजीगर बंदर के स्वभाव के विरुद्ध सब काम करवा रहा है, इस तरह संसार के सभी काम आत्मा के स्वभाव के प्रतिकूल हैं। जैसे शेर को पकड़कर उसे आग के गोले के बीच में से जंप करवाया जाता है। यह उसके स्वभाव के प्रतिकूल है। वो कतई नहीं करना चाहता है। पर उसे भयभीत करके करवाया जाता है। शेर की आँखों में अँधकार में भी देखने वाला तत्व है, इसलिए वो रोशनी की तरफ देखना नहीं चाहता है। उसके सिर में दर्द होता है। पर भयवश उसे करना पड़ता है। इस तरह मन सब कुछ आत्मा से करवा रहा है। चोरी करने जा रहे हैं तो आत्मा शामिल हो जाती है। हम वर्तमान में जो भक्ति का वातावरण देख रहे हैं, क्या इसमें आत्मज्ञान है? क्यों न हम ईमानदार बनें! हम सत्य को स्वीकार करें, सत्य पर चलें।

साँच बराबर तप नहीं, झूठ बराबर पाप।

जाके हृदय साँच है, ताके हृदय आप ॥

जितनी भी तपस्याएँ हैं, उनमें सत्य के बराबर कोई भी नहीं है। क्यों? जैसे ही हम सत्य का अनुकरण करते जाते हैं, आत्मा के नज़दीक पहुँचते जाते हैं। तब सब काम झूठ लगेंगे। जब हम सत्य की पराकाष्ठा पर पहुँचते हैं तो आखिर में परमात्मा ही खड़ा हो जाता है। पर दूसरी ओर

यदि हम झूठे, नाशवान् पदार्थों की तरफ चलेंगे तो आखिर में विरोधी ताकतें ही खड़ी होंगी।

तो आत्मा के अनुकूल कुछ भी नहीं है। ये चीजें आत्मा का उत्थान करने वाली नहीं हैं। पर सबने इसी को भक्ति माना। किसी ने मुझसे कहा—महाराज, आज चारों तरफ भक्ति का वातावरण लग रहा है; लगता है कि इंसान ने शरीर की नाशवानता को महसूस कर लिया है।

पर यदि हम पूरा भक्ति-क्षेत्र देखें तो व्यवसायिक नज़र आयेगा। निष्पक्ष होकर चिंतन करें तो साकारवाद से लेकर गुरुवाद तक पूरा भक्ति-क्षेत्र व्यवसायिकता से ग्रसित मिलता है। तमाम उदाहरण मिलते हैं। उदाहरण के लिए आज इस समय भक्ति के प्रचार के सूत्र क्या हैं? किन माध्यमों से हो रहा है? वर्तमान में देखते हैं कि कौन-से सूत्र हैं, जिनके द्वारा भक्ति प्रचारित हो रही है। पहला है—मीडिया। वो कैसे कर रहा है प्रचार? चैनलों द्वारा कर रहा है। अब चैनल तो व्यवसायिक हैं; पैसा न मिले तो बंद कर देते हैं। यदि रावण को खड़ा कर दें तो उसका भी दे देंगे। यानी भक्ति का प्रचार करने वाली मीडिया शातिर है; वो व्यवसायिक है; उसका कहीं दूर से भी भक्ति से नाता नहीं है। लोग क्यों आए मीडिया में? क्योंकि बड़ा पैसा देखा। मत सोचना कि श्रद्धा में बड़े भक्त बैठे हैं। 70 महात्मा एक दिन में प्रोग्राम दे रहे हैं। 20 मिनट का एपीसोड है। एक मिनट का एक हजार रुपये के करीब लिया जाता है। उसके साथ मशहूरियाँ भी देते हैं और मात्र गर्दन ही दिखाते हैं। इस तरह एक महीने का हिसाब लगाएँ तो साढ़े 4 करोड़ रुपया कमा रहे हैं। फिर मशहूरियाँ बगैरह और केबल-क्वैक्शन वालों से भी देश-भर से पैसा लेते हैं। इस तरह बहुत हो गया।

अगर चैनलों के डायरेक्टरों को देखें तो सब संसारी हैं, हिंसक हैं। दुनिया बाहरी आडंबर देखकर कह रही है—वाह! वो ग्राहकों को बुला रहे हैं। भक्ति के 10 चैनल चल रहे हैं, जिनमें प्रतियोगिता है। यह मीडिया, जो भक्ति का प्रचार कर रही है, उसका लक्ष्य क्या है? पैसा।

किसी पंथ की बहुत-2 किताबें हैं, जो सौ-दो सौ रुपये से भी अधिक कीमत पर बेच रहे हैं। कई पंथ प्रिंट मीडिया के सहारे उठे हैं। उनके पास ज्ञानतत्व नहीं है। हम जो कुछ भी दे रहे हैं, घाटे में दे रहे हैं। क्योंकि हम व्यवसायिक नहीं हैं।

पल्ली मोड़ में किसी ने ज़मीन दी। फर्द कटानी थी। वो 5 हजार माँग रहा था। मैंने नहीं दिये। क्यों? क्योंकि घूस नहीं देता हूँ। सिद्धांत का पक्का हूँ। हम आध्यात्मिक हैं, व्यवसायिक नहीं हैं। वो तो गाय का मूत्र भी बेच रहे हैं। वो व्यवसायिक हैं; वो राजनीतिज्ञ हैं।

तो इस तरह फिर आबे-बाबे हैं प्रचार के स्रोत।

मेरे एक नामी का दोस्त टीचर था। दोनों साथ में पढ़े। 4-5 साल बाद उसके दोस्त ने नौकरी छोड़ दी और सतवा करने लगा। वो शास्त्री बन गया। मेरे नामी ने कहा कि तुमने नौकरी छोड़कर ठीक नहीं किया। सरकारी नौकरी थी; बड़ा बेवकूफी का काम किया। वो बोला—कौन-सी बेवकूफी की 7-8 हजार रुपए तनखाह थी। अब सतवा करता हूँ तो एक बार में 50-55 हजार मिलता है। नामी ने पूछा कि यह ख़याल कैसे आया? वो बोला कि हमारे ही गाँव का एक आठवीं फेल लड़का था। वो रेहड़ी लगाता था। बाद में उसने शास्त्री का काम शुरू किया और देखते-ही-देखते उसके पास कोठियाँ, कारें बगैरह सब कुछ हो गया। मैंने सोचा कि मैं तो बेवकूफ़ हूँ। मैंने भी यही काम शुरू कर दिया। मैंने इस काम से जो प्रॉपर्टी बनाई, वो सरकारी नौकरी से कई सालों में भी नहीं बना सकता था।

कहने का भाव है कि उनका एक मुद्दा है, उनका एक लक्ष्य है और वो है—धन। इसके लिए वो अपनी स्टेज पर नेता लोगों को भी बोलने का अवसर प्रदान करते हैं। इससे उन्हें बड़ा लाभ होता है। आपस में वोट-नोट की साँठ-गाँठ होती है और लोग भी प्रभावित होते हैं कि नेता आया है। फिर मीडिया भी लिखती है कि महात्मा के पास फ़लाना नेता पहुँचा। मैं किसी को भी बोलने का अवसर प्रदान नहीं करता हूँ।

मैंने कई साल बड़े-बड़े पंथों के महात्माओं को टटोला। सबके पास गया; गोष्ठी की। जाते ही कहा कि मैं कुछ माँगने नहीं आया हूँ। जो पाना था, अपने गुरु से पा चुका हूँ। मैं केवल आपके ज्ञान की गहराई नापने आया हूँ। जब टटोला तो किसी के पास सच्चा ज्ञान नहीं था, किसी के पास आत्मज्ञान नहीं था। आप देखो बड़े-2 महात्मा मेरे नामी से भी टक्कर नहीं ले सकते हैं। इसलिए मेरी निंदा तो होगी ही। मैं तैयार हूँ।

तो धर्म-स्थानों में बैठे हुए प्रचारक लोग कौन हैं? साहिब कह रहे हैं—

दसों दिशा में लागी आग। कहैं कबीर कहाँ जड़यो भाग ॥

जब उनपर नज़र डालते हैं तो कैसे मिलते हैं? वो क्या कर रहे हैं आखिर? परमात्मा के कितने नज़दीक हैं? उनके अन्दर परमात्म-तत्त्व कितना दिख रहा है? बुल्लेशाह तभी तो कह रहे हैं—

ठाकुर द्वारे ठग हैं बसदे, बिच तीर्था धावड़ी।

विच मसीता पोसती बसदे आशिक रहन अलग ॥

महापुरुषों ने तो जान की कीमत चुकाकर भी सच बोला है। वो कितने खूँखार हैं! वो कितने अपराधी हैं!

जब साहिब पहली बार धरती पर आए तो 100 साल रहकर गये। परम-पुरुष ने पूछा कि एक भी जीव को नहीं लाए क्या? साहिब ने कहा कि जिसे सुबह समझाता हूँ, वो शाम को भूल जाता है; जिसे शाम को समझाता हूँ, वो अगले दिन सुबह भूल जाता है। बीच में साहिब तंग पड़े; सोचा कि इसे मिटाकर, सबको ले चलता हूँ।

काल मेटि सकल ले जाऊँ ॥

परम-पुरुष से कहा—आपका हुकुम नहीं था, नहीं तो सबको ले आना था। विचार आया कि यदि ताक़त लगाऊँगा तो आपका शब्द कट जायेगा।

जोर करूँ तो शब्द नशाई ॥

जीवन में एक बार सबको साहिब के पास आने का मौका

मिलता है। यह कोई एक बार की बात नहीं होती है।

युगन युग हम यहाँ चले आए। जो चीह्वा सो लोक पठाए॥

असंख्यों जीवों को पार किया गया है।

अब कैसे होता है? यह अवसर ऐसे मिलता है कि मेरा कोई-न-कोई नामी उसके संपर्क में आयेगा; यह बात उठायेगा। यह परम-पुरुष ने मौका दिया है।

जयपुर का एक 'राजा' नाम का लड़का था। उसने मुझसे बड़े सवाल किये। वो शादी भी नहीं करना चाहता था। वो माया में नहीं जाना चाह रहा था। उसने कहा कि मेरी शंकाओं को दूर करो। उसने कहा कि यदि परम-पुरुष त्रिकालदर्शी थे तो वो यह भी जानते थे कि क्या होगा। उन्हें पता था कि आगे चलकर ऐसा होगा। फिर क्यों बनाया निरंजन को? क्यों आत्माओं को दुखों में फेंका? हम तो आनन्द में थे। सूरदास भी कह रहे हैं—

प्रभु तुमको तो है खेल विनोदा, पर हमें दुख भारी है॥

कहा कि तुम तो आनन्द में हो, पर हम दुखी हैं।

तो उसका सवाल था कि हमें संकट में क्यों डाला? उसने कहा कि जो हो रहा है, फिर उसी की मरजी से है न! उसके सवाल बड़े तीखे थे। उसने कहा कि जो वर्तमान में हो रहा है, उसी की मरजी से है। फिर वो दयाल कैसे हुआ?

उसका सवाल था कि त्रिकालदर्शी परम-पुरुष को, मालूम था कि निरंजन ऐसा होगा..... क्यों बनाया? अगर नहीं मालूम था तो सर्वज्ञी कैसे हुआ? अगर मालूम था तो जो कुछ हो रहा है, इसमें कसूरवार परम-पुरुष थे, निरंजन नहीं।

सवाल तीखा था। मैंने उसे संतुष्ट किया। पर यह बड़ा मुश्किल है।

यदि उस परम-पुरुष में पहले से ही मन था तो पहले पाप भी था, गंदगी भी थी और शब्द द्वारा फेंका। फिर निष्कपट कैसे हुआ?

क्या सिगरेट जीवन के लिए ज़रूरी है? नहीं। यह आदत कहाँ से आई? मैंने कहा कि देखो, अतीत की ओर चलो।

कारण करन नहीं निरमाए। सत्य पुरुष तब गुप्त रहाए ॥

उनमें ये चीजें नहीं थीं।

अब ठंड क्यों लग रही है? कहाँ से आई ठंड? यदि मौसम के कारण आई तो मौसम कहाँ से आया? धरती गोलाकार घूम रही है। जब सूर्य से दूर होती है तो ठंड हो जाती है, क्योंकि तब सीधी किरणें नहीं आतीं। फिर बर्फीली हवाएँ ठंडक को समेटे हुए आती हैं, इसलिए भी ठंड लगती है। समुद्र के किनारे रहने वाले साँवले क्यों हैं? बंगाली, गुजराती, मद्रासी बगैरह। वहाँ समुद्र की सतह पर 20-25 मीटर तक गर्म है। इसलिए जो हवा वहाँ से चल रही है, गर्म है। पर आस्ट्रेलिया के पास के लोग साँवले नहीं हैं। क्योंकि वहाँ जल का तापमान बहुत डाउन है। वो वाष्प वहाँ नहीं बन रही है। उस हवा के प्रभाव से यहाँ असर पड़ रहा है। ठंड एक कारण से आई।

परम-पुरुष गुप्त था। कुछ भी नहीं था तब। इच्छा की। इच्छा क्यों की? सवाल उठे।

गुप्त हते प्रगट होय आय ॥

अव्यक्त था। अपने को व्यक्त करना चाहा। यह एक स्वाभाविक चीज़ इंसान में भी है। जो पहलवान है, कुश्ती द्वारा अपनी कला दिखाना चाहता है; जो संगीतकार है, वो भी गाकर सुनाना चाहता है। हम सब उसी के हैं न! तो वो व्यक्त हुआ। कैसे हुआ? उसने अपने को व्यक्त किया।

प्रथम पुरुष शब्द परकासा। दीप लोक रचि कीन्ह निवासा ॥

परम-पुरुष ने पहले शब्द पुकारा, अद्भुत प्रकाश हुआ, जो श्वेत था। वो एक तत्व हुआ। फिर परम-पुरुष उसमें समा गये। यही काम तो निरंजन ने भी किया। वो शून्य में समा गया। मन भी इच्छा कर रहा है। पर मन जो भी इच्छा कर रहा है, वो कारण-करण से संबंध है। पर परम-पुरुष की यह इच्छा सात्विक थी, मलिन नहीं थी। क्योंकि चेतन में स्फुरणा तो होगी ही।

सिगरेट की आदत लगाई जाती है। तो भी प्रिय लगती है।

हते गुप्त प्रगट होय आय ॥

अब व्यक्त हो गये, एक्विट्व हो गये। आपने सुना कि आत्मा हिलता-डुलता नहीं। तो क्या जड़ है? नहीं। निरंजन ने खेल किया; वैसा ही करना चाहा, पर बना नहीं पाया। क्या शरीर चल सकता था? नहीं। क्या आत्मा कुछ उठा सकती थी? नहीं। इसी तरह बड़ी बारीक बात है। परम-पुरुष उस तत्व में समा गया। वो एक्विट्व हो गया। पर वो निःतत्व है, पाँच तत्व का नहीं है। वो उसमें समा गया। अब पूरा सत्यपुरुष बन गया। पहले अकह था, गुप्त था, अनामी था। यह प्रगट हुआ। इतना आनन्द था कि पूछो मत। यानी अपने को व्यक्त किया। जैसे बीज अंकुरित होकर पेड़ बन गया। ऐसा ही हुआ। अंकुरित होने के लिए बेल चाहिए थी, इसलिए शब्द से वो तत्व बनाया। तभी तो कहा—

शब्दै धरती शब्द आकाश। शब्दै शब्द भया प्रकाश ॥

जैसे पानी का मुट्ठा भरकर ऊपर फेंका तो वापिस आकर फिर पानी हो गया। ऐसे उस तत्व को उछाला तो वहीं अनन्त आत्माएँ हो गयीं।

हमारे शरीर में कितने शिक्राणु हैं? अगर आदमी के पूरे शुक्राणु गिनें तो इतने हैं कि यदि सभी प्रत्यक्ष होकर आ जाएँ तो धरती पर इतनी जनसंख्या हो जायेगी कि अनन्त। आपकी जिंदगी में अनेक जीवन हैं। मोहनलाल के बाप के शुक्राणु में अनन्त मोहनलाल थे। जैसे आपके घर में जितनी भी चींटियाँ हैं, सबमें आत्मा है। ऐसे ही उन सबमें आत्मा है। यह शरीर बड़ा विराट है। तभी तो कहा—

यह काया है समरथ केरी। काया की गति काहू न हेरी ॥

वो सब आपमें कारण रूप में हैं। जब कारण द्वारा गर्भवती किया तो बाहर प्रकट हो जाता है। ढाई से तीन करोड़ के करीब शुक्राणु एक बार संभोग में बाहर आते हैं। वाह! क्या करते हैं? जो पानी बहता है तो किधर जाता है? ढलान में। वो शुक्राणु नारी के रज से निकलने वाले डिम्ब को पकड़ते हैं। वो इंसान बनना चाहते हैं। वो सब दौड़ते हैं। बड़ी

स्पीड में गर्भाशय की तरफ दौड़ते हैं। दौड़ते-2 आधे तो रास्ते में दम तोड़ देते हैं, आधे थक जाते हैं। यह कम्पीटीशन गर्भ से ही शुरू होता है। बड़े बुद्धिमान शुक्राणु हैं। अब वो स्थान इतना संकीर्ण है कि एक ही प्रवेश ले पाता है। **बाकी को मरना-ही-मरना है। इसलिए संभोग को महापाप कहा गया। हरेक मज्जे में सज़ा है।**

तो बाकी वहाँ मर जाते हैं। बेबी ट्यूब सुरक्षित स्थान है। भीड़ में तो स्वाँस रुक जायेगा। वो इतना सूक्ष्म स्थान है कि एक का ही स्थान है। दो भी हो सकते हैं। पर शर्त है कि एक साथ पहुँचना पड़ेगा। तीन भी ऐसे ही हो सकते हैं। जो वीर्य है, ऐसा तत्व है कि अपने बिंदू से हटने के बाद जमता है। इतनी स्पीड में जमता है कि सब उसमें ख़त्म हो जायेंगे। जैसे शहद में मक्खी गिरी तो मर जायेगी। बस, उन्होंने मरना ही है। इस तरह यह कम्पीटीशन पैदाइशी है इंसान में। बाकी मर जाते हैं।

तो वहाँ अमर-लोक में अनन्त बूँदें हुईं। वो सब वहाँ घूमने लगीं। परम-पुरुष ने इच्छा की कि वो सीज़ न हों। परम-पुरुष उन्हें देख बड़े खुश हुए। जैसे आप अपने बच्चो को देखकर खुश हो जाते हैं, ऐसे ही वो परम-पुरुष खुश हुआ। अब क्या करना चाहते थे? वे अमर-लोक को सँवारना चाह रहे थे, और अच्छा बनाना चाह रहे थे।

इस तरह शब्द पुकारते गये और कूर्म, ज्ञान, विवेक आदि को उत्पन्न किया। ताकि सबमें ज्ञान भी हो। इतने में उन्हें ख़याल आया कि जो बोल रहा हूँ, वो हो रहा है, तो क्या एक और परम-पुरुष भी बना सकता हूँ। तो कहा—परम-पुरुष। परम-पुरुष हो गया। अभी एक और मधु बन जाए तो मैं देखूँगा कि नाक वैसी है कि नहीं, कान वैसे हैं कि नहीं। बाद में क्या देखूँगा कि अभिव्यक्ति वैसी है कि नहीं! विचार वैसे हैं कि नहीं! सोच वैसी है कि नहीं! परम-पुरुष जिस बिंदू पर थे, उसे छोड़ा और जो बनाया, उसमें यह चेक करने के लिए आ गये। वो चेतन हुआ। पर परम-पुरुष को अनुभव हुआ कि मैं तो वहाँ हूँ, यह नहीं हूँ। यह शंका एक मिनट के लिए आई। थी नहीं। यहीं से गड़बड़ हुई। तब ज़ोर लगाकर

वहाँ से अपने बिंदू पर आए। तो वो जो शंका आई, सोचा कि इसे अपने में से निकालना है। पाँचवाँ शब्द पुकारा। तो संशय निकली। शब्द तो था ही। यह निरंजन हो गया। पर अभी भी कुछ बच गया था।

संशय थी नहीं, पर यह कारण बन गया। जब देखा कि दो परम-पुरुष हो गये हैं तो संशय आ गयी। यह जानकर नहीं था। वो ऐसा नहीं करना चाह रहे थे। कहीं से भी नहीं। ऐसे विचार नहीं था परम-पुरुष का। यह कारण से हो गया।

तेज अंग से काल होई आया ॥

इसलिए मन में संशय होगी-ही-होगी। यह एक पल वाला मामला है। आप शांत हैं। बेटे का फूटा सिर देख गुस्सा आ गया। यानी कारणवश आया। इस तरह कारण से हुआ।

तो इस तरह 16 पुत्र उत्पन्न हो गये। अमर-लोक में बहुत आनन्द था। परम-पुरुष निरंजन को अमर-लोक में नहीं रहने देना चाह रहे थे। पर उसने तपस्या की; स्थान माँगा। परम-पुरुष ने कहा—जाओ, मानसरोवर में रहो। वो अमर-लोक में ही था।

आपकी कई बातों का संतान पर असर पड़ता है। उस समय नारी भयभीत है तो बालक पर भी असर पड़ता है। जैसे भोजन खाते हैं तो उसका असर पड़ता है। रति-विज्ञान में इसके बारे में विस्तार से है।

तो ऐसा हुआ कि उसने दुबारा तप किया। परम-पुरुष ने पूछा—क्या चाहते हो? कहा—ऐसा ब्रह्माण्ड दो, जिसका मैं राजा होऊँ। परम-पुरुष ने कहा—ठीक है। तुम एक रचना करो, तीन-लोक बनाओ। कहा कि कूर्म जी के पेट में उस रचना का बीज है। यानी आकाश-तत्त्व। यह कहाँ से आया? जब भी कोई चीज़ विस्तृत होती है तो स्पेस बन जाती है। इस तरह हुआ। कहा—कूर्म के पास है, ले लो। जो भी शंकाएँ हैं, मन है। अज्ञान मन है।

वहाँ उसने कूर्म जी से कुछ नहीं पूछा। परम-पुरुष ने कहा था कि माँग लेना; वो दयालु है, दे देगा। पर उसने जबरन उनके अंदर से ये चीज़ें निकाल लीं। कूर्म जी ने परम-पुरुष से पुकार की, कहा कि आपने भेजा

था, मैंने कुछ नहीं कहा, पर इसने जबरन लिया। परम-पुरुष ने कहा कि तुम बड़े हो, क्षमा कर दो। तो वो तत्व लेकर निरंजन ने पूरा ब्रह्माण्ड बनाया। शून्य से हवा बनाई। स्पेस में दो हाथों को प्रेशर देकर दूर से समीप (नजदीक) लाएँ तो हवा चलती है। फिर हवा से आग बनाई। आप दौड़ते हैं तो पेट में अग्नि उत्पन्न होती है। फिर आग से जल बनाया। दौड़ने पर जब आग उत्पन्न होती है तो पसीना आता है। यानी आग से पानी हो गया। फिर पसीने से बदबू आती है, जमकर मैल बनती है। जो जमने के बाद मैल बनी वो ही पृथ्वी है। तो जल से पृथ्वी बनाई। इस तरह पाँचों तत्व हुए। ये पूरा काल का संसार है। पर धातु या तत्व इसने नहीं बनाया। पर रचयिता, निर्माता निरंजन हुआ इनका। सूर्य, चंद्रमा आदि तो बनाए, पर जीव नहीं था, आत्मा नहीं थी। फिर इसने 64 युग तक तपस्या की; सोचा कि गलती हो गयी। परम-पुरुष ने कहा कि अब क्या चाहते हो? कहा—

दीजै खेत बीज निज सारा ॥

कहा कि आत्माएँ भी दो, जिनपर राज्य कर सकूँ; जैसे अमर लोक में हैं। तब परम-पुरुष ने मैल मथकर पुत्री उत्पन्न की। अब मैल कहाँ से आई? जैसे गंदगी पड़ी तो उठाकर साफ़ कर दी; पर फिर भी कुछ बच जाता है। उसे निकाला। इसलिए नारी शंका है। स्त्री में शंका है।

तामें भ्रम भ्रम रहे कबीरा ॥

परम-पुरुष ने निरंजन को आत्माएँ दीं। क्यों दीं? यही वो लड़का पूछ रहा था। इसलिए दीं क्योंकि जानते थे कि निरंजन और माया इसका कुछ नहीं बिगाड़ पायेंगे। उसने तपस्या की थी। वो जानते थे। सच भी है कि आत्मा का कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता है। मन ही दुखी होता है। आत्मा केवल अनुभव कर रही है। यह है खेल। शरीर का कोई अंग खराब हो जाए या कट जाए तो इंसान दुखी हो जाता है, कहता है कि मार डाला। यह शरीर तो माया और निरंजन है। परम-पुरुष ने जो दिया, बड़ी ही सेफ चीज़ है। इसका निरंजन कुछ नहीं कर सकता है।

तो जब आद्य-शक्ति पहुँची तो निरंजन उसे देखकर मोहित हुआ। उसने आद्य-शक्ति को निगल लिया। अब इंसान प्रेम क्यों करता है? यह प्रेम कहाँ देखता है? यह प्रेम आत्मा का स्वभाव है। परम-पुरुष ने आद्य-शक्ति से प्रेम किया, इसलिए वो प्रिय हो गयी। इसलिए नारी का आकर्षण है। स्त्री क्यों आकर्षित करती है पुरुष को? क्या नहीं मालूम है कि मल-मूत्र ही भरा पड़ा है। फिर क्यों करती है आकर्षित? क्योंकि परम-पुरुष ने प्रेम किया इससे। इसलिए प्रिय हो गयी।

मैं जानता हूँ कि यहाँ बैठे-2 किसी से नफरत करूँगा तो पूरी दुनिया उससे नफरत करने लग जायेगी। यह बड़ी अटपटी बात है। पर सावधान हूँ। कहीं से भी हिंसक नहीं बनना है। एक जगह बैठकर पूरे ब्रह्माण्ड की हुकूमत हो सकती है। पर यह नहीं करना है। हुकूमत निरंजन की है। राजा पर हुकुम चलाया जाए तो वो राजा नहीं रह जाता है, मंत्री हो जाता है। इसलिए वो चाहे मारे-काटे, कुछ भी करे। हमारा काम यह है कि जो हमारे संरक्षण में आए, उसे सुरक्षित करना है। अब 17 चौकड़ी असंख्य युगों का राज्य दे दिया है तो परम-पुरुष कोई दखलंदाजी नहीं दे रहा है। अभी 4 असंख्य चौकड़ी युग ही बीते हैं। जब यह सारा समय बीत जायेगा तो परम-पुरुष दुबारा ऐसा नहीं होने देगा। अनन्त बार मोहनलाल ब्रह्मा बन चुका है; अनन्त बार गुप्ता जी विष्णु बन चुके हैं। यह हिसाब भी अनगिनत है।

परम-पुरुष ने एक समय विचार किया कि इसे मिटा देता हूँ। पर सोचा कि पूरा सृजन खत्म करना होगा।

बचन करूँ प्रतिपाल, मोरि देश न आवही॥

मैंने लड़के को समझाया कि निरंजन कुछ नहीं कर सकता है इसका। परम-पुरुष यह बात जानते हैं।

अब आद्य-शक्ति क्यों मिल गयी निरंजन से? जब निगल लिया तो पुकार की। यहीं परम-पुरुष ने सोचा कि मिटा देता हूँ। पर विचार किया कि नहीं। तब क्या किया? साहिब कह रहे हैं—

तबहि पुरुष मोहिं पुकारा। ज्ञानी बेगि जाओ संसारा॥

साहिब कह रहे हैं कि तब परम-पुरुष ने मुझे पुकारा। तब साहिब कहाँ थे? परम-पुरुष ने अपनी उग्र शक्ति निकाली, बाहर की। क्योंकि जानते थे कि बाकी किसी से काबू में नहीं आयेगा। इसी सिद्धांत पर कबीर साहिब को परम-पुरुष का रूप माना जाता है। पर कबीर पंथियों ने खिचड़ी कर दी है। इसलिए मैं अपने को कबीर पंथी नहीं मानता हूँ।

परम-पुरुष ने अपनी मुख्य उर्जा निकाली। उनके नाम युग-युग में संसार में अलग-अलग थे। उन्हें कोई बनाया नहीं; खुद ही साहिब हुए।

जब 17 चौकड़ी असंख्य युग हो जायेंगे, तब परम-पुरुष निरंजन को मिटा देगा और सभी हंसों को अपने में समा देगा। यदि नहीं समाया तो भी निरंजन को मिटा देगा।

कोई कहता है कि क्या गारंटी कि वो फिर ऐसी दुनिया बनाए या नहीं! जिस चीज़ से आपकी एक आँख फूटी हो तो दुबारा उसी से फोड़ेंगे क्या? परम-पुरुष खुद ही तो परेशान हुआ न!

तो जब पहले साहिब आए तो बड़ी स्पीड में जीवों को उठा रहे थे। निरंजन आया; कहा कि मुझे शाप मिला है; ऐसे सबको ले जाओगे तो शाप का क्या होगा?

अब परम-पुरुष ने शाप क्यों दिया? यह सज़ा भी मन को है, आत्मा को नहीं।

तो कहा कि उठा-उठाकर ले जा रहे हो तो ख़त्म हो जायेंगे। लाख जीव रोज़ खाने हैं तो कैसे होगा! फिर क्या करूँगा? एक बार साहिब ने निरंजन को मिटा भी दिया। पर फिर जिंदा कर दिया। इसलिए निरंजन की देही बिना शरीर के है। सुरति से शीश जोड़ दिया।

अमी देह से ताहि जुड़ाई ॥

यह काम भी हो सकता है। पर किसी एक को भी जिंदा किया तो बड़ी मुसीबत हो जायेगी। इसलिए पदों में ही ठीक रहता है। दूसरा कहेगा कि हमारे सामने करो। तो

देव निरंजन सकल शरीरा ॥

अगर देह से देखना चाहते हो तो जितने भी पुरुष हैं, निरंजन का

रूप हैं। और आद्य-शक्ति को देखना चाहते हो तो स्त्री को देख लो। यह स्थूल रूप है।

तो निरंजन ने कहा कि क्या कर रहे हो! फिर तो संसार खाली हो जायेगा। फिर मुझे भी ले चलो, सज़ा कैसी है!

जब आद्य-शक्ति को निगला तो साहिब ने कहा कि परम-पुरुष की सुरति कर। यहीं युद्ध हुआ। परम-पुरुष ने कहा कि आद्य-शक्ति नहीं लेना; दे चुका हूँ। तो कहा कि परम-पुरुष का ध्यान कर।

हमारे नामी के पास प्रेतात्मा क्यों नहीं आती है? हम प्रेतात्मा को मारना नहीं चाह रहे हैं। प्रेतात्मा कारणवश आती है। किसी ने सताया हो या प्रेम कर रहा है तो आयेगी। दोनों तरह से आयेगी। एक बार प्रेतात्मा ने गुज़ारिश की; कहा कि मैं सामने आना चाहती हूँ, आज्ञा दो। मैंने कहा कि आ जाओ। नहीं तो सामने नहीं आ सकती है; बहुत तेज़ करेंट पड़ेगा। वो बोली कि आप इतनी-2 ताकत गंदे-2 लोगों में मत छोड़ो। मैंने पूछा—क्या हुआ? कहा कि फ़लाने को नचाती थी, पर अब सामने नहीं जा पा रही हूँ। मैंने पूछा कि क्यों नचाती थी? वो बोली कि मैं उनकी बहू थी। मैं बीमार पड़ गयी तो खटिया पर पड़ गयी। तब इन्होंने गला दबा-दबाकर मुझे मार डाला। पर मेरी इच्छा जीने की थी। जब मर रही थी तो सोचा कि कैसे बदला लूँ!

प्रेतात्मा तलवार से किसी को नहीं मार सकती है। वो केवल दिमाग़ को गड़बड़ कर सकती है। वो पहले प्रवेश लेती है। उसका शरीर नहीं है; केवल डरा सकती है, रूप बदल सकती है। वो बोली कि इनका ख़ानदान नहीं चलने देना था। मैं इनको धीरे-धीरे मार रही थी, निःसंतान करना था। क्योंकि मैं भी निःसंतान ही मरी हूँ। मैंने कहा—नहीं, अब तू जायेगी तो बहुत सज़ा मिलेगी। फिर उसने शर्त रखी; कहा कि मुझे मुक्त करो फिर। मेरा क्या कसूर है? आप न्याय करो। मेरे पास और कोई काम ही नहीं है; यही है कि इन्हें मिटाना है।

तो कहने का भाव है कि प्रेतात्मा आपके पास नहीं आ सकती है। सुरति करने पर भागेगी। ग़फ़लत में हैं तो आ सकती है। अगर मुझमें

भरोसा नहीं है तो आ सकती है।

तो आद्य-शक्ति की तरफ चलते हैं। उसमें निरंजन से भी अधिक ताक़त है। देवता भी परास्त होते हैं तो इसी की शरण में जाते हैं। पर वो भी निरंजन वाली बात करती है; उलझाती है यह भी।

माया महाठगिनी हम जानी ॥

पर परम-पुरुष इससे अधिक नाराज़ नहीं है। निरंजन से है। त्रिदेव पर जब संकट आता है तो पहले खुद निपट लेती है; पर जब बस नहीं चलता तो परम-पुरुष का ध्यान करती है। तब परम-पुरुष की शक्ति आती है। अब यह निरंजन के अधीन कैसे आई? साहिब ने मानसरोवर से निकाल दिया।

अब शक्ति बाहर आई तो डरने लगी। निरंजन ने कहा कि डरो नहीं; मैं पुरुष हूँ, तुम नारी हो। तुम्हारे पास आत्माएँ हैं; दोनों मिलकर सृष्टि करते हैं। इन्हें शरीर में डालो। कहा कि जीव को भ्रमित करना है। नहीं तो सब भाग जायेंगे। कहा कि मैं ही तेरा रचयिता हूँ; मेरे कारण से ही तेरी उत्पत्ति हुई है; तुम मेरी हो चुकी हो।

भग नहीं कन्या को हतो, यह चरित्र कीन निरंजना ॥

आद्य-शक्ति को गर्भ-द्वार नहीं था। मूत्रद्वार था, पर गर्भद्वार नहीं था। अब किसी ने सवाल किया कि परम-पुरुष का यह पहले से प्लैन था, क्योंकि निरंजन को शिश्न इंद्री थी। अगर उसे गर्भद्वार नहीं था, ठीक है कि नख छिद्र करके गर्भद्वार बनाया।

यह पूरी रचना करने के बाद निरंजन ने इसमें वीर्य आदि दिया। परम-पुरुष ने सत्य-सृष्टि करने को कहा था।

जो हरेक अपने को शरीर मान रहा है, यह माया की ताक़त है। दोनों ने मिलकर जकड़ा हुआ है। पक्की बात है कि नाम-दान देकर शरीर और मन दोनों के बंधन से निकाला। अब आप ऐसा फील नहीं करेंगे जैसा दुनिया के लोग कर रहे हैं।

तो निरंजन ने कहा कि भ्रमित करना है। इसलिए त्रिदेव को शक्ति ने भ्रमित किया। सभी जीव भ्रमित हो गये। अब आद्य-शक्ति ने

ऐसा क्यों किया ? साहिब कह रहे हैं—

धर्म सुनहु जन नारि सुभाऊ। अब तुहि प्रगट बरनि समझाऊ ॥
होय पुत्री जेहि घर माहीं। अनेक यतन परितोसे ताहीं ॥
गयी सुता जब स्वामी गेहा। रात्यो तासु संग गुन नेहा ॥
माता पिता सबै बिसरावा। धर्मदास अस नारि स्वभावा ॥
ताते अद्या भई बिगानी। काल अंग ह्वै रही भवानी ॥

कहा कि स्त्री का यह स्वभाव है। माता-पिता उसे पालते हैं, पर जब पति के घर जाती है तो उसी के प्रेम में रँग जाती है। तब माता-पिता को भूल जाती है। इसलिए आद्य-शक्ति बेगानी हो गयी।

तो जब निरंजन ने देखा कि साहिब सब जीवों को ले जा रहे हैं तो परम-पुरुष से पुकार की; कहा कि इस कबीर को धरती पर मत भेजो।

इन भवसागर मोर उजारो ॥

आपके घर को कोई उजाड़े तो परेशान हो जाते हैं। तो निरंजन परेशान हुआ। तो परम-पुरुष ने कहा कि युक्ति-युक्ति से उबारो, सम्मोहन से नहीं। निरंजन ने कहा कि मैंने भी ताकत नहीं लगाना है, आप भी नहीं लगाना है; सहज में जो आ जाए, उसे ले जाना।

इसलिए अधिक छेड़छाड़ नहीं कर रहा हूँ। आपको तो एक मिनट में बैरागी बनाया जा सकता है। किसी की तरफ न देखोगे। एक मिनट का काम है। निरंजन की बात में वजन है। एक दिन निरंजन ने कहा कि मुझे भी नाम दे दो। साहिब ने कहा कि यह नहीं करूँगा। वो बोला कि मेरा ज़ोर नहीं चल रहा है। साहिब ने कहा कि यदि तुझे दे दूँगा तो पूरी दुनिया खत्म हो जायेगी। क्योंकि तब सब निर्मल हो जायेंगे। जिस छल, कपट से तुमने दुनिया बनाई हुई है, वो सब समाप्त हो जायेगा। तू निर्मल हो जायेगा। इसलिए नहीं देना है।

इसलिए आपको नाम से निर्मल कर दिया। मन की हरकत होगी। वो खेल खेलेगा। दुनिया के काम दिखायेगा। पर जीवन का भार साहिब पर छोड़ देना। आपमें ही बैठकर साहिब अपना काम करेगा; निरंजन का कोई ज़ोर नहीं चल पायेगा।



पाँच शब्द औ पाँचों मुद्रा, लोक दीप यम जाला ।।

निरंजन ने जिस बीज रूपी पाँच शब्दों से पांच तत्व के शरीर की रचना की उन शब्दों का स्थान भी शरीर में रख दिया। जिसे काया का नाम कहते हैं। जीव आत्मा को सत्य पुरुष से दूर रखने के लिए काल निरंजन ने जीवों को अपनी भक्ति में लगाने के लिए काया नाम के प्रगट शब्द गुरु मंत्र के रूप में जीवों को दीये जिसमें सभी जीव काया के नाम का सिमरन करने लगे और अन्दर में खोज करने लगे। बड़े-बड़े ऋषी, मुनि, सिद्ध, साधक, ब्रह्मा, विष्णु, महेश, पीर, पैगम्बर, औलिया भी इन शब्दों में उलझ गये। निरंजन ने इस भक्ति से जीव को बड़ी-बड़ी शक्तिया, रिद्ध, सिद्ध, पावर, चार तरहा की मुक्ती का स्वर्ग दे दिया, यहां तक के सभी साधक निरंजन भगवान् की साधना में रम गए और 70 प्रकार की अनहद धुनों में आनन्द मगन रहने लगे और चुप्प रह कर अनहद धुनों का रस लेने के लिए एकांत की तालाश में रहे और शरीर के किसी न किसी बिन्दू पर ध्यान रोकने लगे, मगर आत्मा का ज्ञान न हुआ ऐसे में आत्मा शरीर से अलग ना हो कर अमर लोक अपने निज धाम न जा सकी।

काल अकाल न पावे पारा

कबीर साहिब भक्ति क्षेत्र में क्रांति लाए, सबको चौंका दिया। जिनकी पुरानी दुकानें चल रही थीं, बंद हुई। उनके निर्गुण पदों में उस देश का ज़िक्र आता है। वे कह रहे हैं –

मरहमी होय सो जाने संतो, ऐसा देश हमारा है।
बिन बादल जहाँ बिजुरी चमके, बिन सूरज उजियारा है।
बिना सीप जहाँ मोती उपजे, बिन मुख बैन उच्चार है।
ज्योति लगाए ब्रह्म जहाँ दरपे, आगे अगम अपारा है।
कहैं कबीर तहाँ रहन हमारी, बूझे गुरुमुख प्यारा है।

उस देश की महिमा साहिब ने अपनी वाणी में कही। यह आत्मा उस देश से आई है। जब तक वापिस वहाँ नहीं पहुँचेगी, जन्म मरण से छुटकारा नहीं मिलने वाला। साहिब ने सामीप्य, सालोक्य आदि चार मुक्तियों को नकारा थोड़े हैं, पर इनमें पुनर्जन्म है यानि ये सीमित समय की मुक्तियाँ हैं, इसलिए भवसागर में फिर-फिर आना पड़ेगा। पर वो देश निर्मल है, वहाँ से पुनर्जन्म नहीं होता। साहिब ने किसी का विरोध नहीं किया, उस लोक का ज़िक्र किया। वास्तव में वे एक महान हस्ती थे। सबने साहिब को अपने में मिलाने का प्रयास किया है, सबने उन्हें उचित स्थान दिया है। योगियों ने उन्हें योगीराज कहा है, क्योंकि उन्होंने ब्रह्माण्ड और अन्तर जगत की सब बातें कहीं, देखो, वो कह रहे हैं –

खेल ब्रह्माण्ड का पिण्ड में देखिया, जगत की भर्मना दूर भागी।
बाहर भीतर एक आकाशवत्, सुषुम्ना डोर तहाँ पलट लागी।
पवन को पलट कर शून्य में घर किया, धर और अधर में भरपूर देखा।
कहैं कबीर गुरु पूरे की मेहर से, त्रिकुटी मध्य दीदार देखा।

यानि महायोगी का गुण था उनमें; सब जानते थे। आजकल योग का प्रचार बहुत दिख रहा है। योग कमाई का साधन भी बन गया है। शरीर को स्वस्थ रखना ज़रूरी है, पर आप सोचें कि इससे पार होंगे तो ऐसा नहीं होगा।

साहिब का अपने समय के महान योगियों से शास्त्रार्थ हुआ। महान योगी गोरखनाथ उनके ज्ञान के आगे नतमस्तक हुए। साहिब प्राणायाम का विरोध नहीं कर रहे, पर इनका संबंध स्नायुमण्डल से है, आत्मा से नहीं। योग दो प्रकार का है - एक स्थूल, एक सूक्ष्म। स्थूल योग शरीर के स्थूल अंगों को स्वस्थ और चेतन करता है जबकि सूक्ष्म योग शरीर की सूक्ष्म कोशिकाओं को चेतन करता है। साहिब ने आत्म तत्त्व को चेतन करने की बात की। वो काम योग से नहीं होगा। हम स्वाँसा में सुमिरन कर रहे हैं तो यह योग और भक्ति दोनों है। हम तो अधूरी स्वाँस ले रहे हैं। भोजन खा रहे हैं तो एकाग्र होकर खाएँ, पानी पी रहे हैं तो एकाग्र होकर पीएँ। जो हम वैसे स्वाँस ले रहे हैं, अधूरी है, इसलिए एकाग्र होकर लें। अधूरी स्वाँस नाभि चक्र तक नहीं पहुँच रही है। इसलिए मैंने आपको स्वाँस ध्यान और नाम एक करने को कहा -

सकल पसारा मेट कर, मन पवना कर एक।

ऊँची तानो सुरत को, तहाँ देखो पुरुष अलेख ॥

इस तरह उस समय के योगियों में उनका स्थान बड़ा ऊँचा था। फिर कवियों में भी उन्हें कविराज कहा गया है। उनकी वाणी इतनी मीठी और सरल है कि भैसे पर बैठा गँवार भी उनकी वाणी गुनगुनाता है और प्रोफेसर भी। देखो, कितनी सहजता से उस देश की बात कर रहे हैं। कोटि जन्म का पथ था, गुरु पल में दिया पहुँचाय। अपने योग से अपनी कमाई से चार मुक्तियों की प्राप्ति कर सकते हैं, पर अमर लोक की नहीं, इसलिए उन्होंने सद्गुरु की बात कही। वो लोक - 'बिन सतगुरु पावे नहीं, कोई कोटिन करे उपाय।' यँ तो सगुण-निर्गुण में भी गुरु का महत्व है, पर सद्गुरु क्या करेगा -

गुरु को कीजै दण्डवत्, कोटि कोटि प्रणाम।

कीट न जाने भृंग को, गुरु करले आप समान ॥

जैसे भृंगा कीड़े को पकड़कर अपनी तरह बना लेता है, इसी तरह गुरु भी अपने समान कर लेता है। वैसे कीड़े में उड़ने की क्षमता नहीं है, पर उसके सम्पर्क में आने से उसमें क्षमता आ जाती है। इस तरह सद्गुरु नाम देकर आत्मा को चेतन कर देता है। आप याद रखना, आपमें किसी शक्ति को आहुत नहीं करना है। इस आत्मा में अद्भुत शक्तियाँ भरी पड़ी हैं, जिसमें से कुछ भी

माया कम नहीं कर सकी है। ये मन द्वारा आच्छादित हो गयी है। बस आत्मा के ऊपर आवरण आ गया। एक मणि रोशनी देती है। रोशनी तो दीपक में भी है, पर हवा के झोंके से बुझ जाता है; फिर तेल खत्म होने पर भी बुझ जाता है। मणि को तेल नहीं चाहिए। पर गोबर फेंक दें तो आच्छादित हो जाता है उसका प्रकाश। इस तरह मन-माया द्वारा आच्छादित हो गयी आत्मा। आत्मा अपने को मन-माया मानने लगी। इस मन के कारण आत्मा का ज्ञान नहीं हो रहा है। मन की प्रक्रिया मनुष्य को समझ में नहीं आ रही है। जब गुरु नाम देता है तो काम, क्रोध दिखने लगेंगे, मन की क्रियाएँ, वृत्तियाँ समझ आने लगेंगी। नाम की रोशनी से ही मन समझ आयेगा। इसलिए 'गुरु मिलने से झगड़ा खत्म हो गया।' आज आप टी.वी. पर भी अनेक तरह के प्रवचन सुनते हैं। कोई अनहद धुनों को प्रमात्मा बोल रहा है। कोई आचार संहिता बता रहा है, कोई उस ईश्वर तक जाने का मार्ग बता रहा है। पर साहिब जिस गुरु की बात कर रहे हैं, वो पूर्ण गुरु है, जिसे उन्होंने परमात्मा से भी ऊपर कह दिया। इसमें रहस्य है -

गुरु हैं बड़े गोविन्द से, मन में देख विचार।
हरि सुमिरे सो वार है, गुरु सुमिरे सो पार॥
कबीर हरि के रुठते, गुरु की शरणी जाय।
कहैं कबीर गुरु रुठते, हरि न होत सहाय॥

साहिब का संदेश समाज के लिए साफ़ था, उन्होंने इन्सानियत को जगाया, एक नया आयाम संसार को दिया। उन्होंने पाखण्ड से समाज को जगाया और कहीं 'तीन लोक से परे की बात की। तीन लोक से भिन्न पसारा, अमर लोक सद्गुरु का न्यारा।' 'तीन लोक प्रलय कराई चौथा लोक अमर है भाई॥' सबसे अनूठी बात उनकी यह लगी कि तीन लोक के संसार में रहने वाला प्रत्येक जीव काल के शिकंजे में है। उनसे पहले जितने भी ऋषि, मुनि, सिद्ध, महात्मा, विद्वान आदि आए, सबने यह कहा कि ब्रह्माण्ड का संचालन परमात्मा कर रहा है। जितने भी धर्म हैं, उनका इशारा भी निराकार परमात्मा की ओर है। पर साहिब ने सब समीकरण बदल डाले, कहा - नहीं यह संसार शैतानी ताक़त के हाथ में है। अभी तक तो यह धारणा थी कि ईश्वर द्वारा संचालित हो

रहा है संसार, पर साहिब ने कहा कि यह ब्रह्माण्ड शैतानी ताकतों के हाथ में है। 'सैयाद के काबू में हैं सब जीव विचारे।'

अब चार मुक्तियों के स्थान भी इस तीन-लोक में हैं। चाहे कोई चार मुक्तियों तक भी पहुँच जाए, तो भी काल की सीमा से बाहर नहीं निकल सकता। यह अजूबी बात है, जल्दी से आम आदमी साहिब की बात को पचा नहीं पा रहा है कि 'तीन लोक से भिन्न पसारा। अमर लोक सद्गुरु का न्यारा॥' इसका मतलब है, तीन-लोक में जो कुछ भी है, काल के दायरे में है। कालांतर में जितने भी मत मतान्तर हुए, काल-पुरुष के लिए कहा, तीन-लोक की बात कही और यह भी माना कि ये नाश को प्राप्त हो जायेंगे।

तीन लोक और अमर लोक के बीच भी आयाम हैं। बड़ी अजीब बात है। तीन लोक का राज्य निरंजन तक का है। यह शून्य स्थान है। वेद भी निराकार तक की बात कर रहा है, मुसलमान भी 'बेचूना खुदा' कह रहे हैं। कहते हैं कि हज़रत मुहम्मद साहब ने जो संदेश प्राप्त किये, पर्दा था यानि पर्दे के पीछे से संदेश प्राप्त किये। पर्दा कोई कपड़े का नहीं था, वो निराकार सत्ता का था। जितने भी धर्म हैं, निराकार की बात कर रहे हैं। ईसा मसीह भी कह रहे हैं - 'मेरा आकाशी पिता।' साहिब की वाणी में वज़न है, वे चेता कर कह रहे हैं - "ऋषि मुनि गण गन्धर्व अरू देवा। सब मिल लाग निरंजन सेवा॥" अर्थात् इस ब्रह्माण्ड में जितने भी ऋषि, मुनि बड़े-बड़े योगी आदि हुए, सबने काल निरंजन को माना, उसी की भक्ति की। लोगों के दिमाग में यह बात आई कि शायद कबीर जुलाहा था, अनपढ़ था, ऐसे ही बातें कर गया हैं। नहीं। वे कह रहे हैं -

संतों अविगत से चला आया, कोई भेद मर्म न पाया।
न हम रहले गर्भवास में, बालक होइ दिखलाया।
काशी तट सरोवर भीतर, तहाँ जुलाहा पाया।
न हमरे मात पिता हैं, न संग गृही न दासी।
नीरु के घर नाम धराये, जग में हो गई हाँसी।
आणे तकिया अंग हमारी, अजर अमर पुर डेरा।
हुक्म हैसियत से चले आए, काटन यम का फेरा॥

साहिब ने बहुत बड़ा अध्यात्म संसार को दिया; आगे चलकर कुछ तपकों ने साहिब का खण्डन किया, कहा-जुलाहा था, अनपढ़ था। यदि शिक्षा की बात है तो ध्रुव को किसने पढ़ाया! यानि भौतिक शिक्षा का कोई संबंध नहीं है इसमें। वहाँ तो आप को भुलाकर जाना पड़ता है। साहिब ने तीन-लोक की बात बेहतर की, पूरे ब्रह्माण्ड का खेल बोला, फिर आगे के लोकों की बात भी बताई। साहिब के चार दोहे और साखियों को जानकर लोग समझने लगे कि हम कबीर को जान गये।

आओ देखते हैं, क्या है काल-पुरुष; फिर चलेंगे अमर लोक की ओर। मैंने राष्ट्रपति रीगन के पी.ए. का कई बार हवाला दिया है। उसका वाक्या वर्ष का महावाक्या माना गया था; उसका कहना था - 'मुझे यूँ लग रहा है, हमारा संचालक एक शैतान है। हम सब एक शैतानी शक्ति के अधीन हैं। वो शक्ति हम सबको विनाश की तरफ ले जा रही है।' हम यथार्थ में देखें तो पता चलता भी है कि हम परम पुरुष की देख-रेख में नहीं हैं, पता चलता है कि यह संचालन परम पुरुष द्वारा नहीं हो रहा है। मनुष्य व्यभिचार कर रहा है, चोरी कर रहा है, किसी का खून कर रहा है, छल-कपट आदि कर रहा है यानि उसे सब पाप कर्म मंजूर हैं।

उसकी दण्ड व्यवस्था भी ठीक नहीं है। नरक की यंत्रणाओं के विषय में आता है कि शराब पीने वाले को उबला तेल पिलाया जाता है। क्या यह क्रूर दण्ड नहीं है। हम अपने बच्चे को यह दण्ड नहीं दे सकते, फिर सत्य पुरुष को तो दयालु कहा गया है यानि समझ में आता है कि यह दण्ड सत्य पुरुष नहीं दे रहा, कोई शैतानी ताकत दे रही है।

नरक में सात घड़े हैं। एक में विष्टा है। पाप करने वाले को उसमें फेंकते हैं। सभ्य मानव इन सजाओं को स्वीकार नहीं करेगा। सभी धर्मों में स्वर्ग-नरक का उल्लेख है और संसार के सभी लोग किसी-न-किसी धर्म को मान रहे हैं, इसलिए सभी स्वर्ग-नरक को भी मान रहे हैं। अन्तर्वाहक शरीर द्वारा हमारे कुछ पूर्वजों ने इन्हें देखा भी है। तो कहीं अग्निकुण्ड में पापी को फेंकते हैं, वो बेचारा तड़पता है। फिर रक्त कुण्ड है, उसमें फेंकते हैं। आप विचार करें कि यथार्थ में शैतानी ताकतें ही ऐसा कर सकती हैं। 'पाप करावे

आप ही, कष्ट पुनि देवे आप।' मन ही मनुष्य से पापिष्ट कर्म करवा रहा है और फिर खुद ही सज़ा भी दे रहा है, इसलिए 'जीव पड़ा बहू लूट में, नहीं कछु लेन न देन।' जीव लूट में है; उसे कुछ लेना देना नहीं है। हज़ारों साल नरक में यंत्रणाएँ दी जाती हैं। अगर किसी को काँटों पर चलाकर ले जाया जाए तो मानव हृदय कभी इस सज़ा को स्वीकार नहीं करेगा। फिर विचार करना होगा। और भी यंत्रणाएँ हैं। कहीं गिद्धों, चीलों को छोड़ देते हैं नोचने के लिए। फिर कहीं साँप, बिच्छुओं को छोड़ा जाता है। इंसान को यहाँ ऐसा कष्ट दें तो जन समुदाय मंजूर करेगा क्या! कभी नहीं करेगा। साहिब ने ऐसे ही नहीं कहा - 'सैयाद के काबू में हैं जब जीव विचारे।' यह पहला संदेश साहिब ने दिया तो विरोध हुआ। होना ही था; यह तो स्वाभाविक है। जब भी नवीन संस्कृति का सृजन होता है, पहले विरोध होता है, फिर खामोशी होती है, फिर लोग अनुकरण करते हैं। पहले कोपरनिकस ने कहा कि धरती घूम रही है तो बड़ा विरोध हुआ; उस बेचारे को तो फाँसी चढ़ा दिया गया। अब तो वैज्ञानिक कह रहे हैं कि सूर्य भी घूम रहा है, पर उसकी गति कम है। यह 2 1/2 इंच एक साल में चल रहा है। जैसे सौरमण्डल का परिवार है, ऐसे अनेक सूर्य के परिवार हैं। अब वैज्ञानिकों ने कहा तो हम मान रहे हैं। हमारे धर्म-शास्त्रों में तो लिखा है कि सूर्य अपने सफेद रथ पर सवार होकर यात्रा किये जा रहा है।

तो साहिब कह रहे हैं कि यहाँ निराकार का शासन है। जैसे सरकार है, राष्ट्रपति है, प्रधानमंत्री है, राज्य मंत्री है, तहसील आफिसर है। इस तरह से गाँव-गाँव तक पकड़ है; शासन चल रहा है। इस तरह राष्ट्रपति निरंजन है। फिर मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार हैं; फिर इन्द्रियाँ हैं, काम, क्रोध, लोभ और अहंकार हैं। इस तरह ये हुक्म पालन के लिए बैठे हैं, जो-जो मन चाहता है, वो-वो जीव से करवाते हैं। आत्मा का हुक्म चल नहीं रहा है। साहिब ने क्या खूब कहा-

चश्म दिल से दूख तू, क्या-क्या तमाशे हो रहे

आत्म देव का कुछ नहीं चल रहा, चल ही मन का रहा है, विरोधी शक्तियों का चल रहा है। एक ने कहा कि आप मन पर ही कन्सन्ट्रेट हैं। मैंने कहा-इस शरीर में है ही मन, आत्मा और माया। आत्मा का बैरी यदि कोई है

तो यह मन ही है, और कोई शत्रु नहीं है आपका, इसलिए मन पर ही कन्सन्ट्रेट हूँ। तो मन कहता है, चोरी कर, आत्मा चल पड़ती है; पर मन को कोई देख नहीं पा रहा है। इसके आदेश जारी होते रहते हैं। आत्मा को पता नहीं चलता कि क्या कर रहा है वो इसलिए साहिब कह रहे हैं – ‘काया गढ़ जीतो रे भाई, तेरो काल अवध टर जाई।’

आदमी अपने स्वभाव को भी नहीं जान पा रहा है कि क्यों है उसका ऐसा स्वभाव। उसका स्वभाव बदल रहा है, विविध प्रकार के चिंतन वो कर रहा है। मन तरंग है, कभी हँसने का मूड है, कभी रोने का। आखिर शरीर में क्या हो रहा है! ‘संतो घर में झगड़ा भारी....।’

‘जस नट मरकट को दुख देई, नाना नाच नचावन लेई।’ मन आत्मा को नाच नचा रहा है। हम एक बात कह रहे हैं कि मुक्ति चाहिए, पर किसकी; आदमी को अपना होश ही नहीं है। एक लड़की ने फोन पर कहा कि मेरा हृदय उचाट-सा है, कारण पता नहीं चल रहा है, कोई वज़ह नज़र नहीं आ रही है। मैंने कहा – बेटे! वहाँ तक नहीं पहुँच पाओगे, मैं बताता हूँ।

मनुष्य के अन्तःकरण में आठ कोने हैं, आठ पत्ते हैं, उनके बीच मन है। मन उन आठों पर घूमता रहता है। उत्तर दल पर जब मन जाता है तो भक्ति भाव, परमार्थ, दया की भावनाएँ आयेंगी। उसे पता नहीं है, पर वो पौना घण्टा शांत रहेगा। जब मन दक्षिण दल पर जाता है तो गुस्सा ही गुस्सा आयेगा। आप कभी-कभी कहते हैं कि आज मूड ठीक नहीं, खामखाह भी लड़ने लग जाते हैं पता नहीं चलता; बहुत क्रोध आयेगा। जिस पर झगड़ा नहीं किया जा सकता, उस पर भी करेगा, बाद में कहेगा कि मूड ठीक नहीं था उस वक्त। कभी मन पौन घण्टे से ज़्यादा भी बैठ जाता है। पश्चिम दल पर बैठेगा तो दिल में विषय-विकार उत्पन्न होंगे, आप चिंतन किये जायेंगे। इस तरह मन हरेक पर सवार है। ‘जो मन पर असवार है, ऐसा बिरला कोय।’ तो इस तरह पूर्व दल पर बैठेगा तो हँसी मज़ाक करोगे। हँसी वाली बात न होगी तो भी हँसी आयेगी यानि आपको खुश रखा जाता है, आपको दुखी रखा जाता है, पूरी-पूरी हुकूमत चल रही है। वो चाहे तो आप खुश हो जाते है; वो चाबी घुमाता है दुख की तो दुखी। तो वायु दल पर

बैठेगा, लोभ उत्पन्न करेगा। अग्नि दल कोण पर बैठेगा तो ईर्ष्या उत्पन्न होगी, दूसरे की बुराइयाँ बोलते रहोगे। किसी को देखकर बोलते हैं कि कहीं पागल तो नहीं हो गया। नहीं। उसका क्रसूर नहीं है, जो चाबी घुमायी गयी मन द्वारा, उसी का परिमाण है। तो नैऋत दल कोण पर बैठेगा तो वैराग्य उत्पन्न होगा। उस लड़की को कहा-बेटे! वो वहाँ बैठा है। इस तरह ईशान दल पर बैठेगा तो अहंकार उत्पन्न होगा, उतनी देर घमण्ड में रहेगा। इस विधि से मन मनुष्य से कर्म करवाए जा रहा है। क्यों? क्योंकि उसे चौरासी में फेंकना है, इसलिए शर्तिया पाप करवाने ही हैं। जो हर समय गुस्से में रहता है, उसका मन वहीं बैठे रहता है। इस तरह से सबको जकड़ा हुआ है; कोई इससे बचकर भाग भी नहीं सकता। 'दसों दिशा में लागी आग, कहै कबीर कहाँ जइयो भाग।' आठों दल पर मन नाचता रहता है; जहाँ-जहाँ जाएगा, मनुष्य वैसा-वैसा ही करता जाएगा। 'अष्ट दल कमल पर धाए, नाना नाच नचाए।' इसलिए सबका स्वभाव बदलता रहता है। कभी कहते भी हैं कि कुछ देर पहले तो ठीक था, अब अचानक पता नहीं क्या हो गया है। इसे केवल संत ही पकड़ सकते हैं। वासुदेव ने जब अर्जुन से मन को पकड़ने को कहा, उसका निग्रह करने का कहा तो अर्जुन ने कहा कि कुछ भी करने को कहो, प्रयास करूँगा, वायु की गठान नहीं बाँधी जा सकती; यदि कहो तो वो भी करूँगा; समुद्र का मंथन करना दुष्कर है, तो भी प्रयास करूँगा, पर मन का निग्रह करने के लिए मत कहो; यह नहीं कर पाऊँगा। साहिब कह रहे हैं - 'तेरा बैरी कोई नहीं, तेरा बैरी मन।' यह मन आत्म-देव को परेशान कर रहा है, हुकूमत इसी मन की चल रही है।

मन ही आहे काल कराला, जीव नचाए करे बेहाला ॥

जीव के संग मन काल रहाई, अज्ञानी नर जानत नाही ॥

यह आत्मा को बेहद पीड़ा दे रहा है। यह परम-पुरुष का पाँचवाँ पुत्र है, इसने तपस्या करके तीन-लोक का राज्य प्राप्त किया है। कभी-कभी भयंकर तबाही से घबराकर आप कहते हैं, हे प्रभु! रक्षा करो। इतने बड़े-बड़े विनाश संसार में हो रहे हैं। अब तर्क उठता है कि परमात्मा बचा क्यों नहीं रहा है। यानि वो खुद चाहता है। साफ़-साफ़ पता चलता है कि क्रूर ताकत ही इस संसार का संचालन कर रही है।

संसार में ज्यादा-से-ज्यादा क्या मिलता है- चार मुक्तियाँ। कहीं पितर लोक, कहीं वैकुण्ठ, कहीं ब्रह्म लोक, कहीं निराकार यानि निरंजन लोक, लेकिन - '.....फिरके डार दे भूमाहिं।' पुनर्जन्म होगा। इस प्रकार अनादिकाल से आत्मा काल के दायरे में है। कोई आत्म जान नहीं पा रहा है। 'जो रक्षक तहं चीहन्त नाहीं, जो भक्षक तहं ध्यान लगाहीं।' यह केवल सांसारिक लोगों की कहानी नहीं है। साहिब कह रहे हैं- 'ब्रह्मदि शिव सनकादि सब काल के गुण गावहीं।'।

देखते हैं कि साहिब कहाँ की बात कर रहे हैं। ध्यान दें, वे कह रहे हैं-

चल हंसा सतलोक, छोड़ो यह संसारा।

तीन लोक काल है राजा, कर्म का जाल पसारा ॥

चौरासी से बचने का सूत्र है। सब जगह जाने का सूत्र है। नरक का रास्ता पाप है, स्वर्ग का रास्ता शुभ कर्म है, ब्रह्म लोक या निरंजन लोक का रास्ता पाँच शब्दों की पंच मुद्राएँ हैं। इस तरह अमर लोक का रास्ता भी है। इस जग में जितने भी जीव हैं, काल की सीमा के अन्दर हैं। काल की वृत्ति ही क्रूर है, वो कष्ट ही देता रहेगा। यहाँ सुख ढूँढ़ना बेवकूफी है। आज तक किसी भी महापुरुष की वाणी से एक चीज़ पता नहीं चली कि यहाँ कोई सुखी है। साहिब तो कह रहे हैं -

तन धरि सुखिया कोई न देखा, जो देखा सो दुखिया।

उदय अस्त की बात कहत हो, सबका किया विवेका ॥

कह रहे हैं, किसी भी शरीर धारी की सुखी नहीं देखा, जिसे देखता हूँ, दुखी ही नज़र आता है। जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त सब दुखी ही दिखाई देते हैं। वास्तव में यह शरीर मिला ही दण्ड के लिए है।

बाटे बाट सब कोई दुखिया, का गिरही का बैरागी।

सुखाचार्य दुख ही के कारण, गर्भहि माया त्यागी ॥

चाहे कोई गृहस्थ हो या सन्यासी, दुखों से नहीं छूट सकता। संसार के दुखों को समझकर ही तो शुकदेव ने गर्भ में ही माया का त्याग कर दिया था। वो तो बाहर ही नहीं आना चाहता था; साढ़े सात साल का होकर बाहर आया था और वो भी देवताओं द्वारा बहुत विनती करने पर। तो कह रहे हैं-

योगी दुखिया जंगम दुखिया, तपसी को दुख दूना ।

आशा तृष्णा सब घट व्याप्त, कोई महल न सूना ॥

योगी लोग भी दुखी है, जो योगादि करके अष्ट सिद्धियों के मालिक बने हुए हैं। जंगम भी दुखी हैं, जो मोह से बचने के लिए एक स्थान पर टिक कर नहीं रहते। फिर उन तपस्वियों को तो दो गुणा दुख है जो अनेक कष्टों को सहकर तपस्या में लगे हुए हैं। साहिब कह रहे हैं कि आशा-तृष्णा सबको अन्दर से संताप दे रही हैं, जिसके कारण सभी दुखी हैं।

यह तो सच है, पर साहिब कहते हैं कि मेरी बातों को सुनकर लोग मेरे ऊपर खींझते हैं, क्रोध करते हैं, लेकिन मैं तो कहता हूँ कि मुझसे झूठी बात नहीं कही जायेगी और सच तो यह है कि जिसने इस संसार की रचना की है, वो खुद भी दुखी है।

साँच कहों तो सब जग खीझै, झूठ कहा न जाई ।

कहैं कबीर वो भी दुखिया, जिन्ह यह राह चलाई ॥

इस दुनिया में जितने भी ऋषि-मुनि आए, सबने इसे दुखों का घर बोला और नाशवान् कहा। भाइयो! यह जेलखाना है। यह दुनिया की बहुत बड़ी जेल है। आओ, बताता हूँ, कैसी जेल है। जैसे एक वन विहार है, वो भी कैदखाना है। फिर एक चिड़ियाघर है। वन-विहार में बड़े-बड़े जंगल हैं, उनमें रहने वाले पशु स्वाभाविक जीवन जी रहे हैं, उन्हें लगता है कि वे आजाद हैं। नहीं! अन्तर यह है कि चिड़ियाघर में एक कमरे में कैद हैं, पर वन-विहार में बड़े-बड़े जंगलों में कैद हैं। निकल कहीं से भी नहीं सकते, बस, दायरा छोटा बड़ा है। इस तरह तीन-लोक का दायरा है, जिसके अन्दर रहने वाला प्रत्येक जीव बंधन में है। तीन लोक में जो भी है, पक्का काल के दायरे में है। इस आत्मा को काल किसी भी कीमत पर निकलने नहीं दे रहा है। वहाँ अरण्य में झरने भी हैं, शेर के लिए हिरण भी रख रखे हैं, पर सब कैद हैं। ऐसे ही हम समझ रहे हैं कि आजाद हैं। साधारण आदमी समझ रहा है कि दिल्ली जा रहा हूँ, कलकत्ता जा रहा हूँ, मुम्बई जा रहा हूँ आजाद हूँ। साधक समझ रहे हैं कि स्वर्ग जा रहे हैं, ब्रह्म-लोक जा रहे हैं, शिव-लोक जा रहे हैं आजाद हैं। नहीं! कोई आजाद नहीं है। साहिब कह रहे हैं - 'तीन लोक में सबही अटके। खरे सयाने सबही भटके ॥' उन्होंने बड़ा सुन्दर कहा -

तीन लोक में काल है, चौथा नाम निर्वाण ।

जो यह भेद न जानइ, सो नर वृषभ समान ॥

सबकी मान्यता बन गयी कि यही निराकार रक्षक है । पर साहिब ने कहा कि कोई भी सुरक्षित नहीं है । साहिब ने तीन लोक से न्यारे देश की बात की, कहा- उसे केवल संतजन ही जानते हैं । शरीर के समस्त चक्रों की बात करते हुए सभी मुकामों का उल्लेख भी करते हुए कैसे पहुँच सकते हैं, वो भी कह रहे हैं -

जगर मगर एक नगर अग्र की डोरि है ।

बूझो सन्त सुजान शब्द घनघोर है ॥

कहू नग्र की डोरि तो सूक्ष्म झीन है ।

सुरति निरति से जाय सोई परवीन है ॥

मूल द्वार को तार लगा सुर भीतरे ।

इन्द्री नाल की जोर मिला गुण तीसरे ॥

नाभि कमल की शक्ति मिलावै आनि के ।

तीन तार करि एक अगम घर जानिके ॥

हृदय कमल की नाल तार से जोरिये ।

योग युक्ति से साधि भववासा तोरिये ॥

कण्ठ कमल की नाल तो स्वर में आनिये ।

पाँच औ सात मिलाय ऊपर को तानिये ॥

बंकनाल दुई राह एक सम राखिये ।

चढ़ो सुषमना घाट, अमीरस चाखिये ॥

रूप नाल की डोरि निरंजन बास है ।

सुरति रहै बिलम्हाय मिलावत श्वाँस है ॥

ता ऊपर आकाश बहुत परकाश है ।

ता में चार मुकाम लखै सो दास है ॥

त्रिकुटी महल में आव जहाँ ओंकार है ।

आगे मारग कठिन सो अगम अपार है ॥

तहाँ अनहद की घोर होत झनकार है ।
 लागि रहे सिद्ध साधु न पावत पार हैं ।
 सोह सुमिरन होय सो दक्षिण कोन है ।
 तहवाँ सुरति लगाय रहै उनमौन है ।
 पश्चिम अक्षर एक सो ररंकार है ।
 यह ब्रह्माण्ड का ख्याल सो अगम अपार है ॥
 धर्मराय को राज मध्य अस्थान है ।
 तीन लोक भरपूर निरंजन ज्ञान है ॥
 ता ऊपर आकाश अमी का कूप है ।
 अनंत भानु प्रकाश सो नगर अनूप है ॥
 तामे अक्षर एक सो सबका मूल है ।
 कहों सुक्ष्म गति होय विदेही फूल है ॥
 निःअक्षर का भेद हंस कोई पाइ हैं ।
 कहैं कबीर सो हंसा जाय समाइ हैं ॥

एक बात आई कि वो देश निराला है । कई जगहों पर साहिब ने वर्णन किया है कि वो तीन लोक से परे है । आज तक आपने तीन-लोक से न्यारी बात नहीं सुनी होगी । साहिब ने तीन-लोक से न्यारी बात कही है ।

संतो! सो निज देश हमारा ।

जहाँ जाय फिर हंस न आवै, भवसागर की धारा ।
 सूर्य चन्द्र तहाँ नहीं प्रकाशत, नहीं नभ मण्डल तारा ।
 उदय न अस्त दिवस नहिं रजनी, बिना ज्योति उजियारा ।
 पाँच तत्व गुण तीन तहाँ नहिं, नहिं तहाँ सृष्टि पसारा ।
 तहाँ न माया कृत प्रपंच यह, लोग कुटुम परिवारा ।
 क्षुधा तृषा नहिं शीत उष्ण तहाँ, सुख दुख को संचारा ।
 आधिन व्याधि उपाधि कछू तहाँ, पाप पुण्य विस्तारा ।
 ऊँच नीच कुल की मर्यादा, आश्रम वरण विचारा ।
 धर्म अधर्म तहाँ कछू नाहीं, संयम नियम अचारा ।

अति अभिराम धाम सर्वोपरि, शोभा अगम अपारा।

कहँहि कबीर सुनो भाई साधो, तीन लोक से न्यारा॥

वहाँ सूर्य, चाँद और तारों का प्रकाश नहीं है, इसलिए दिन-रात का खेल भी नहीं है। वहाँ बिना ज्योति के हर समय प्रकाश रहता है। वहाँ जन्म-मरण नहीं, वहाँ पाँच तत्व भी नहीं हैं। याद रहे, जहाँ भी पाँच तत्व हैं, वहाँ प्रलय है। तत्व ही तत्व के विनाशक हैं, इसलिए नहीं हैं। फिर भूख-प्यास, सर्दी-गर्मी, सुख-दुख भी नहीं है और पाप पुण्य का जाल भी नहीं है। न कोई वहाँ बड़ा है, न छोटा; वो सबसे सुंदर और प्यारा देश है, जिसकी शोभा असीम है, अथाह है; वो इस तीन लोक से न्यारा देश है।

दुनिया के लोग परमात्मा की खोज भी बड़े निराले तरीके से कर रहे हैं, इसलिए वे समझा रहे हैं -

संतो मूल भेद कुछ न्यारा, कोई बिरला जानन हारा।
मूल रहस्य तो कुछ और ही है और उसे कोई बिरला ही जानता है।
मूड़ मुड़ाय भयो कह धारे, जटा जूट शिर मारा।
कहा भयो पशुसम नग्न फिरै बन, अंग लगाये छारा।
कहा भयो कन्द मूल फल खाये, वायु किये आहारा।
शीत उष्ण जल क्षुधा तृषा सहि, तन जीवन करि डारा।
सांप छोड़ि बांवी को कूटे, अचरज खेल पसारा।
धोबी के बस चले नहीं कछु, गदहा काह बिगारा।
योगी यज्ञ जप तप संयम व्रत, किया कर्म विस्तारा।
तीरथ मूरति सेवा पूजा, ये उरले व्यवहारा।
हरि हर ब्रह्मा खोजत हारे, धरि धरि जग अवतारा।
पोथी पाना में क्या ढूँढ़े, वेद नेति कह हारा।
बिन गुरु भक्ति भेद नहि पावे, भरमि मरे संसारा।
कहँहि कबीर सुनो भाई साधो, मानो कहा हमारा॥

यदि जटाएँ बढ़ा लेने से मिलता तो भालुओं के तो बाल ही बाल हैं, उन्हें मिल जाना था, पर नहीं - 'मूल भेद कुछ न्यारा।' कुछ पवन का आहार करके

जीवित रहते हैं। रहा जा सकता है। सर्प शीतकाल में धरती के अन्दर निवास कर लेता है। हमारा तापमान 98.4 रहता है, पर उसका बाहरी वातावरण के आधार पर बदलता रहता है। तो सर्दी में उसका शरीर अकड़ जाता है, वो चल नहीं पाता। वो चलता भी वक्र है, इसलिए वो सर्दी में अन्दर चला जाता है। फिर वहाँ खाता क्या है? हवा। दुनिया में कुछ सिद्ध हवा का सेवन करते हैं। इससे भी कल्याण नहीं होगा। फिर कुछ नंगे रहकर धूप में रहते हैं, कुछ ठण्ड में रहते हैं यानि शरीर को कष्ट देते हैं। यदि ऐसे में परमात्मा मिल सकता तो गरीबों को सबसे पहले मिलना था। तो कुछ खाना छोड़ देते हैं। इससे भी कुछ अन्तर नहीं पड़ने वाला, क्योंकि 'मूल भेद कुछ न्यारा।' यह सब तीन-लोक के अन्दर का व्यवहार है। 'हरिहर ब्रह्मा खोजत हारे।' ध्यान दें, क्या कह रहे हैं। वे झूठे नहीं थे; कह रहे हैं, हार गये।

तो बार-बार घूम कर कह रहे हैं कि मेरी बात मानो, वो तीन-लोक से न्यारा है। वहाँ काल नहीं, पंच तत्व नहीं, सगुण-निर्गुण भी नहीं। अभी तक तो सगुण-निर्गुण का खेल सुना था, पर दादू दयाल भी कह रहे हैं -

कोई सगुण में रीझ रहा, कोई निर्गुण ठहराय।

अटपट चाल कबीर की, मोसे कही न जाय॥

दोनों से परे कहा, साहिब ने।

साकार कहूँ तो माया माहिं, निराकार कछु आया नाहीं।

है जैसा तैसा रहे, कहैं कबीर विचार॥

कुछ उनकी वाणियाँ निराला कह रही हैं। चिंतन करना होगा। कुछ कहते हैं कि वे रहस्यवादी थे। नहीं, सत्यवादी थे। कह रहे हैं - 'वेद कितेब पार नहीं पावत, कहन सुनन से न्यारा है।' कुछ देर बाद साहिब की शिक्षा सिद्धांत रूप से चलेगी, लोग स्वीकार करेंगे। कह रहे हैं कि उस तत्व को मनुष्य नहीं समझ पाया।

कोई कहे हलका कोई कहे भारी, सब जग भर्म भुलाया है।

ब्रह्मा विष्णु महेश्वर हारे, कोई पार न पाया है।

शारद, शेष, सुरेश, गणेशहुँ वेदहुँ मन सकुचाया है।

द्विदल, चतुर, षट, अष्ट, द्वादश, सहस्र कमल बिच काया है।

ताके ऊपर आप बिराजै, अद्भुत रूप धराया है।
 है तिल के झिलमिल तिल भीतर, ता तिल बीच छिपाया है।
 तिनका आड़ पहाड़ सी भासै, परमपुरुष की छाया है।
 अनहद की धुन भँवरगुफा में, अति घनघोर मचाया है।
 बाजे बजें अनेक भाँति के, सुनि के मन ललचाया है।
 पुरुष अनामी सबका स्वामी, रचि निज पिण्ड समाया है।
 ताकी नक़ल देखि माया ने, यह ब्रह्माण्ड बनाया है।
 यह सब काल जाल को फन्दा, मन कल्पित ठहराया है।
 कहहिं सत्यपद सद्गुरु, न्यारा करि दर्शाया है॥

अभी तक विज्ञान को जितना मालूम है, उतना हम मान रहे हैं। जैसा कि पहले भी कहा कि पुराणों में पहले ही कहा है कि सूर्य नारायण चल रहा है, सफ़ेद घोड़ों का रथ लेकर सूर्य नारायण यात्रा कर रहा है। हम विज्ञान द्वारा अब मान रहे हैं। इस तरह साहिब ने तीन लोक के आगे कहा। इस तीन लोक और अमरलोक के बीच में भी कई लोक हैं। आओ, उनपर बात करते हैं।

इस तीन लोक के ऊपर जाने पर अचिन्त लोक है .. बहुत दूरी पर। कम्प्यूटर में यह गणना नहीं है। साहिब की गणना भी बड़ी जबरदस्त है। वैज्ञानिक प्रकाशवर्ष में गिन रहे हैं, साहिब ने योजन में बताया। एक जन्म नहीं, अगर अरबों भी अपोलो-11 चले, पारपाइण्डर चले, तो भी नहीं पहुँच पायेगा। तो कैसे जाएँ? भाइयो! आपकी आत्मा एक सैकेण्ड में अरबों मील चलती है। आपकी आत्मा में इतना वेग है। इसका उल्लेख वासुदेव ने किया, कहा – हे अर्जुन! इस आत्मा के हाथ नहीं, पर सभी दिशाओं से काम कर सकती है, इसकी आँखें नहीं, पर सभी दिशाओं से देख सकती है, इसकी टाँगें नहीं, पर सभी दिशाओं से चल सकती है। यह मामूली नहीं है। अपने बच्चों में आप अपने गुण देख रहे हैं, इस तरह यह आत्मा, परमात्मा की अंश है। मामूली नहीं है। मीराबाई ऐसे नहीं कह रही हैं – ‘मीरा मन मानी सुरति सैल असमानी।’ नाभा जी भी कह रहे हैं – ‘नाभा नभ खेला सुरति केल सर सैला।’ तो इस प्रकार ये रहस्य भरे पड़े हैं। यह चोला मामूली नहीं है। मोबाइल में बड़े सिस्टम हैं, चाहो तो कैमरे में चले जाओ, चाहो तो मैसिज में। लेकिन गलत बटन दबाया तो लॉक हो जाएगा। इस तन में पाप कर्मों के गलत बटन दबाकर इस

मोबाइल को लॉक कर दिया है आपने। गुरु लॉक खोलने का रहस्य बता देता है। तो फिर जब चाहो, उड़ सकते हैं, ब्रह्माण्ड की यात्रा कर सकते हैं।

तो कह रहे हैं कि शून्य से पाँच असंख्य योजन ऊपर जाने पर अचिन्त लोक है। फिर अचिन्त से तीन असंख्य योजन ऊपर जाने पर सोहंग लोक है। सोहंग से फिर पाँच असंख्य योजन ऊपर मूल सुरति लोक है। सुरति से तीन असंख्य योजन ऊपर अंकुर लोक है। अभी वैज्ञानिक नन्हें बच्चे हैं पीछे-पीछे आ रहे हैं। 30 करोड़ रुपये लगाकर इंग्लैंड में साहिब पर अनुसंधान केन्द्र खोला है। बड़े शोध कर रहे हैं। वेदों पर भी शोध चल रहा है। अगर मैं कहूँ कि उस देश की बात कर रहा हूँ तो आप जल्दी नहीं मानोगे। मैं तो वहाँ जाता रहता हूँ। साहिब भी कह रहे हैं -

मैं आया सतलोक से, फिरा गाँव की छोर।

ऐसा बंदा न मिला, जो लीजै फटक पछोर ॥

एक बार किसी का प्रवचन सुना, वो कह रहा था कि कोई पृथ्वी पर नहीं उतरता था, ये काल्पनिक चीजें हैं। नहीं! उसे ज्ञान नहीं था। आना होता है, जाना होता है। इन्द्र को एक बार वशिष्ठ मुनि ने हिलाया था; इन्द्र ने कहा - तुम कौन हो? मुझ पर तो कोई हमला नहीं कर सकता। कहा - हे इन्द्र! मैं वशिष्ठ हूँ। इन्द्र ने कहा - तुम नजर नहीं आ रहे हो। कहा - मैं अन्तर्वाहक शरीर द्वारा आया हूँ, तुम मुझे नहीं देख सकते हो, पर मैं तुम्हें देख सकता हूँ। भाइयो! छः शरीर हैं आपके शरीर में। जैसे आपके पास बड़े सूट हैं - एक बाहर जाने को, एक पार्टी के लिए, एक घर में पहनने के लिए। इस तरह बड़े शरीर हैं।

‘शिव गोरख सो पच पच हारे, काया का कोई भेद ना पाए।’

तो अंकुर लोक के आगे कह रहे हैं - इच्छा लोक; फिर उसके आगे वाणी लोक है। बहुत बड़े-बड़े क्षेत्रज हैं तीन लोक के ऊपर। सातवाँ सहज लोक है। यहाँ तक प्रलय है ‘सहज लोक तक जेतिक भाखा। सो रचना परले कर राखा ॥’ इसके आगे परम-पुरुष का लोक है। वहाँ कभी नाश नहीं है। वो अद्भुत देश है।

कोई ना रहा एक वो लोक रहेगा
 आया जो वहाँ से ख़बर उसकी कहेगा।
 जिसको वो नज़र आय फिर वो कुछ न चाहेगा।

साहिब कह रहे हैं कि वहाँ से आया है यह हंसा।

जहवाँ से हंसा आया, अमर है वा लोकवा।
 तहाँ नहीं परले की छाया, तहाँ नहीं कछु मोह और माया।
 ज्ञान ध्यान को तहाँ न लेखा, पाप पुण्य तहवाँ नहीं देखा।
 पवन न पानी पुरुष न नारी, हृद अनहृद तहं नाहिं विचारी।
 ब्रह्म न जीव न तत्त्व की छाया, नहीं तहं दस इन्द्री निरमाया।
 तहाँ नहिं ज्योति निरंजन राई, अक्षर अचिन्त तहाँ न जाई।
 काम क्रोध मद लोभ न कोई, तहंवा हर्ष शोक न होई।
 नाद बिन्द तहाँ न पानी, नहीं तहं सृष्टि चौरासी जानी।
 पिण्ड ब्रह्माण्ड को तहाँ न लेखा, लोकालोक तहंवा नहीं देखा।
 आदि पुरुष तहंवा अस्थाना, यह चरित्र एको नहीं जाना॥

वेद चारों नहिं जानत, सत्य पुरुष कहानियाँ।
 वेद को तब मूल नाहीं, अकथ कथा बखानियाँ॥

पुस्तक सूची

हिन्दी में

1. परा रहस्या
2. मासिक पत्रिका सत्यकेतु
3. पावन प्रार्थनाएँ
4. सद्गुरु चालीसा
5. वार्षिक डायरी
6. सद्गुरु भक्ति
7. कहाँ से तू आया और कहाँ तुझे जाना रे?
8. सत्संग सुधारस
9. नाम अमृत सागर
10. अमृत वाणी
11. सद्गुरु नाम जहाज़ है
12. चल हंसा सतलोक
13. कोटि नाम संसार में तिनते मुक्ति न होय
14. मूल नाम गुप्त है, जाने बिरला कोय
15. गुरु सुमिरै सो पार
16. तीन लोक से न्यारा
17. सेहत के लिए ज़रूरी
18. सहजे सहज पाइये
19. रोगों से छुटकारा
20. सद्गुरु महिमा
21. भक्ति के चोर
22. अनुरागसागर वाणी
23. भक्ति सागर
24. हरि सेवा युग चार है, गुरु सेवा पल एक
25. सत्य नाम के सुमरते उबरे पतित अनेक
26. काग पलट हंसा कर दीना
27. कस्तूरी कुण्डल बसै मृग खोजे बन माहिं
28. गुरु पारस गुरु परस है
29. गुरु अमृत की खान
30. शीश दिये जो गुरु मिले तो भी सस्ता जान
31. मूल सुरति
32. भृंग मता होय जिहि पासा, सोई गुरु सत्य धर्मदासा
33. मैं कहता हूँ आँखिन देखी
34. गुरु संजीवन नाम बतावे
35. नाम बिना नर भटक मरे
36. रोगों की पहचान
37. यह संसार काल को देशा
38. न्यारी भक्ति
39. साहिब तेरी साहिबी सब घट रही समाय
40. जाप मरे अजपा मरे अनहद भी मर जाए

41. आयुर्वेद का कमाल रोगों के निदान में
42. सुरति समानी नाम में
43. सबकी गठरी लाल है, कोई नहीं कंगाल
44. निन्दक जीवे युगन युग काम हमारा होय।
45. निराले सद्गुरु
46. कुँजड़ों की हाट में हीरे का क्या मोल
47. जीवड़ा तू तो अमर लोक का पड़ा काल बस आई हो
48. मुझे है काम 'सद्गुरु से जगत रूठे तो रूठन दे'
49. जेहि खोजत कल्पो भये घटहि माहिं सो मूर
50. आत्म ज्ञान बिना नर भटके
51. बिन सतगुरु बाँचे नहीं कोटिन करे उपाय
52. अँधी सुरति नाम बिन जानो
53. सत्यनाम निज औषधि सद्गुरु दई बताय
54. सेहत संजीवनी
55. भक्ति दान गुरु दीजिए
56. मन पर जो सवार है ऐसा ऐसा विरला कोई
57. सत्यनाम है सार बूझौ सन्त विवेक करि
58. रोग निवारक
59. मुक्ति भेद मैं कहौं विचारी
60. "तेरा बैरी कोई नहीं तेरा बैरी मन"
61. सुरति का खेल सारा है
62. सार शब्द निहअक्षर सारा
63. करूँ जगत से न्यार
64. बिन सत्संग विवेक न होई
65. सत्य नाम को जनि कर दूजा देई बहा
66. सुरत कमल सद्गुरु स्थाना
67. अब भया रे गुरु का बच्चा
68. मनहिं निरंजन सबै नचाए
69. सत्यपुरुष को जानसी तिसका सतगुरु नाम
70. आपा पौ आपहि बँध्यो
71. सत्य भक्ति का भेद न्यारा
72. जपो रे हंसा केवल नाम कबीर
73. सत्य भक्ति कोई बिरला जाना
74. जगत है रैन का सपना
75. 70 प्रलय मारग माहीं
76. सार नाम सत्यपुरुष कहाया
77. आवे न जावे मरे न जन्मे सोई सत्यपुरुष हमारा है
78. निराकार मन
79. सत्य सार
80. सुरति
81. भक्ति रहस्य
82. आत्म बोध
83. अमर लोक